कविवर श्री नयनानन्द यति विरचित-

श्री नयनसुख विलास

[दूसरा भाग]

प्राप्त कर्ता-

श्री पन्नालाल जैन, अग्रवाल-देहली

_५१५८

प्रकाशक :—

मूलचन्द किसनदास कापडिया,

दिगम्बर जैन पुस्तकालय, सूरत-१

प्रथमवार] वीर सं० २४९९ [प्रति २१००

स्व० ब्र० सीतलप्रसादजी स्मारक ग्रन्थमालाकी ओरसे 'जैनमित्र'के ७३ व ७४ वें वर्षके ग्राहकोंको भेंट

मूल्य रु. २-५०

"जैनविजय" प्रि० प्रेस, गांधीचौक-सूरतमें मूलचन्द
किसनदास कापड़ियाने मुद्रित किया।
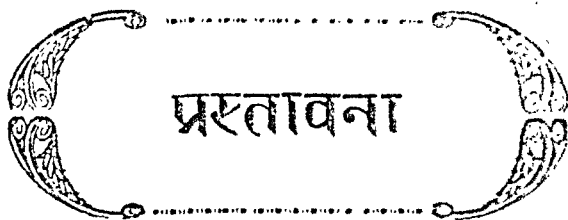
प्रस्तावना

कविश्री नयनानन्द विरचित नयनसुख विलासका यह दूसरा भाग प्रकट किया जाता है।

प्रथम भागमें २२ अध्याय थे तो इस दूसरे भागमें २२ से ३२ भाग तक १० अध्याय है।

यह आध्यात्मिक ग्रन्थ सबको स्वाध्याय करनेयोग्य है।

श्री पन्नालाल जैन अग्रवाल-देहलीने इसे प्राप्त कर हमें भेजा है अतः आप धन्यवादके पात्र हैं।

यह ग्रन्थ भी 'जैनमित्र' के ग्राहकोंको स्व० ब्र० सीतलप्रसाद स्मारक ग्रन्थमालाकी ओरसे भेंट किया जाता है।

प्रकाशक।
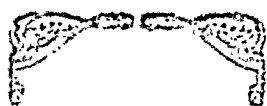
नयनसुख विलास

प्रथम भागमें

३२० पृष्ठ हैं। और मूल्य रु० ३-५० है।

यह प्रथम भाग मंगा लेना चाहिये।

श्री वीतरागाय नमः।

कविश्री नयनानन्द विरचित-

नयनसुख विलास

(भाग दूसरा)

अध्याय १३ वाँ

श्रीमन्मुनिसुव्रताय नमः।

अथ रामचन्द्र सीता लक्ष्मणजीके बनोवासका कारण, तथा सीताका हरण और लंकाकी लड़ाईका कथन रावणका मरण अजुध्यामें रामका आगमन विभीषणकूं राज सीताको बनबास लवकुशका रामसे युद्ध तथा मिलन तथा सीताकी धीरज तथा सीताका संयम और स्वर्गगमन रामका संयम और मोक्षगमन लक्ष्मणका अधोगमन इत्यादि वर्णन लिखिये है।

प्रगट हो कि इस ग्रन्थमें च्यार गुण हैं। एक व्याख्यान गुण १, दूजा युद्ध गुण २, तीजा करुणा गुण ३, चौथा वैराग्य गुण ४, च्यारोंमें व्याख्यान कथन हैं। सुन जो कोई इसकूं लिखै। अपनी कारीगरीकी टांग ना अड़ावै॥ जैसे अक्षर मात्रा जैन बनाई हैं तैसे ही लिखै। जहां कोई अक्षर मात्रा ज्यादा कमती दिख परै॥ इसकूं कम ज्यादा कर ना दे। ज्योंकी त्यों यथार्थ लिखो॥ ए सब छन्द गाने में कांटेका

तोल वजनमें तुले हुए हैं। मातें वक्त लय स्वरको घटावढ़ाकर पढ़ जानेका अख्त्यार है ॥

अथ प्रथम पीठिका लिख्यते मंगलाचरणं । चाल आल्हामल-स्वानके युद्धकी इसमें ४ धावे हैं ॥

प्रथम नमूं मैं श्री अरहन्तको, अजि मैं तो धरूं निर्ग्रंथ गुरुका ध्यान । अजी मैं तो ध्याऊंजी दयामई धर्मको, अजि जानूं पाऊंजी तुरत निर्वाणको ॥१॥

धावा पहला—अब रुचि आई जश गाऊं सिरी रामके, अरु गाऊं लछमनजीके गुण गान ॥१॥ सीता सतीके मैं तो गाऊं जश भावसे, अरु जैसा सुना मैंने राम पुरान ॥२॥ कारन बताऊं मैं तीनोंके वनोवासका, अरु ए तौ छन्द हैगा आल्हामलस्वान ॥३॥ छोड़ि दिये कथन बहुत मैंने जानके, अरु घना करूंगा लड़ाईका बयान ॥४॥ दण्डक वनमें विराजे कैसे जायके, अरु दिया जुगल मनोंको कैसे दान ॥५॥

मारा जैसे शम्बूकवर वनखण्डमें अर पड़ा जुध खरदूषणसे आन ॥६॥ कैसे बुलवाया खरदूषणने लंकासे, अरु आया कैसे वो रावण बलवान ॥७॥ कैसे गए राम लखनजीकी मददकूं, अरु कैसे रावणने देखो सीताऊन ॥८॥ हुआ जैसे मोहित निरखि कै वो ज्यानकी, अरु वाके हरनेका करूंगा बयान ॥९॥ कहूं खरदूषनके मरनेकी वारता, अरु कैसे लड़के जटायु तजे प्रान ॥१०॥ कैसे सिरीरामनें सुधारी वाकी भावना, अरु पाया कैसे वाने गुणविमान ॥११॥

कैसे रघुवीर ।बलाये वनखण्डमें, अरु कैसे हुई सुग्रीवसे पिछान ॥१२॥ कैसे दिलवाई है सुतारा ग्रीवको, अरु कैसे खबर ली सीताकी हनुमानजी । अरु किया कैसे उन सभामें बयान । मारा विट ग्रीव बलवान ॥१३॥ कैसे उपगार विसारा सिरी

रामका। अरु कैसे ल्यायके मिलाया हनुमान॥१४॥ ल्याए कैसे खबर सीताकी हनुमानजी, अरु किया कैसे उन सभामें बयान॥१५॥

कैसे पूछा रामने बतायो लंका है कहां। अरु गए सूक कैसे उनके पिरान॥१६॥ कैसे किया उजर सभाने सिरी रामसे। अरु ऐसे पडी है फिकरमें उनकी जान॥१७॥ कैसे हरा फिकर उनोंका लछमन वीरने, अरु बाईस कोटि शिलाको कैसे तान॥१८॥ आठवा नरायन लखनजीकूं जानके। अरु कैसे पडे चरनूंमें जोधा आन॥१९॥ कैसे करी रामने चढाई गढ लंकपे, अरु कैसे झोकी है समुन्दरमें जान॥२०॥ कैसे पडे कूंदवे जोधाजी जलके बीचमें, अरु कैसे गए वे भैयाजी तिरमर्दान॥२१॥

दम दूजा—कैसे बन्दोबस तरावन ने करै, भैया गढ लंकके। अरु कैसे घेरा है जमी अर असमान, कैसे कैसे बिकट लगाए थाने माडवै। अरु थापेगा छस नूत बलवान॥२२॥

धावा दूजा—कैसी कैसी पडी हैं लडाई सिरी रामकी। अरु कैसे मचे हैं जोधूंके घमसान॥२३॥ कैसी कैसी मोहनी कटी हैं रण भूमिमें। अरु कैसे खूनोंमें तिरे हैं मरदान॥२४॥ कैसे भेजी खबर सीताको सिरी रामने अरु कही कैसे हम पहुंचे हैंगे आन॥२५॥ कैसे हनुमानने लगाई खबरें जायके, अरु कैसे रामकी दई है सहनान॥२६॥

कैसे दई धीरज सीताको हमने बागमें, अरु बागे कैसे करवाया जल पान॥२७॥ कैसे गई बिगड रावणसे हनुमानकी, अरु कर दिये है मरलोंके मैदान॥२८॥ जान बचाई बाने कैसे गढ लंकमें अरु आना रामपे वो कैसे

मर्दान ॥२९॥ कैसे गया बिगड़ बिभीषण अपने वीरसे। अरु कैसे पड़ा है रघुके चरणोंमें आन ॥३०॥

कैसे वरदान दिया है रघुवीरने अरु आवो लंकापति तुम हो मेरे प्राण ॥१॥ कैसे धरा हाथ बिभीषणके शीसपे। अरु हुवा कैसा वो खुशी बलवान ॥२॥ कैसे भारी भारत मचाए वाने जुद्धमें। अरु कैसे कुंभकरण भिड़ा आन ॥३॥ कैसे लंकेश चढ़ा है लछमन वीरपे, अरु कैसे करे हैं दोनूं ने घमसान ॥४॥ कैसे लछमनजीके शक्ति लागी जुद्धमें। अरु कैसी मारी है रावनने धरके तान ॥५॥

कैसे लछमणजीको आई रणमें मूरछा। अरु कैसे पड़ा है वो मृतक समान ॥६॥ कैसे भर आई आंसू सिरी रघुवीरकी, अरु कैसे पांच पहरका मांगा दान ॥७॥ कैसे करी माफ लड़ाई लंकेशने। अरु राखी छतरी धरमकी कैसे तान ॥८॥ कैसे जानी शक्तिके निवारणोंकी वारता, अरु कैसे ल्याए हैं विशल्या हनुमान ॥९॥ कैसे वाने छिड़का है जल अपने कंतपे। अरु कैसे शक्ति गई भग असमान ॥१०॥ कैसे उठा सिर साभ सबके वो तो सूरमा। अरु कह्या कहां है रावन काहूं जान ॥११॥ कहां गया चोर लहुका है कहां जायके। अरु कैसे आगए सुनत सबके प्राण ॥१२॥

दमतीजा—कैसे भिजवाई खबर प्रभात ही। अरु कैसे कहा महारा हो चुकाकरार कर कैसे रामने बुलाया रावण जुद्धकूं अजि मैं तो कहूंगा अगाड़ी सारा विस्तार ॥१॥

धावातीजा—कैसे कैसे रावणने लाखूं सिर कर लिए। अरु कैसे लई हैं लाखों ही भुजाधार ॥२॥ कैसे आया उमंगके लछमन वीरपे। अरु कैसे कैसे ल्याया लाखूं हथियार ॥३॥ कैसे मारे भनन भनन धनु जुद्धमें। अरु

कैसे फनन फनन तोडे हार।४। कैसे मारे राम लखन धनु तानके। अरु कैसे गए हैं निकसवाके पार॥५।

कैसे कट गई हैं करोडूं भुजा जुद्धमें, अरु कैसे कटे वाके सीस अपार॥६॥ कैसी कैसी छवी है झुंझल उसके जीवमें। अरु मानूं गेरेगा लखनजीकूं मार।७। कैसे डटि रहा है लखन उसके सामने। अरु लिया रावनने चकर संभार।८। कैसे कैसे मारे हैं लखनजीपे तानके। अरु कैसे हट हट गया हर बार॥९। कैसे मारा सात दफेजी उसने तानके। अरु कैसे गए वाके खाली सातोंबार॥१०॥

कैसे आया चकर लखनजीके हाथमें, अरु कैसे करी है देवोंने जै जैकार॥११॥ कैसे आया काल रावणके सिरपे घुमंडिके, अरु कैसे रहा है हठीला शेखीमार॥१२॥ दूंगा नहीं सीताको मैं जीता खेतमें, अरु मारे क्यों ना मेरे चकर कुम्हार॥१३॥ कैसे हठ चढी उसे करम सजोगसे, अरु भाई करमोंसे सब हैं लाचार॥१४॥ कहा लछमनजीने हो जाऊं शयारव, अरु फिर किया उसने उसपे प्रहार॥१५॥

घरर घरर कैसे मची तीनों लोकमें। अरु कैसे हो गये करर देसी पार॥१६। कैसे धर दिये वाने सारे सिर तोडके अरु कैसे गया तीजे नरक मंझार॥१७॥ कैसे बजी आठवें नारायणकी दुंदभी। अरु कैसे घुस गए लंकामें जुझार॥१८॥ कैसे फिरी रामकी दुहाई गढ लंकामें, अरु कैसे मची है लंकामें हाहाकार॥१९॥

दम चौथा—कैसे अभै दान दिया है सिरी रघुवीरने, अरु कैसे रणकूं सुधाया है ववकार॥१॥ किस विध सीतासे मिले हैं वे श्रीरामजी, अरु किस किसने तजा है मैयाजी ये संसार॥२॥

गाथा चौथा—कौन कौन मुक्त पधारे संजम धारके, और माई कौन कौन हुए अहाकार ॥३॥ कब लग रहे हैं लंकामें सिरीरामजी, अर किया किसे लंकाका सिरदार ॥४॥ कैसे तिर खंडके नृपति चरनों आ पड़े, अर हुए कबसी अजुध्याको संवार ॥५॥

कैसे कैसे ठाठ जुड़े हैं उनके पुन्यसे, अरु मैं तो कर दूंगा सारे इजहार ॥६॥ कैसे मिले माता अरु भरतसे आनके, अरु कैसे मिले शत्रुघनकुमार ॥७॥ कैसे भया राजतिलक लख भी सको, अरु कैसे गया है विभीषण छतर धार ॥८॥ किस विध दोष लगा है सीता मातको, अरु कैसे दई उसे रामने बिसार ॥९॥ किसने उसकी जान बचाई अपने देशमें, अरु कैसे भए लव अंकुशकुमार ॥१०॥

कैसे सिरीरामपै चढे हैं वे लौकोपके, अरु कैसे पिताका दिया है मदझार ॥११॥ कैसे फिर मिलन हुआ है सिरीरामका, अरु दोनू, वेढोसे अजुध्याके मंझार ॥१२॥ कैसे फिर ल्याए हैं सीताको जोधा मानसे, अरु कैसे ठैराआसे धीजका करार ॥१३॥ कैसे दई सीताने परीछा अपने शीलकी। अरु कैसे कून्दी वो तो अगनमंझार, ॥१४। कैसे खिल गये हैं कंवल जल चढ़ गये। अरु कैसे देवोंने करी है जै-जैकार, कैसे तप करके भई है जय जयकार ॥१५॥

कैसे सिरीरामने लगानी चाही कण्ठसे, अर कैसे लिया-वाने झांसी संजमधार ॥१६॥ कैसे तप करके भई है अच्युतेंद्र वो, अरु गए कैसी गति लखनकुमार ॥१७॥ कैसी विध रामने लिया है संजम भावसे, अरु कैसे गए वे तो मुकत मंझार ॥१८॥ नई नई बंदिश बनाई मैंने जोडके, अरु मैंने पढे हैं हरफ दो चार ॥१८॥ कांधला नगरका निवासी मुझे जानियों,

अरु मेरा नाम है नयनसुख सार ॥१९॥ भूधरदास जनीका शिख जानियों, अरु मैंने लिया है जैन मतधार ॥२०॥

रचा मुनशीलालके हितारथ प्रबन्ध यह, अरु कही चालबाकी रुचि अनुसार ॥२१॥ मंडण शभाका है विहंडण है सोगका, अरु याके तुंग है भैयाजी पूरे चार ॥२२॥ पहला वनोवासमें द्वितीय कह्या जुद्धमें, अरु कह्या तीसरेमें अग्नि विचार. चौथा वैराग समझ लीज्यों चित्तमें, अरु जाने सुनेसे होवेंगे बेडे पार ॥२३॥ धरमका कारण निवारण है पापका, अरु मत जानियों, आल्हाकी झूठी राड ॥२४॥ सतियोंके सुजस चरित्र सिरीरामका, अजि इसे सुनियों सकल नरनार ॥२५॥

इति श्री रामारावणके महा भारथकी भूमिका, अथ वनो वासनामा प्रथम तुंग लिख्यते, इसमें १७ धावे अरु ४२ चौपाई और ७ ठुमरी और ४ दोहे हैं भूमिका समेतके कुल लंबर २५ हैं ॥ दम पांचवां ॥

वन्दूँ मैं ऋषभ जिनेन्द्रकूं, अजि जिनका वंश इक्ष्वाकु सनात, अजिवो तो सूरजराजाके परतापसे, अरु वो तो भया सूरज वंश विख्यात ॥१॥ अरे भैया ताही में भए हैं श्री रघुनाथजी, अजि वे तो भए रघुवंशी राजकुमार, अजि जिनकी सरवर नहिं तीनों लोकमें अजि वे तो भए शिवगामी अवतार ॥२॥ अजि जिनके लछमनजीसे भैया सुखधरा, अजि जिनके जनक सुतासी भई बरनार, अजि जिनके भए लव अंकुश दोनू सुतबली, अजि मैं तो गाऊं उनके सुजस अपार ॥३॥

धावा पांचवां—राजा अनरण्य अजुध्याके धनी भए, अरु सिरीरामजीके दादाजी महान ॥४॥ तिनके सुपुत्र राजाजी दशरथ भए, सठ भए मानूं दूजे सूरज समान ॥५॥ एक समें

मैं राजा जशरथ बावसे अरु दिया केकईरानीकूं वरदान ॥६॥ सुन मेरी प्यारी तेनें हांका रथ जुद्धमें, अरु मैं तो वारूं तुज पर प्यारी प्रान ॥७॥ तेरी चतुराईने बचाई मेरी ज्यानरह, अरु मैं तो मारे दुशमन बलवान ॥८॥ मांग ले प्यारी जो तू मांगे सो अदा करूं, अरु तेरा करूंगा बहुत बड़ा मान ॥९॥ जो बर मांगेगीह दूँगा नहिं देनसे, अरु तेरा मानूंगा हमेशां अहसान ॥१०॥ हम तो हैं छत्री पैदा हुए सूरज वंशमें, अरु हैगी म्हारे कुलकी तो एही वान ॥११॥ जिसे वर देवें कर देवें पूरा तुरत ही, अरु म्हारे बचन टलें तो सो दें ज्यान ॥१२॥ बचनोंसे धारे हैं प्रतिज्ञा पालें धर्मकूं, अरु ध्यावे बचनोंसे सिरीभगवान ॥१३॥ बचनोंसे प्यारी उपदेसे जिन धर्मकूं, अरु म्हारे बचन टलनकी है आन ॥१४॥ शके मत प्यारी तू वचन मेरा मानले, अरु जो तू कहेगी करूँगा प्रमाण ॥१५॥

तेरा उपरगार विसारूं तो मैं सुन्दरी । अर मुझे कहियो मत छत्रा मर्दान ॥१६॥ कहियो बकवादी कोई वादी साथा बावरा । अरु मुजै अधम पुरुष लीज्यो जान ॥१७॥ करूंगा प्रतिज्ञा पूरी जीमें हो सो मांगले । अरु मेरेते बीचमें हेंगे श्री भगवान ॥१८ ॥

छन्न छठा—भावीने भलोए राजा जशरथी, अरे भैया नहीं है त्रिया का ह्यां कछु दोप । मोह करम अति निर्दई, अरु करे ग्यांनी पुरुषोंको भी बेहोश ॥१९॥

धावा छन्द—तिरियानें सोचाए पियाजी वरदेत हैं, अरु तेरा दाव आ लगा है बिन दाम ॥२०॥ बांध ले पियाकूं बचनूंके बन्धन डारिके । अरु ए तो आवेंगे हमारे कमी काम ॥२१॥ हुकम पियाका सुनं बोली रानी केकई । अजि सुनि लीज्यो मेरे प्यारे भरतार ॥४॥ बचन तुमारा मैंने

माना अपने जीवसे। अजि रख लीज्यो जीपियाजी भण्डार ॥५॥

अब नहीं ल्यूंगी ल्यूंगी होगी जब चाहना। अजि मुझे अब तो नहिं है दरकार ॥६॥ दशरथ राजाने वचन उसे दे दिया। अर नहिं किया है नृपतिने विचार ॥७॥ वचनोंके बांधे राजा दशरथ बन्ध गए। अरु वो तो करने लगा है वासैं प्यार ॥८॥ पाई है स्वयंवरमें जिसने फते बड़ी। अर फिरव्याह किया जी उसकी लार ॥९॥ ठग लिया रानीने राजाकूं देके भूलमें। अरे भैया हो गए जुल्म अपार ॥१०॥

दम सातवां—रानीके तो पाके दिवले वल गए। अरे भैया किसीने न जानी मनकी बात। राजाजी मग्न हो गये भोगमें, अरे भैया कट गए राजाजीके हाथ ॥१॥

धावा सातवां—भूल गए राजाजी गुजर गई मुद्दतें। अरु भैया सैकड़ों बरस गए बीत ॥२॥ राजाकूं संभाले वो तो पाले सब जीवकूं। अरु वो तो चले हैं धरमहीकी रीत ॥३॥ बुधिबल धारी फौजें भारी जिसके पास हैं। अरु वानें लिए हैं हजारूं राजा जीत ॥४॥ सुख सेतो भोगे हैं राजाजी अपनी संपदा। अरु वानें कभी ना विचारी विपरीत ॥५॥

राजा अनरण्यका बेटा है तो तो दशरथी अरु वो तो करे हैं प्रजासे बड़ी प्रीत ॥६॥ नगर अजुध्याका धनी है बड़ा सूरमा। अरु वाका वंश है सूरज मेरे मीत ॥७॥ बड़े बड़े मन्त्री हैं खजानें जिसके राजमें। अरु वो तो जाने चौदा विद्याओंकी रीत ॥८॥ असि मसि कृषी अरु जानें षटकर्मकूं। अरु वाके राजमें नहीं है भैया कोई विपरीत ॥९॥

दम आठवां—अब मैं बताऊँ उसकी भैया रानियां।

अरु आगे करूं पुत्रोंका जोध बखान। अरु वो तो गद्दीपे बिराजे राजा अनरण्यकी, अरु वो तो तपे हैं पृथ्वीपे, जैसा भान ॥१॥

धावा पहला—सुन मेरे वीरा वो तो भोगे अपनी सम्पदा। अरु वाके रानी थी भैयाजी पूरी च्यार ॥२॥ प्रथम सुमित्राजी कुशल्या जिसका नाम है। अरु वाके भए हैं। राम अवतार ॥३॥ दूजो थी रानीजो राजाके अपराजिता। अरु जाके भए लछमन बलधार ॥४॥ तीजी शत्रुघनकी माता थी रानी सुप्रभा। अरु जना केकईने भरतकुमार ॥५॥ च्यारूं ही रानीसे राजाजी भोगे राजकूं। अरु जाके च्यारूं ही पुत्र बलधार ॥६॥

इस विधि राजाजी करें थे अपने राजको। अरु जिसके सुखका नहीं है कुछ पार ॥७॥ इक दिन वनमें मुनीश्वर कोई आ गए। अरु जिनका नाम था सरब हितकार ॥८॥ सुनकर राजाजी गए थे गुरु वन्दने। अरु सुना पिछले भवोंकाहूं विचार ॥९॥ मन वैराग्य त्यागू, सारी जग संपदा। अरु भए वहां सो वे उदासी तत्कार ॥१०॥ जानी झूठी माया अरु काया झूठी जानिके। अरु जान झूठो ही सकल संसार ॥११॥

आ गया बुढापा जो तपस्या अब नहीं करूं। अरु मैं तो जाऊंगा डूबि गंझधार ॥१२॥ ऐसे मन ठानो नगरीमें आए लौटिके। अरु आए रामजीकूं देने राज भार ॥१३॥ भए हैं वैरागी बड़ भागी जशरथ बली। अरु वाने जोड़ा झटपटसे भैया सार दरबार ॥१४॥

दम नवमा—सुन ल्यौजी मन्त्री अरु परधान सब। अरु सुन लीज्यो सब ही हमारे हितकार। विरध अवस्था म्हारी अब आगई। अब हम तजेंगे भैयाजी सब संसार ॥१॥

धावा—त्यागूंगा जगतमें बसूंगा बन खण्डमें। अरु मैं तो करूंगा तपस्या सुखकार ॥२॥ पाय पयादा विचरूंगा वन खण्डमें। अरु मैं तो करूंगा वनों हीमें अहार ॥३॥ पालूंगा संजम करूंगा रक्षा जीवकी। अरु भाई जन्म नहीं है बारम्बार ॥४॥ अब श्रीरामकूं सौंपूंगा सारी संपदा। अरु उसके सिरपे छत रखूंगा धार ॥५॥

गद्दीपे बिठाके मैं जाऊं तप करनकूं। अरु मैं तो दूंगा ए पटकि हथियार ॥६॥ पकड़ा दूँगा तीनों बेटोंको भुजा उसे। अरु वो तो रामके रहेंगे तावेदार ॥७॥ ज्यामंकी माताको उसीके सरनें छोड़के, अरु मैं तो जाऊंगा करूंगा तप सार ॥८॥ जल्दी बुधवायोजी लगन मेरे मन्त्रियों अर कर्यो सारे ही खवर इकवार ॥९॥ भिजवा यों चिट्ठी आवें राजा सब देशके, अरु आवें सबही हमारे हितकार ॥१०॥

आवें सब राजा सूरजवंशी चन्द्र वंशके, अरु आवें सारे जादू वंशी सरदार ॥११॥ जल्दी करवायो जोत प्यारी मनोहारकी, अरु करवा यों नगरीमें मंगल चार ॥१२॥ हुकमके होते ही बजन लगी दुंदुभी, अरु लगे रामके होनेकूं जै जैकार ॥१३॥ दान सन्मान अरु पूजा भावना, अरु सजि गए नृप मंदिर तूजार ॥१४॥ घरघर गावें माई भैना जश रामके, अरु भाई सजि गई घोडूंकी कतार ॥१५॥

सजि गए राजाजीके गजपति घूमते, अरु सजि गए जी फौजूंके सरदार ॥१६॥ दुखित सुखित जीवोंकूं बंटे सरकार, अरु बन्टे दानहूँ च्यार परकार ॥१७॥ छोड़ दिये कैदी बन्दीखाने सब तोड़के, अरु कर दिये हैं अमेजा गुनहगार ॥१८॥ हाथोंसे महंदी सुख सीता श्रीरानका, अरु लगे सीताके होनेकूं मंगल चार ॥१९॥ सजि गए जहाँ हो लोक नहर

रामके, अरु जामें आवे छहूँ रुतकी भैय्याजी बहार ॥२०॥

दम दशवां—सजि गया रंग महलमें मण्डप सोहना, अरु जापे चढ़ गया झण्डा राज दुवार, बन्ध गई वन्दनवारें मणि सुवरण जड़ी, अरु भैया चढि गए सोनेके वहां कलश हजार ॥ १ ॥

भाया—सजि गए च्यारों ही वाँ बुर्जें कमरे सजि गए, अरु जिनके छज्जोंमें हीरोंके लागे झाड़; लालोंके झुलोंमें लगाई नीलमकी लड़ी, अरु पुखराजी दिए गण्डे उनमें डार ॥२॥ इन्द्र नीलमणिके जड़ाव झुले लगि गए, अरु जिनपे सवजोंकी लगी हैं कतार। चन्द्र कांत रतनोंके आईने लगा दिये, अरु सूरज कांतसे जड़ाए खम्भ हजार ॥३॥ फैली पद्मरागकी रसीली किरणावली, अरु चन्द्र सूरजकी नहीं दरकार ॥४॥ बन गया गोला जी वेदीका पंचरंग रतनका, अरु जापे बना चौंसठ थम्भा मनहार। केवड़े गुलाबोंसे भरा दई बावडी, अरु छूटवा दिए हौदोंमें झान फुवार ॥५॥

अतर गजाकी नहरें जामें छूट गई, अरु जामें डोलें राजहंसोंकी कतार। चम्पा चमेली जाई जुही जहां लग रही, अरु जाकी झुकी रही हरी हरी डाल ॥६॥ वरखा भवनमें कारी कारी घटा झुकि रही। अरु जामें बिजली विजावें झमकार। मीठो पवन चलें जी सरसावती, अरु परें अतरोंकी प्यारीजी फुवार ॥७॥ छोटी छोटी नाली जामें चलें लहरावती, अरु जामें मुरला रहे हैं झंकार। तूही तूही करें जामें तातें मीठो बोलड़ां, पिहूँ पिहूं करत पपैय्याजी पुकार ॥८॥ वहके सुचण्डा वजे है वीणा बासरी, अरु बजे तबला मृदंग वा सितार। जलकी तरंग पैसरंगी वहके चौकमें, अरु सुन रहें रघुवंशी सरदार ॥९॥ गावें गन्धर्व अखाड़े जहां लग गए;

अरु गावें वरषाकी मेघ लार। सजि गए रामके महल गद्दी बिछ गई, अरु भैय्या लगि गए राजोंके दरबार ॥१०॥

दम ग्यारहवां—सरद भवनमें भैय्या नदियोंने छोड़े हैं शृंगार, अरे भैय्या कुंजोंने दिये हैं वेले गगनमें। अरु भई दश दिश निर्मल एही बार ॥१॥

धावा—निर्मल चन्दा भए निर्मल चांदनी, अरु भैय्या खिले हैं कम्मल दलसार। नीले नीले अम्बर महल नीले सजि गए, अरु आई भैय्या नील वनकी बहार ॥२॥ नीले नीले हाथी नीले नीले घोड़े सजि गए, अरु सजि गए नीले राजकुमार। नीले पीले झण्डे नीले पीले तम्बू बन गए, अरु नीले पीले सजि गए हैं बजार ॥३॥ दीपक भवन विपञ्जी दीपक जग गए, अरु लगि गई रतनोंकीहूँ कतार। बन्ध गए सड़कूं पे वाड़े लग गई रोशनी, अरु लगो छुटनमें महतावीजी अनार ॥४॥ हिम रुत आईजी गुलावी सर्दी छा गई, अरु खिल गए हैं गुलावी गुलजार। सिरी रघुवीरके सुहाग मंगल गा रही, अरु वेतो सीठने सुनावें दे दे गार ॥५॥

गावत बधाईजी मिठाई घर घर बंट रही, अरु भैय्या हो रही राजोंकी जीननवार। छोड़ि दिये कैदी अरु सबै परजा कर दई, अरु बंटे दासहूँ कपाहूं ही परवार ॥६॥ सजि गए मंदिर महल नवसालके, अरु बन्ध गई हैं तोरण बन्दनवार, सीता माताजीके हाथों पैरूं महंदी लगि रही। अरु बाजे हो रहे बत्तीसों शृङ्गार ॥७॥ कालीं कालीं चोटीजी माथेपे चूड़ामणि दिपैं, अरु आंखूं अंजन दीनों करन गुंजार। माथेपे बिन्दी अरु चूड़ामणि झलमलै, अरु लट छिटकैं चमकने सितार ॥८॥ कानूंके भूषण नकेसें अभरण जड़ें, अरु मणि जड़ित पहराए सातों हार, हरि हरि चूडीयां भुजोंमें भूषण जगमगैं, अरु कटि भूषण भेष लहर्दें डार ॥९॥ सो है

भुज बन्धन कंगण सातौं भांतिके, अरु पोरी पोरी छल्ले दिये गलदार। पैरोंमें पायल जड़ाऊ सो हैं बाजनी, अरु गुठडीमें रहे घुंघरू गुंघार ॥१०॥

सुही सुही चुंदड़ी सोहै जी दक्खन देशकी, अरु सोहैं दावन जड़ाऊ गुलज़ार। झीनी झीनी अंगिया पे सोहै पुष्पावली, अरु जैसे खिले हैं गगनमें सितार ॥११॥ कर रही सासूजी कौशल्या सारे टहल ले, अरु गाती जावैजी बहूके मंगलाचार। गावैं बड़भागन सुहागन मंगल मंजरी, अरु थाके पुत्रकी बनावैं पटनार ॥१२॥ दौरी दौरी आवैंजी दौ राणी रंगरसभरी, अरु झुक झुक देखैं थाके मुखकी बहार। झुक झुक देखेंजी छबीला राजोंकी सुता, असूरजवंशी चन्द्रवंसियोंकी नार ॥१३॥ आवैं ले ले जोड़ेजी नजर गुजरावती, अरु गावैं सीतांकी गहाके मंगलचार। सज गया सीतांका सिंघासन रणवासमें, अरु लगा सीतल भवनमें दरबार ॥१४॥ बजि रहे बाजे गावैं नाचैंजी सुहागना, अरु बांटै दानजी करै बेन बहार। फूली फूली फिरैं मनमूली भोरी बावरी, अरु नहि जानैं कोई भैय्या करम विचार ॥१५॥

दम बारहवां—चैत सुदीजी नौमीके दिना, अरे भैया रामका भया था जो अवतार। अरे भैय्या वो ही दिन आया राजमहूर्तका, अरु सजि गएजी राजोंके दरबार ॥१॥

धावा—आए सब नाती अरु गोती सूरज वंशके, अरु आए चन्द्रवंसी राजा नौतिहार। आए हुरवंशी अरु विद्याधर वंशके, अरु आया भामण्डल राजकुमार ॥१॥ जनक कनक दोनू आए बड़ी धूमसे, अरु उनका आया है सकल परिवार। आए राजा कर हटमर हट देशके, अरु आए दखणी हजारों सरदार ॥२॥ आए गुजरातीजी पंजाबी पश्चिम देशके, अरु आए उत्तर दिशाके मनुहार। आए अंगबंग देशी आएजी

कलिंगके, अरु आया मालवेका सारा रजवार ॥३॥ आए मारु देशके राजोंके धोंसे बाजते, अरु आए सोरठ सितारा खंधार। आए सारे आए, वृजवासी नरनार।४। ले ले घोड़े जोड़े आए नजर दिखावने। अरु कोई आए हैं होनेकूं अज्ञाकार ॥५। अरु कोई आए रामकी हद्दीका जलसा देखने, अरु कोई आए तजनेकूं संसार। कोई आए राजा जशरथजीके हुकमसे, अरु बकसाने सरहद्दी तकरार ॥६। कर दिए दोष छिमाजी सबके रावने, अर करवाई सब ही की मनुहार। दिए लिए घोड़े जोड़े सबके आदर मानसे, अरु बांटे रतनोंके भरभर थार ॥७॥ बैठे हैं हजारों छतरीजी दरबारमें, अरु लगे होने चवरोंके फटकार। गावत बजावत बंटावत बधाईयां, अरु सजि रह्याजी राजाका दरबार ॥ ॥ बजत नफीरी होवे जै जै नौबत ऊडर ही, अरु बैठे पंडित महूरत बिचार। बिछाई चोंकीजी चन्दनकी सबके बीचमें, अरु जाये बैठे रघु इन्द्र मनिहार ॥९॥ लछमन बैठा जैसा मोहन नपेन्द्रजू, अरु वो तो रामपे छतर रह्या धार। बैठे सिरी भरत सन्तोषी भावे भावना, अरु वो तो जाने सब जगकूं असार ॥१०॥

भलीजी बिचारीये पिताने जग भोग तजि, अरु किया जोगके धरनका बिचार। ए तो जग जाल रुलावे भव सिंधुमें, अरु मैं भी चलूंगाजी इनही केलार।११॥ कब दिन आवे मैं बिचारूं थाए चित्तमें, अरु किया पिताने बड़ा ही उपकार। धन वड भागि तब लागो जाको आंगने, अरु मैं तो तिरूंगा इन्हीकी संघधार ॥१२॥ शत्रु धन बांटेंजी पधाईं वेण चावसे, अरु वो तो करे है सभाकी मनुहार। बान्दन भाट बखाने बिर दावलो अरु ऐसा किया प्रभुजीकी पूजाका प्रथम विचार ॥१३॥

अथ इष्ट पूजन दस तेरवा—पंच परम गुरु पूजिके, अरु

भैया पूजे हैं चौबीसोंजी अवतार। भूत भविष्यत तीनों कालके, अरु भैया पूजिके मनाया मंगलचार ॥१॥

धाया—बैठाजी झरोखोंमें सुहागन मंगल गा रही, अरु भैया देखें झुकझुक नरनार। आ गया महूरत गद्दीका सिरीरामके, अरु उठे जशरथ विरक्त विचार ॥२॥ तेज दिये चंवर छतर गद्दी तजि दई, अरु भैया खोल धरे सारे हथियार। पकड़ी हैं बांह राजाने सिरीरामकी। अरु वो तो बोला ऐसे वचन सुधार ॥३॥

सुन मेरे बेटा हम तो बनकूं अब जात हैं, अरु बेटा कीज्यौ परजाकी प्रतिपार। धरमकूं रखिके तू सारे सुख भोगियो, अरु बेटा रखियौ धरम ही से प्यार ॥४॥ अपनी मातोंकी बेटा कीज्यौ प्रतिपालन, अरु बेटा रखियौ भैयोंकूं अनुसार। साधू सतियनकी बेटा कीज्यौ सदा चाकरी। अरु दीज्यौ दान चार परकार ॥५॥

दीनदरिद्री दुखियाको मत दंडियौ, अरु बेटा जनम नहीं है बारंबार। तू है सब लायक हमारे कुलका चन्द्रमा, अरु बेटा भयाब्वलिगढ़ अवतार ॥६॥ तू है अधिकारी बलधारी, मेरे लाडले। अरु बेटा लीजौ सब काम संभार, रखले मेरा मान राजोंके दरबारमें। अरु मेरे सिरसें बोझ ले तू तार ॥७॥ हो रही राजाकी बातें ऐसे सिरीरामसे, अर कर जोड़ें खड़े रामकुमार। छोड़ दिया राजाने सिंहासन उठकै चावसैं, अरु धरा सिरपै मुकट तुरेंदार ॥८॥ दे दई खजानोंकी तालीजी रघुके हाथमें, अरु दफतरखाना दिया सारा ही संभाल। सेनापति मन्त्री अरु सूबे बुलवा लिये, अरु बुलवा लिए फौजूंके सरदार ॥९॥ रथ गजबाजी प्यादापलटन बुलवा लई, अरु बुलवा लिए सारे ही कीलेदार। हुकम सुनायाजी राजाने सबके बीचमें, अरु सुनो पंचों अरु म्हारे तावेदार ॥१०॥

मैं तो वन जाऊंगा लेऊंगा दीक्षा जैनकी, अरु दिया रघुकूं राजकाजमें भार। यही मेरी शिक्षाता वेदारी इनकी कीजियो अरु मैंने कर लिया पक्काए विचार ॥११। अभी बन जाऊंगा, रहूंगा नहि एक छिन, अरु मैं तो धरूंगा याहीके सिर भार। हो रही राजाकी बातें ऐसे दरबारमें, अरु भैया देख रहा सारा संसार ॥१२॥ बोले सब राजा हम हैंगे रैयत रामकी, अरु फिर गई है दुहाई दरबार। बज रहे शंख बजन लगी दुंदुभी, अरु मीठी मीठो लगी लगी चलने बयार ॥१३॥

बरसे रतनजी फूलोंके झड लग गए, अरु लगी पड़ने अमृतकी फुवार। बढ़ रही उमंग आनन्द घर छार है। अरु रह्या लछमन छत्र सिरपे धार ॥१४॥ ढोरत चम्मर भरथ अरु शत्रुघन, अरु करे मन्त्रोंका पंडित उचार। सौंपा सुख रामका खडग सौंपा हाथमें, अरु बिठलाए लया सभाकेजो मंझार ॥१५॥ आई है बधाई देने प्रजा रंग रस भरी, अरु लगे रामके होनेकूं जैजैकार। नन्दो बढ़ो जीवोए राजाजी तेरा सुतवली, अरु नाचे गए गंधर्वोंके अखार ॥१६॥ नाचे सुर किन्नर रघुके [illegible] गगनसें, अरु मारी भांडोंके ना [illegible] नभ सार। लग गए लवजोवि बाणूंके [illegible], अरु बजे धुमकिट धुमकिट तबल सितार ॥१७। ताथिझाता थिझ. किट किट धुट किट गत बज रही। अरु नाचे राजा [illegible] भैयाजी दरबार ॥१८॥

अथ रामचन्द्रजीकूं राजा [illegible] राजतिलक करै है। प्रजा लोक [illegible] बधाई गावनो [illegible] हुवहो ॥

जीवो राजा दशरथके पुत्र चार, जीवो राजा दशरथके पुत्र चार। सिरी राम लछमन भरथ शत्रुघन, [illegible] तिन बन्दियों बधाई द्वार। जीवो राजा दशरथके पुत्र चार ॥टेका॥

जीवो नित मात कुशल्या प्यारी, जिन जायो रघुपति धनुधारी। मगल जगत दुख हारनहार, जीवो राजा दशरथके पुत्र चार ॥१॥ जीवो अपराजित मात सुहागन, जिन जायो लछमन महा भागन। राम चरणाश्रित धरण हार, जीवो राजा दशरथके पुत्र चार ॥२॥ जीवो केकई कलमल हरणी, भरत महामणी जनम उधरणी। शिवरमणीको वरनहार, जीवो राजा दशरथके पुत्र चार ॥३॥ धन्य सुप्रभा प्रसूता तेरा, जिन जायो अघन सुनहरा। परम धरम धन भरनहार, जीवो राजा दशरथके पुत्र चार ॥४॥ जीवो दशरथ नृप परम विरागी, देता राज रघुकुं बड़ भागी। भव समुद्रसे तरनहार, जीवो राजा दशरथके पुत्र चार ॥५॥ सुयश धसोए अशुद्धा दशरथ, इन सम जाकी त्रिभुवनमें कीरत। भवि नहार मुकरनहार जीवो० ॥६॥ इति ॥

अथ फागमोंमें सीता प्रति प्रजा लोक वा स्त्री जनन दर्शाति वधाई। चल पिय वा नहिं आयोरा रागनी जंगला झलोटी गाराकी ठुमरी ॥

सीता पिया तेरा चिरजीवोरी। सीता पिया। हे चिर जीवो चिरजीवो चिरजीवोरी। सीता प्रिया तेरा चिर जीवोरी। टेक॥

तू तो अटल राज नित करीयो, तेरे सिरपे छतर नित फिरयों, पिया तेरा चिरजीवो री। सीता पिया तेरा चिरजीवो री ॥१॥ सुनि मन्दोदरिकी जाई, तू तो बांटले पीव वधाई। पिया ॥२॥ सुनि जनक रायकी लाली, तु जै मात विदेहाने पाली। पिया तेरा चिर ॥३॥ तेरे जीवो तात अरु माता, तेरा जीवो भामण्डल भ्राता। प्रिया० ॥४॥ तू तो दशरथ कुलमें आई, तेरा जीवो कंत रघुराई। पिया तेरा चिर ॥५॥

तैं तो शील महाव्रत धारा। किया स्वमुख शनिस्तारा। पिया० ॥६॥ तेरे सुफल रहो ए जोवर। तेरे जीवो पियारी तीनो देवर। पिया० ॥७॥ कहैं सास्त कुशलपाप्यारी। तेरे स्वसुखकारी तपस्यारी। पिया० ॥८॥ तेरे संतकूं नहीं देंगे। वे तो संजम निश्चे लेंगे। पिया तेरा चिर० ॥९॥ स्वामी त्यागी चले वेटी हमको। है लोज हमारी तुमको पिया० ॥१०॥

तू तो होगी रामकी रानी। वन्धया ले पद पटरानी ॥पिया० ॥११॥ तेरी सखियां मंगल गावें. तेरा पुन्य प्रताप मनावें। पिया० ॥१२॥ पावो नैनानन्द हजारों. मैं तो तन मन तुजरे पर वारों। पिया० ॥१३॥

दम चौदहवां—हुकम चढ़ाया पंडित जोतिषी अजि सुन लीज्यो बड़भागी जशरथ राय। अजि अब आ गया महूरत श्री रघुवीरके, अजि अब दीजियें माथे तिलक चढ़ाय। १॥

धावा—सुनते ही राजाने घसाया चन्दन बावना. अरु उज्जल चन्द्राकी किरण उनिहार। पीरी पानी केशर घसाई उसमें सोहनी. अरु मानों खिल गई चपाकी सा डार ॥२॥ भर लई सोनेकी कटोरी धर लई हाथपे. अरु भर लिए गज मोतिनके थार। भर लिए राजाने फूलोंके गजरे गूंदके. अरु पचरंगे रतनोंके गडे हार। ३॥ धर लई केशरकी कटोरी राजा हाथपे, अरु मच्या कोलाहल नगन मझार। नरनारी राम जैवन्ते हूज्यो जगतमें, अरु धन्य राजा किया भला ए विचार। ४॥ बड़ो है उमंग राजाजीके मन चावसें, अरु लगी होने चवरोंकी फटकार। गुरु गुरु देवकी सखियों बैठि राणियां, अरु सब देवेकी सभाके सरदार ॥५॥

भर लिया केशर चन्दनसे गूंठारा धने. अरु किया

तिलक करनका विचार। हाथकूं उठाते ही करम रघुवीरके, अरु भाई आ गये पदेमें तत्कार ॥६॥ मन मुरझानीजी राजाकी रानी केकई, अरु वाकी लई करमोंने मतिमार। मेरा सुत चवर करै क्यों रघुवीरपै, अरु मेरा हो गया जनम धिरकार ॥७॥ कैसे करूं जाऊं मैं कहांसी डूबूं जायके, अरु कैसे परिके मरूं मैं कूवे भाड ॥८॥ मन ही मनमें बैठी बैठी बल खा गई, अरु नहि जानी है किसीने वाकी सार। उठी घबराके जी चढ़ी चोचातर सालपै, अरु बोल चदरा फिराके मैय्या मार दहाड ॥९॥

दम पन्द्रवां कर्कश वचन केकेईके।

अथ जसरथ राजाकूं मूर्छा और रामकूं वनोवास होनेका कारण केकईका वर मांगना। राजतिलकके वख्तके हालमें भजन गंगावासीमें बाली लोगूंके ईकतारे खडताल पर ताल पर ताल गाने कारणनी जंगला।

होवे राजतिलक रघुवरके, केकई यों उठि ललकारी। अजि यों उठि ललकारी, मतिमारी राजा जशरथकी ॥ दुहाई दे पुकारी, वचन हमारा अब कीजे पूरा स्वामी। मत बनों धरमहारी, होवे राजतिलक० ॥

यह टेक हरवार संपूरण पढ़ना अधूरी न पढ़ना आगे दौड हैं।

तुम स्वामी रावणसे छिपिके जनकसंग, फिरे थे विदेशोंमें। बनाए बुरे रंगढंग, मेरा था स्वयंवर हुए आए थे हजारों राजा ॥ ले ले फौजे भारी बड़े वंशके महाराजा, तुम भी पधारे थे अखाड़ेमें खड़े थे वार। सबकूं बिसारमें बनाए तुमें भरतार, जल गए नृप सारे गल मांहि घल गए। पडा जंग भारी ॥ होवै राज० ॥१॥

मारा गया सारथी, तुमारा तुम जानो सारी। घेर लिये तुमकूं जो घूंने आके एकवारी, मैंने रथ हांका था हूं आपका हुकम पाय। चुग चुग जो धूंकी छातीपै ले चढी थी धाय, रणकूं फतेलु किया, मुजै वर दिया मांग ले मनवछित प्यारी ॥ होवे राजतिलक ॥२॥

मांगेगी सो दूंगा दान राखूंगा मैं तेरा मान, भाखी तुममोंसे भगवान चित्त धारिके। आपसे मैं लेके वर आपमें दिया था धर, कर लीजे याद मेये हककूं विचारिके वचन विसारो तो। न केशरकूं डारो स्वामी, चन्दनमें डारोकारो काजल उपारिके। करयो कलंकको तिलकर धुर्वीरजीके कहो हम चले हैं धरम निजहारिके, गुपत समस्या करी मेंहल पर खरी राम जशरथने सुनी सारी ॥ होवै राजतिलक०॥३॥

राजाने हुकम दिया खूब ले दिलाई, याद मांग ले जो इच्छा होय शंका नहीं करणो, टर जावो पांचूं मेरू टर जावो चनसूर वचन टरूं ना भावें टर जावो धरणो। करिके प्रतिज्ञा तेरी पूरी फिर ल्यूंगा दिकसात जिदिया प्यारी मैं तो धर अरु धरणी, बोली रामकूं यों काढ भरथकूं दीजे राज राजाका कतर दिया हिमा ज्यों कतरणो। द्रिग सुख नृपक रिहाय पड़े चकराय कर भगति टरैं न भाई टारी, होवे राजतिलक रघुवरके, येकई यों उठि ललकारी। अजि यो उठि ललकारी मतिमारी, राजा जशरथकी दुहाई दे पुकारी। वचन हमारा अब कीजे पूरा स्वामी, मत बनों धरमहारी, होवे राजतिलक० ॥४॥

आगे छन्द आल्हादस पन्दरवां।

अहो कर भगति अति प्रबल, मंगलमें हो गया अनंगल सचित्यरसमें कुरस विधि बसते भया, कर भया दुख

जशरथकूं अनंत ॥१॥ सुनते ही बचन पड़े हैं राजा भूमिमें, अरु लगा बज्रसा कलेजेके मंझार । सुध पड़ि गईजी राजाकूं आ गई मूरछा, अरु मारगेके कई वचनकी उचार ॥२॥ उठे सिरीराम चल नयवासकूं, अरु मचि गईजी सभामें हाहाकार । जानी नहीं गुपत समस्या लछमन वीरने, अरु नहि जानी किन किया ए बिगार ॥३॥ तजि दिया रामने सिंहासन गद्दी तजि दई, अरु बोली चलनेकूं हुयाजी तैयार । ऐसी विपरीत निहारी लछमन वीरने, अरु बोली उठा जैसे सिंह दहाड़ ॥४॥ छा गई आंखूंमें सुखी लागी भुजा फरकन, अरु जैसा उठा है नाग फुंकार । टूटे भुज बन्धन भंवर ऊंचा चढ़ी गई, अरु मानों देगा पिरथीकूं ऊंधी डार ॥५॥

पकड़ धनुषकूं चढ़ाया चिल्लातानके, अरु भैया कांप गए सुरग पताल । कांप गए दिग्गज अचल सारे चल गए, अरु चढ़ि गया ऊंचा छाता गोलाकार ॥६॥ तोड़तोड़ बन्धन घोड़े दौड़े हिनसते, अरु बन्ध गएजी फौजूके हथियार । कस गई कमर जो थूंकी मौछु बज गये, अरु खूनी हाथी लगे मारन चिंघाड़ ॥७॥ चढ़ि गई मूछेंजी माथेमें बल पड़ गए, अरु वो तो बोला है सभामें ललकार । किन किया बिघन बतावो सिरीरामजी, अरु उसकूं भेजूं अभी जमके द्वार ॥८॥ कर दूंगा गारतमचाके भारत आज ही, अरुजी तापंकड़ि जमीमें द्यूं उतार । ल्याऊं मैं पकड़ उसे सुरग पतालसे, अरु काढि ल्याऊं जो हो सिंधुके मंझार ।९॥ धीरव गाऊं धरि आऊं आठूं दिशनमें, अरु दे घूंबली दिग पालनकूं डार । हुकम चढ़ायों थौजा बिघन किन कर दिया, अजि मैं तो करद्यूंगा उलटपुलट भैयाजी संसार ॥१०॥

दम सोलवां—रामने मनाया लछमन वीरको, अर सुन मेरी भुजाके मदत करतार । पिताके बचन हमकूं पालने, अरु मेरी सुनके धनुष ले उतार ॥१॥

चौपाई वही कतीर तुलसी कृत रामायणकी, चालके, अथ लक्ष्मण कोप निवारण हेतो: श्री रामचन्द्र वचनम्।

मुनिवर बीर लखन वरभागी, मम अनुकूल सदा अनुरागी। तात वचन दियो परच प्यारा, केकई मात धरयो भण्डारा ॥१॥ जुद्ध विखेवर दे न सुखीना, मन वंछित सोई अब लीना। आज मात यह वचन उचारा, राजधरम मोहि देश निकारा ॥२॥ सुनत तात मूर्छा गति आई, अब इनकहुं न उचित नहीं भाई। जो पितु पर मन राखू प्यारा, तो धृग जीव धन जनम हमारा ॥३॥ करे भ्रात हम तुम अनरीती, जावे फैल महा विपरीती। सूरज वंश मलिन हुय जावे, जुगजुग वश कलंक न जावे ॥४॥ बनी पिताको दो कठिनाई, देय वचन लियो धरम उठाई। हारत वचन होय मुख कारा। त्यागत क्यों मोसासुत प्यारा ॥५॥

इक अवसर पितु संकट भारी, कोपत भ्रात जाय पति सारी। हानि लाभ विधिके वश प्यारा, कर्मने कछु चले न चारा ॥६॥ मूरख जंतू न बात विचारे, संत पुरुष सिद्धांत निकारे। कोपन जोग्य समासन भाई, मनन करो घर नहीं समताई ॥७॥ हम छत्री क्षत्रि न कहूं जाए, बलि नारायण जन्म धराए। नीति धरम थापनकूं प्यारा, हम तुम आय लियो अवतारा ॥८॥ जो हम तुम अनरीति विचारे, स्वारथ हित परमारथ बिगारे। तो धीर बजडा कहत कहानी, ये संपति कछु काम न आनी ॥९॥ तात मम अब कौशलि माता, तारि धनुष तेरी सुनि ले भ्राता। मंत्रके संपति यह भारी, फिरे जहां जहां पावन हारी ॥१०॥

तू शिवंहपति भावी प्यारा, रावणवंश विध्वंसन हारा। भाखि चुके सीमंधर स्वामी, सुनि आए नारद नभगामी ॥११॥

सो हमरे भई निश्चे धीरी, तारि धनुष कोई विन धरि धीरा। पुनिसुनि धीर न बात हमारी, राजनीतमें यो उचारी ॥१२॥ अतिथा अनाथ शस्त्र जिनडारे शरणागति अरु मांग न मारे, बाल विरध रोगी अरु नारी। मातपिता अरु कन्या क्वारी ॥१३॥ दूत अपाहज घायल सूरे, पशुपंछी अरु विहल पूरे। निर्दोषी हित यो बीचारा, इन हिन मारे छत्री धीरा ॥१४। लगे केकई मात हमारी, पिता बचन अरु मांग न धीरी मांगे बचन उधार सयाने। कीनो कौन दोष कहु पानै ॥१५। थी कोइ धीरण वात पुरानी, जाने थे दोऊ रावरु रानी। गुपत रही चिरकाल मुलाके, प्रगट भई अब अवसर पाके ॥१६॥ अति अवध्य निरदोष पियारे, छत्री होय धरम रखवारे। पूजनीक पदपद परकोऊ, कोपत बाल बने नीं कोऊ ॥१७। रहे भ्रात इत भरथ अधीना, तो लघु भ्रात रहै छविछाना। तातें चल मेरे संग पियाए, पुत्र जनम हो सुफल हमारा ॥१८॥ यों समझाय शांत चितकीना, लेय धनुष भ्राता संगलीना, तात चरण सिर जाय झुकावा। कर परणाम भरथ समझावा ॥१९॥ तात वचन हम जात पियारा, कर छिमाजो दोख हमारा। करियो तात मातकी सेवा, भजियो चित सदा जिन सेवा ॥२०॥

रहियो सुखी प्रजा सब तेरी, तू चिरजीव असीस है मेरी सुनी लघु भ्राता शत्रुघन प्यारे। सकल सुजन अरु मित्र हमारे, करियो भरथ सेववड भागी। तन मनसे रहियों अनुरागी ॥२१॥ सकल सभासे मिल दोऊ बीरा, माता मिलनकूं गए धरि धीरा। महलमें निबसे जगमाता, भई मगन लखि दोऊ भ्राता ॥२२॥ सीताके करे मंगलचारे, जाय परे दोऊ चरन मंझारे। जननी हुकम हमें अब दीजे, औगुण माफ सकल कर दीजे ॥२०॥ तेरी कूख करम संजोगी,

धरम भारमो कारण भोगा। मेतें सेव बनी नहि तेरी, करम उदै गति आगई मेरी ॥२१॥ मोहि भयो वनवास पियारी, दई भरथ पितु संपतिसारी। सुनत वचन माता घबरानी। भई शिथल दशरथ पटरानी ॥२२॥ हा हा पुत्र कहा उचारी, मोहि अकाल आज क्यू मारी। राम कहैं धरि धीरज माता, देश दखन जावें दोऊ भ्राता ॥२३॥ भरथ भूमि तजि वनमें जाऊँ, करि विश्राम लेन तोहि आऊँ। यों समझाए गए दोऊ वीरा, माता अपराजितके तीरा ॥२४॥ करि परिणाम सुप्रभा भेटी, सब कारण कहि विपति समेटी। मात केकई चरण मंझारा, मस्तक टेकि वचन उचारा ॥२५॥

हम कपूत तुम मात हमारी, पुत्र हम जनम दियो दुख भारी। जा सुतकी सम्पति लखि माता, पावै दुख तपै सब गाता ॥२६॥ सो कुपुत सुत अति अविचारी, तुम पाजाव जगत बलिहारी। आप अजस सुत सुजस दिलाया, राख्यौ धरम जनम सफलाया ॥२७॥ तुम हो मात परम उपगारी, क्रिया पिताका आज्ञाकारी। रखियो कृपा सदा तुम पाले, यों कहि मिलन उद्यानको चाले ॥२८॥ पैठौ राजतिलक करावे, मस्तक चूडामणि धरवावे। अनुज सहित रघुवीर पधारे, सादर सुखद वचन उचारे ॥२९॥ जनक सुते हम वनकूं जावे, शाल शिरोमणि स्वबद पावे। रहियो भरत संग पियारी, करि है रक्षा धरम तुमारी ॥३०॥

दम सतरदवां—मोतियन चौक पूरा रही, अजि मेरी सी भरवा रही मांग अबीर। करम कठोरा घातक है गया, अरु थाकी पलट गई भैय्या तकदीर ॥१॥

भावा—सुनते ही सीताने बिसारे सारे टेहले, अरु दह हो लई पियाके वो अगार। मंगल गावत सुहागन छोडी

रोवती, अरु सो तो बोली ऐसे वचन सुधार ॥२॥ संग तुमारे मैंने भोगी सुख सम्पदा, अरु कैसे छोडूं तुमें विपत संझार। मैं रंग महलों तुम चाले वनखण्डकूं, अरु मैं तो मरूँगी तरफ भरतार ॥३॥ बोले श्रीराम सुन जनककी लाडली, अरु मेरे पिता तजेंगे संसार। मैं भी तो चला हूं मेरी प्यारी वनखण्डको, अरु चला भाई भी लखन मेरे लार ॥४॥ तू भी जो चलेगी तो पियारी वनखण्डकूं, अरु मुझे हसेंगे सकल नरनार। लोग कहेंगे नहीं स्वामी अपनी कामना, अरु गया माताकूं त्यागी निराधार ॥५॥

पुत्रके जने से या माताकूं फल क्या मिल्या, अरु सह्या नाहक गरभा हीका भार। ऐसी विपतामें माताकूं बिसारिके, अरु यो तो रथारथ काहेगा संसार ॥६॥ फिर पति पुत्र बहूके बिना सुन्दरी, अरु माता रहेगी एक एकके अधार। जीवो धन जोबन भलाही जावो जीवना, अरु भावैं जावो सारे सुख इकवार ॥७॥ सब सह ल्यूंगा जो लिखो है मेरी करममें, अरु नहीं सहूंगा अजसकी मैं गार। सुन सखवन्ती सतपुरुषकी सम्पदा, अरु हैगी वोही जासे वना रहै प्यार ॥८॥ अरु सुनि नारी मेरी प्यारी वनखण्डमें, अजि होंगे कांटे अरु कठिन पहार। तेरा तन कोमल कलीसा मेरी सुन्दरी अरु कसे करेगी तू पैरूं जा बिहार। रींछ बघेरे रोग जंगडे आवे गरजते, अरु प्यारी मिलेंगे सिंह बलधार ॥९॥ अजगर मगर नदीमें आवें उछलते, अरु कैसे तिरेगी उदधिको तू धार। ऐसे ऐसे कारण कहलों कहूँ सुन्दरी, अरु मेरे सग मत प्यारी वनकूं सिधार ॥१०॥

दम अठारवां—कहत सतीजी सुनि असरण सरण अजि तुम हो सतके निभावनहार। आज मैं तो विन दर्शन भोजन नहीं करूं, अजि मैं तो लिया है व्रत धार ॥११॥

धावा—सुन ल्यो ए अरजी करूंगी मजी आपकी, अजि मैं तो हुकम करूंगी ताबेदार। तजिके जो जावो तो मर जाऊँ जब जाईयो अन नहीं करूँगी मैं नाथ अहार॥२। जीवन चाहो तो ले चालो बनवासमें, अजि थारे दाबूंगी चरण भरतार। जहां जहां जावोगे बैठाऊ आदर मानसे. अजि दूंगी पलकूंसे पृथिवी बुहार॥३॥ चुनरी बिछाके जोवनाऊ गद्दी आपको. अरु करूं सीरी सीरी पंखेसे बयार। चुन चुन कलियां फूलोंके गजरे गून्दके, अरु थारे डालूंगी गलेमें भरतार॥४॥ छील छील धान मिलाके पिया दूधमें, अरु थारी तपूंगा रसोई हरबार। ठोक दुपहरी कोई मुनिवर भेटियो अरु दीज्यो दोनूं भाई शुद्ध अहार॥५॥

विपतामें धरम सहाई पिया जीवका, अरु पिया धरम उतारे जग पार। आगे थारो मरजीमें मरजी मेरी जानियो, अजि मैं तो तुम बिन करूं ना पियाजी अहार॥६॥

दम उन्नीसवां—भर आई छाती रघुवीरकी. अरु बोले तब लछमन बरबीर। हम तुम चले बनवासकूं, अजि प्रभु धरेंगी मतीजी कैसे धीर॥१॥

धावा—सीताजी सतीको प्रभु म्हांतो संग लीजिये, अरु नाहीं रहियो प्रभु अवधि मंझार। नदीपे बैठके हुकम प्रभु कीजिये, अजि मैं तो रहूँगा हजर परदार॥२॥ भाई रहूगन भरथ प्रभु आपपे, अजि म्हांतो करेंगे चवर दुलार। जो कोई दुष्ट करेगा निन्दा आपकी, अजि उसकी ल्यूंगा मैं तो जिभ्या निकार॥३॥ जो कोई टहलिया करेगा धर्मा आपकी, अजि उसको देखूंगा मैं सुजाजी उपार। दुख करेगा [illegible] [illegible] गहिगी दक्षणा, अजि वो तो जावेगा [illegible] [illegible] ॥४॥ हुकम चलावो प्रभु जैसी थारो भावना. अजि मैं न [illegible]

विधि करनेको तैयार। रहो तो मैं राखूंजी चलो तो चलदूं इस घड़ी, अरु करूं आपकी आज्ञाके अनुसार ॥५॥

जोड़े खड़ी हाथ हुकम मांगे जानकी, अरु पड़े टप-टप आंसुनकी धार। पीवबिछोवा भाई जगमें ऐसा जानियों, अरु जैसा जीवका बिछोवा दुःखकार ॥६॥ पीव अरु जीवमें फारक मत जानियूं, अरु बिना पीवके कहावे विधिवा नार। बोले सिरी राम सुन जनककी लाडली, अजि तू तो हैगी मेरी प्राण अधार ॥७॥ सुख-दुःख जीवन मरणमें मेरी सुंदरी, अरु तू तो हैगी मेरी सदा सहकार। तेरे ही कारण चढाया मैंने धनुषकूं, अरु जहाँ खड़े लाखूं जो धावल धार ॥८। धीच स्वयंवर मेरी प्यारी मेरे कण्ठमें, अरु तेने डारी वरमाला वरनार। राजोंके आगे सिरीमान राजा जनकने, अरु मुझे किया तुम्हारा भरतार ॥९॥ तुझे तजि प्यारी मैं न जाऊं मुख चोरीके, अरु तेरी रक्षाका है मेरे सिर भार। देके तुझे धका सुख पाऊं तो मैं सुंदरी, अरु मेरे धनुष भुजाको धिरकार ॥१०॥

जीवते पियापे दुःख पावै जिसकी सुन्दरी, अरु उसके सिरमें धूर दीजे डार। हरदम प्यारी मेरे चित हीमें तू बसे, पर मैं तो चलूंगा नीत अनुसार ॥११॥ चलना तुम्हारा मेरे संग सुन सुंदरी, अरु हैगा माताके हमारे अखत्यार। ले ले तू अज्ञा चरणोंमें सिर टेकके, अरु दे दे हुकम हो तो हो जा तू भी तैयार ॥१२॥ पैर पसारे प्यारो मैंने जिसके पेटमें, अड़ उसके हुकम बिना हूं लाचार। किस विध चला है सतोजी रोती सासपे, अरु लेने आज्ञाको कुशल्याजीके द्वार ॥ १३ ॥

दम बीसवा—वचन सीताजीका सास प्रति।

सुनएरी माता प्यारी लाडली, अरु जियारे पुत्र चले हैं दोऊ वनवास। अजि थारा हुकम मिले तो जाऊं सेवा करनको, अजि दिये करमोंने माई हमकूं निकास ॥१॥

चौपई बडी—रोवत सास वधू बतलाई, मर गए मन गए तन मुरझाई। गिर गिर पड़त चलत आंसूं धारा, चवर छतर धरि हो गए उल्टे करम विचार ॥२॥ पलटि गए विधि अङ्क हमारे, दिए करमने देश निकारे। नाना करम उदय अस आए, चंवर छतर धरिका छिन गाए ॥३॥ यद्यपि विधिवस सुख दुःख होई, ताको दुःख मोहि मात न कोई। भंग पड्यौ तुमसे वमंझारा, अति सन्देह चलत नहि चारा ॥४॥ मिट तन करमलकीर सयानी, सुन हे सास दशरथ पटरानी। यद्यपिमें पाप न अविचारी, देत तुम्हें दुखमें दुःख भारी ॥५॥

तद्यपि तुमसे दोष छिमाऊं, जननी मनलगि अरज सुनाऊं कन्त चले वनवास पियारी। मैं पति चरन प्रतिज्ञा-धारो ॥६॥ बिन खाए उनकूं नहि खाऊं, पाट न दिपन पिया संग जाऊं। कठिन वनोवस चलत न प्यारी, करो हुकम जो मर्जी थारी ॥७॥ निरंजोबी दोऊ नन्द तुम्हारे, हम तुम परण निभावनहारे। रही कुशल गई विपत बिलाई, भेजूं तुरत लेन तोहि माई ॥८॥ आऊं आर घरों दुख पड़ी, तो कहियो पीया दूध बिछेड़ा। सुनत मात मनमें मुरझाई, कहत कुशल्या देत दुहाई ॥९॥

अथ कुशल्याजीकी तरफसे शोभा सीता प्रति रामके साथ वनोवास होते समयमें रागनी जय जयवन्ती।

भर भर नैंना मत रोवे मेरी सुंदर जैसी पड़ेगी वैसी जीव सहैगो ॥टेक॥

छूट गए पुण्य पलट गए शुभ दिन, हम ना सहैंगे बेटाको न सहैगो। भर भर नैना मत रोवे मेरी सुन्दर० ॥१॥ चाहत जीव सदा सुख संपत्ति, होत वही जो बेटो कर्म चहैगो। भर भर नैना मत० ॥२॥ यद्यपि है परवाण यही विधि, तदपि केकैयाजीको बोल दहैगो। भर भर नैना मत रोवे मेरी सुन्दर जैसी पड़ेगी वैसी० ॥३॥ नन्दन वन सम समकित द्रिग सुख घर लेहिए मैं जासूं विघ्न बहैगो। भर भर नैना मत रोवे मेरी सुंदर जैसी पड़ेगी वैसी जीव सहैगो ॥४।

आज्ञा कुशल्याजीकी तरफसे।

जा पुत्री मत करमन भारी, जीवो जोडी जुगल तुमारी। पाय न पडत निकसि आए आंसू, चली बहू अरु रोवत सासू। १॥ जैसी पडत अवस्था वीर, तैसी विधिवस सहै शरीरा। चलो राम लछमन वन दोऊ, संग सती अरु साथ न कोऊ ॥२॥ पड़ी नगरमें हाहाकारा, रोवत सब जशरथ परिवारा। पड़े मूर्छित तात विसारे, उचित जानि वनवास पधारे। ३॥

दम इकीसवां—तजि गए भैया मन्दिर महल सब, अजि वे तो तजि गए सारे सुख अरु भंडार। अजि वे तो चतुरंग सेना सारी तजि गए, अरु लिये धनुष भरोसेके अपने संभार ॥१॥

धावा—धनुष संभारके चले हैं दोऊ सूरमा, अरु जैसे सुरग इन्द्र चले छाड। धीरे धीरे सतीजी चली हैं जिनके

गुंसाईं, दूपद ही सिर मात ठाईं। दीन तिलक अरु श्रीफल पाना, चलत सघन दई आशिष नाना ॥१३॥ चलत चलत भए सरजू पारा, निम विश्राम कियो तिहूंवारा। पहुंचे भरथ अवधिपुर धीरा, सहित सभा दशरथके तीरा ॥१४॥ करि शीतल उपचार जगाए, देखन राम लखन नहिं पाए। अलिम शिख धरि धीरज नीका, किया भरथ नृप पदवी टीका ॥१५॥

चले विज नयन धारण दीक्षा, हरण करमगण और नड्छा। सर्व हिताचारज मुनि नामो, परम दयालु जगतके स्वामी ॥१६॥ तिनके चरणांबुज चित दीनों, है अति बुध शुद्ध मनलीनों। जानी अथिर जग संपति त्यागी, दीक्षा दान लियो वड भागी ॥१७॥ भोग सोग बिरतंत वनायो, जोग सुजस अबलों नहिं गायो। मानत नहिं चित अति समझाऊं, शोम पलाश भजन इक गाऊं ॥१८॥

अथ राजा दशरथका संजम धारण और मोक्ष गमनके भावमें प्रजा लोक हर्षित चर्चा नगरमें फैली। रागनी बरवा पीलू धनासरी देश। इत्यादिका मिला है॥

लियाजी राजा दशरथ जोग लिया ॥टेक॥

एक समें कैकईकूं रणमें नृप वरदान दिया, होत राज रघुपतिकूं विघन करसो उन मांगि लिया। हेलि० ॥१॥ त्यागयो पुत्र भरथ निज राजयो लोग्यो मोखिहिया। यह संसार असार भरम विन बहुत जिना न जिया। लिया० ॥२॥ निरखत भोगकी महिमा सबमें विरध भया। भव तृष्णा न मिटी इस जियाकी योंही जन्म गया। लिया० ॥३॥ पुन्यवंत इक संत सरबहित आ उपगार किया, संजम धारि वसो निर्जन वन भवदुख मेटि दिया ॥लिया० ॥४॥ केवलज्ञान उपाय सुजस ले नृप निर्वाण गया। घर घर अजस भयो

केकईको भरतसे जाय ना सह्या ॥५॥ अति अपवाद भयो सुनि द्विग सुख ए मामानि कह्या। मोकूं क्यों भवबन्धन दीन्यों उलटे ही राम लिया, लियाजी राजा दशरथ जोग लिया ॥ ६ ॥

अथ पुनः भरत उलाहना केकई प्रति–राग भैरूं जंगला ठुमरी चलती।

कीनों कहारी मैय्या कीनों कहा, गए भैय्या हमारे बन कीनों कहा। स्वारथ हित परमारथ खोयो, जगमें अपजस लीनो महा। गए भैया० ॥१॥ राज खुशाय रामसे मुजकूं क्यों भवभव दुःख देनों ठया। गए० ॥२॥ क्यों कौसल्या जीव दुःखायो कई दिन जगमें जीनों चह्या। गए भैय्या० ॥३॥ लौटा ल्या चल भ्रात हमारे, मापे इकला जाय ना रह्या। गए भैय्या०।४॥ चले भरत नृप सहित केकई, संरजूपै जा डेरा दिया। गए भैय्या० ॥५॥ तुम बिन नैन चैन नहिं द्रिग सुख भरत पसरि चरणोंमें गया, गए भैय्या हमारे बन कीनों कहा ॥६॥

अथ सरजूके तटपर रामका भरतकूं समझाना और अपनी तरफसे भरतको पुनः राज्य देकर रामका बनोबासमें जाना। केकईको अभय करना इत्यादि वर्णनमें दम चौबीसवां, रागनी जंगला भजन खाडताल तंबूरा ॥

गई मात केकई रामचन्द्रपै भरतकू ले बनमें, गई मात केकई रामचन्द्रपै भरतकू ले बनमें। अजि भरतकू ले गई केकई बनमें, अति लज्जित भई सब ही जनमें चलो पुत्र तुम करो राज मत जावोजी अटव्पनमें ॥ गई मात केकई रामचन्द्रपै भरतकू ले बनमें, अजि एक तो मैं नारी भई दूजे मति मारी गई तीजे गही थारी भई छाती मेरी धरकी,

जगतमें छारी भई रहीसही सारी गई। तुम चले राजा गए रही ना किधरको, भरथ विरागी तो धरम अनुरागी रहै राजसूं न काज करै रक्षा कौन घरकी॥ तुमरो निकारो भयो मेरो मुख कारो भयो चलि कैउ आणो करो माफ एक वरकी, चित्तमें धरो मत खोट चालो सुत लौट। भरथ तेरी फरै आस मनमें॥ गई मात०॥१॥

सुनि सिरी राम उठि माताकूं प्रणाम कियो, भरतकूं पुचकार छातीसे लगायो है। मेरे आसन हो कैर भाव तोहि मैंने कियो राव पिताको वचन पालो धरममें गायो है, आऊंगो मैं तेरे पास राखो मन विसवास सरतसे भरथको भरम मिटायो है सिरपे मुकट धरयो माथेपै तिलक करयो चंवर छतर धरिधोसां वजवायो है। सुन त्यों सर्वनकी व अमीर गरीब रहो भरथके चरणनमें॥ गई मात०॥२॥

विदा किये नरनाथ, चल दिये रघुनाथ। आगे पीछे आप बीच जानकीको दई है, जैजैकार धुनि भई सवने असीस दई मुरि मुरि देखे प्रजा बावरीसी भई है॥ नगरीमें आए राजा भरथ प्रवेश कियो, राम गए वन प्रजा पछताय रही है। हाहारे करम तेरी महिमा अगम यार, अति ही विचित्र गति जावे नाहि कही है। छिनमें छत्र धरे छिन फेंके काढि विजन वनमें॥ गई मात केकई०॥३॥

कांधला नगरको निवासी हूं शहरको मैं नैनसुखदास नामा कविता कथनको, भजन विलास एक कियो परकास हम गावत खलक सब हमरे भजनको। जैसो जाको भाव अरु जैसो मन चाव जाके तैसो ही बनाय लियो अपने मथानको, त्यों ही हम धावा छन्द देखिके प्रबन्ध कियो॥ जैसे गए रामचन्द्र लछमन वनको, पढो भव्य धरि भाव करो

उछाव सुनैय्यों जहां तहां संतनमें। गई मात केकई रामचंद्रपे भरथको ले वनमें ॥४॥
इतिश्री रामरावण संवादे राम वनोवासनामा प्रथम तुंग समाप्तं।

अथ सवत मिती दोहा—दयासिंधु सुत हेत हम कह्यो प्रबन्ध बनाय, आल्हा टाल्या विघ्न लखि रामचरित सुखदाय ॥१॥ अति मंगलको मूल यह, मन अवलम्बन हेत. विघ्न मिटे संकट टरे सु संपति लेत ॥२॥ संवत विक्रम भूपको नव शत एक हजार, पैंतालिश भादों शुक्ल अष्टमि अर गुरुवार ॥३॥ ता दिन परिपूरण कियो, प्रथम तुंग परभात। वरदाय हो जगतमें, नमूं चरण रघुनाथ ॥४॥

इतिश्री नयनानंद यतिकृत रामरावण संवादे श्रीरामलक्ष्मण शीता वनोवासगमन अध्याय २३वेमें प्रथम तुंग सम्पूर्णम्।

आगे तीन बनाए नहीं गए हैं। जब बनेंगे तब तीसरे भागमें लिखे जांयगे।

अथ सीता सतीके वनोवास सम्बन्धी दुख संयुक्त अद्भुत शील प्रभावनाका बारहमासा यति नयनानन्द कृत लिख्यते।

रागनी हिंडोलचाल श्रावणकी मल्हार। जैसे नदियां किनारे बेलाकिन घोया इसकी चालमेंके मेला। सीता वचन।

बिनकारन स्वामी क्यों तजी, विनवै जनक दुलारि। बिन कारन स्वामी क्यों तजी ॥टेक॥

आषाढ मास—आइघुमंडि आए बादरा घनघोर, जै चहुं ओर। निर्जन वनमें स्वामी तुम तजी. बैठनकूं नहि ठौर। बिन कारन स्वामी क्यों तजी ॥ विनवै जनक दुलारि ॥१॥

क्या हम सतगुरु निंदियो. क्या दियो अगिमन दोष। क्या हम सत संजम तज्यो, किस कारण भए रोष। बिन

कारण स्वामी क्यों तजी ॥ विनवे जनक दुलारि ॥२॥ क्या परपुरुष निहारिके, परभव कियो है देनिदान। क्या इस भव इछा करी, क्या मैं कियो अभिमान। बिन कारन० ॥ विनवे जनक० ॥३॥ कटुक वचन स्वामी नहि कहे, हिंसा करम न कीन। परधन पर चित नहि दियो, क्यों मन भयों है मलीन ॥ बिन कारन० विनवे जनक० ॥४॥

श्रावण—श्रावण तुम संग वन विषे, विपति सही भगवान। पाय पयादी वन घनमें फिरी, तनक न राखी मोरी कान ॥विकवे जन० बिन० ॥५॥ स्वसुर दिसोंटा जिस दिन तुम दियो, कियो भरत सरदारता दिन विकलपा नहि कियो। तजि सम्पति भई लार ॥बिन० विन० ॥६॥ जनक पिताकी मैं हूँ लाडली, मात विदेहाकी बाल। भ्रात प्रभा मण्डलसे बली, विपत मरु वेहाले ॥ बिनकारन० विनवे ॥७॥ मात मन्दोदरी गर्भसे, जन्मी रावण गेह परभव करम संजोगसे। रावण कियो है सन्देह ॥ बिनकार० विनवे जनक० ॥८॥

भादों—भादों पंडित पूछियो. पंडित कही है विचार। कन्याके कारण राजा तुम मरो, दीनी तुरत बिसार ॥ विनका० विनवे० ॥९॥ गाडी धरी मंजूषमें, जनक नगर वन बीच। हल जोतत किरसानके, लई करमने खींच ॥ बिन० विनवे० ॥१०॥

मरण भयो नहि ता दिना, करम लिखे उखएह। कहारी नजर राजा जनकके, पाली पुत्र सन्देह। बिन०। बिनवै० ॥११॥ जनक स्वयंवर जब कियो, लिये सब भूप बुलाया। दर्शन करि थारे वश भई, पडी चरन बिच आय। विन कारण। विनवै० ॥१२॥

कुंवार मासा—कार मास फिर गए भूप सब, मो कारण कियो जुद्ध। बऊत बली मारे रण बिपै, गयो धनुष

प्रवुद्ध। बिनका० ॥विनवे० ॥ १ ॥ खरदूषणके जुद्धमें, आयो रावण दौड। छल कर धोखा प्रभु तुमकूं दियौ, नाद बजायौ घनघोर। बिनका० ॥ बिनवै०॥ २॥ जल्दी पधारो प्रभु मैं घिर गयौं, तुम जानी भगवान। कष्ट पड्यौजी मेरे भ्रातपं, उपज्यो मोह महान। बिनका० ॥ भिनवै ॥ ३ ॥ मोहिल्ह कोई पाव चटोरिके, करम लिखी कछु और। आप पधारो अपने बीरपै, आ गयौ रावण चोर। बिन० ॥ बिनवै० ॥ ४ ॥ घोल झपटा करिके ले गयौ, मोकूं अचक उठाय। देखो नाथ जटायुने, क्या तुम जानत नाहि। विनका ॥ बिनवै० ॥५॥

झपटिझपटि वाके सिर हुयौ, मुकट खसोयौ मूंछ उपारि। मारि तमाचा डारी भूमिमें, पंछी खाईजी पछार। बिनका० ॥ बिनवें० ॥६॥ लछमन तुमहि निहारिके, बात कही करि गौर। बिन हि बुलाए आए भ्रात क्यों, है कछु कारन और बिनका०। बिनवै० ॥७॥ काहूं छलिया नैंचे कछु छलकियो, कछु करम चरित्र। नाहि पिछान्यौं जावै जुद्धमें, कौन है वैरी कौन है मित्र॥ बिनका०। बिनवै० ॥८॥

कार्तिक मास—कातिक तुरत पठाइयो, उलटि तुम्हैं बारे भ्रात। बिना ही बुलाए आए आपकूं, शत्रु करेंगे उतपात। विनका०। बिनवें०। १॥ आएजी तुरत रक्षा करनकूं, हमसे भरि प्रभु प्यार। बिखरे ही पाए पत्ते बेल सब म्हारे आप पछीर, विनका०। बिनवं० ॥२॥ भ्रातहू बई आके मुरछा, सकल शत्रुगण जीत। परचौ जटायु देख्यो सबको, भावना धर्म पुनीत। विनका०। बिनवै० ॥३॥ जन्म सुधारयो याको आपने, मो बिन पायो नहि चैन। डारीडारी ढूंढो दोऊ मिल वन बिपे, रोय सुजाए तुम नैन ॥४॥ बीर बन्धाई लछमन भुजबली, बहुत करी थारी सेव। विपत कटेगी प्रभु

समता धरे, तद्पि न माने थे तुम देव। विनका०। विनवै० ॥५॥ ल्याऊं काढि पतालसे, ल्याऊं पर्वत फोर खबर मिले तो सब छिनमें करूं। चीरस गाऊं थारा चोर। विनका० विनवै० ॥६॥ फेर मिलेजी प्रभु सुग्रीवसे, साहस गति दियो मारि। पाय सु तारा ल्यायो हनुमानकूं, ढूंढनमें ज्यों मोहि सकार। विनका०। विनवै०।७॥

अघहन—अघहन खबर मंगायके, मोहिग भेज्यों तुम हनुमान। कूदि समन्दर गयो गढ़ लंकमें, भेजी गूंठी तुम भगवान। विनका०। विनवै० ॥१॥ तुम बिन बैठी रो रही बागमें, राम ही राम पुकार। अन्न कियो ना पानी मैं पियो, परवश हुई थी लाचार। विनका०। विनवै० ॥२॥ मुख धुलवायो श्रीरामने, तुमरी आज्ञाके परमाण। प्राण बचाए मेरे विपतमें, करवायो जलपान। विनका०। विनवै० ॥३॥ तुरत ही भेज्यो तुमरे चरणने, चूड़ामणि दियो तारि। गाय फंसी है गाढी गारमें, खेंचीन कारो जा भरतार। विनका०। विनवै० ॥ ४ ॥

पोष मास—पौष चढ़ेजी गढ लंकपे, भारत किया भगवान। गारत किए लाखूं सूरमा, मार कियो घमसान। विन०। विनवे० ॥१॥ काटयो सिर लंकेशको, लक्ष्मीधर वर वीर। कूद पड़ेजी जोधा लंकामें, लवण समुन्दर चीर। विन० नि० ॥२॥ ल्याए तुरत छुडायके, अशरण शरण अधार। इतनी कर ऐसी क्यों करी, घरसे दई क्यूं निकार। विन०। वि० ॥३॥ पग भारीजी गिरगिरमें पडूं, शरण सहाय न कोय। अपनी कही ना मेरी तुम सुनी, बहुत अंदेशा है मोहि। विन०। वि० ॥४॥

माघ मास—माघ प्रभुजी पाला पड रहा, पौढनकूं नहीं सेज। ओढनकूं नहीं कांबली, दई क्यूं विपत्तिमें भेज। विन०। वि० ॥१॥ सिंह धड्केकूं कई भेडिए, मारे गज

चिंघाड। थरथर कंपे थारी कामनी, ख्यालन रही हैं दहाड। विन०। वि० ॥२॥ नाचे भूत पिशाचगण, रुंडमुंड विकराल। सनन सनन सारा वन करे, कांटे चुभैं जी कराल। विन०। वि० ॥३॥ कित बैठूं लेटू कित प्रभू, पास न खावन कोय। अन्न करूं ना पानी मैं पिऊं, बालककूं दुःख होय। विन०। वि० ॥४॥ तुम सब जानों प्रभू मेरे हालकूं, अष्ट भव हि अवतार। तुम सूरजमें पटवी जनो, क्या समझाऊं भरतार। विन०। वि० ॥५॥ समरथ हो प्रभु क्यों कमी, प्रगट कियो क्यों ना दोष। धोखा दे क्यों थपा दियो, आवे नहीं सन्तोष। विन० विनवे० ॥६॥

फागुण अब पुन्य प्रकृति उदयमें आवे है—फागन आईजी अठाइयां अपने करमकूं दे दोष। ध्यान धरयो भगवानको, बैठि रही मनमोस। विन० वि० ॥१॥ अरज करे प्रभूकी हजूरमें, ममता भाव निवार। तुम ही पिता हो प्रभू तुम मात हो। तुम हो भ्रात हमार। विन० वि० ॥२॥ निर्धनके प्रभु तुम धनो, निर्जनके हो परिवार। इस बर राम मिलाइयो, दीजियो दोष उतार। विन० वि० ॥३॥ तुम हो राजा प्रभुजी धरमके, हमकुं लगायो परजा दोष। शीलमें मेरे सब शर्म करे, राम हमारे हो गए रोस। विन० वि० ॥४॥ त्यागि दिए हैं प्रभु हम रामजी, त्यागि दियौ है सब संसार। गर्भवती हूं कर्म संजोगसे, यासे हुई हूं लाचार। बिन० बिनव० ॥५॥

जिस दिन प्रभु पहलापाक हो, मिलैं मोहि भरतार। भरम मिटाके धारूं धरमको, त्यागूं सब संसार। बिन० बिनव० ॥६॥ राम मनावें तौभी ना मनूं, करि आऊं बनकूं विहार। करपै श्री रघुवीरके, चोटो धरूंगी। बिन० बिनवे० ॥७॥

आवे गो सतीजी बैठी भावना, ध्यावे पद नवकार। पाप घट्यो प्रगट्यो पुन्य फलसुनि लई तुरत पुकार। बिन० विनवै० ॥८॥ पुण्डरीक पुरनगरको, वज्रजङ्घ भूपाल। आगए पुण्य संयोगसे गज पकड़न याही काल॥ विन० विनवै० ॥९॥ ढूंढत गजपति वन विषै, भनक पड़ी याके कान। कोई सतवन्ती रोवै वन विषै, किनए सताईजी अज्ञान॥ विन० विनवै० ॥१०॥

दोष लगायो कैसे पूछिए, गज तजि उतर्यौ धीर। विनय सहित भूप पूछन चल्यौ, आवैं जैसे भैनाके घरबार॥ विन० विनवै० ॥११॥ तुम हो बहन मेरी धर्मकी, बिपत कहो समझाय। माता पिता परिवारसे, द्यूंगो बहन मिलाय॥ विन० विनवै० ॥१२॥ जनक पिताकी हूँ मैं लाड़ली, भ्रात भामण्डल धीर। स्वसुर हमरे जशरथ नृप बली, भर्ता सिरी रघुवीर। विन० विनवै० ॥१३॥ रावण हरि ले गयौ, दोष धरे संसार। शीलमें मेरे सब संशै करैं, दीना राम निकारि। विन० विनवै० ॥१४॥ सुनत कथाजी छाती थरहरी, टपकैं आंसू वन धार। हाहारे कर्म तैं क्यों करी, कियौ तुरत उपगार। बिन० विनवै० ॥१५॥

देव धरम हिये बीचमें, बहन बनाई तत्कार। पुण्डरीकपुर ले गयौ, करिके गज असवार। त्रिन कारण० विनवै० ॥ १६ ॥ पुत्र भए दो लव अंकुश बली, शिवगामी अवतार। वज्रजंघ रक्षा करी, पालि किये हुशियार। बिन० विनवै० ॥१७॥

चैत्र मास—चेत्रमास नारद मुनि मिले, चरण पड़े दोऊ वीर। राम लखनकीसी सम्पदा, हूज्यौ धारे घरवर वीर। बिन० विनवै० ॥१॥ पूछ्यौ अपनी मातसे, राम लखन माता कौन। टस टस लागे आंसू टपकने, मार्यौ मन धार्यौ मौन। बिन० विनवै० ॥२॥ नारदमुनि समझाईयौ, पिछली

सकल वृतांत। सुनत उठे जोधारव हूले, वैठि विवाण तुरन्त। विन विनवै०॥३॥ घेरि अजुध्या रणभेरी दई, कांपे सुरग पताल। सोच भयौ श्री रघुबीरके, आये कौन अकाल। विन० विनवै०॥४॥ निकसे दोऊ भ्राता जुद्धकूं न्यूत मचाए घमसान। राम लखन घबरा दिए, पटक्यौ रथ काटे बाण। विन० विनवै०॥५॥

हल मूसल गए रामने, लछमन चक्र संभार। सात वार फेंक्यौ तानके, वृथा गए सातौं वार। विन० वि०॥६॥ हम हरि बल अकए किधौं, उपजा सोच अपार। आगबधूला होके फिर लियौ, चक्र प्रलय करतार। विन० वि०॥७॥ तब नारद आए भूमिमें, राम लखन ढिग आय। बात कहि सब समझायके, किसपे कोपे रघुराय। विन० वि०॥८॥ पुत्र तुमारे दोऊ भुजबली, लव अंकुश बलवन्त। मात विपत सुनि कोपियौ, भाख्यौ सकल वृतांत। विन० वि०॥९॥ भरि आई छाती श्री रघुवीरकी, रणकूं दियौ है निवार। आय परे सुत चरणमें, लीने दोऊ पुचकारि। विन० वि०॥१०॥

वैशाख मास—मास वैशाख वसन्त रुत, सुन सीताजीकी सार, भाग पड़े हनुमन्तसे बली, ल्याए करि मनुहार। विन० वि०॥१॥ वज्रजंघ आयौ धूमसें, ल्यायौ सब परिवार। राम कहैं मैं आने दूं नहीं, सीता दई मैं निकार। विन० वि०॥२॥ जो आयो तौ आवो इस तरां, कूदो अग्नि मँझार। देव परीक्षा अपने शीलकी, होवे मेरी पटनार। विन० वि०॥३॥ सीता यहि पण धारियौ, होवे कुण्ड तैयार। अगन जलावो देरी मत करो, सौ जोजन विसतार। वि० वि०॥४॥ खाई करि त्यारि करी, अंग डक्यौ बहभाग। कुण्ड खुदायौ मन भावनौ, चेतन कर दई आग॥५॥

आय चढ़ी ऊँपे दमदमे, देखे देव अपार। सत नूतन

सूरत सोहनी, मनमें हरष अपार। वि० वि० ॥७॥ देखें सुरगोंके देवता, देखें भवन पताल। चन्द्र सूर्य देखें ज्योतिषी, देखें भूत पताल। वि० वि० ॥८॥ देखें सब विद्याधरा, देखें गण गन्धर्व, कमर कस्या फौजें आ पड़ो, देखें राजा सर्व। विन० वि० ॥९॥ डीग अगन उठी गगन लों, तडतडात भयो घोर, कहत प्रजा श्रीरामसे, क्यों प्रभु भए हो कठोर। विन० विनवै ॥ १० ॥

वश्च वचे ना ऐसी अगनमें, फाटे धरणी पताल। पर्वत फटि मठ गिर पड़े हैं, प्रभु कीजिये टाल। वि० वि० ॥११॥ राम खड्गम् लयौ हाथमें, मति कोई कहोजी बनाय। आज्ञा मानें मेरी ध्यानकी, देवें भरम मिटाय। विन० वि० ॥१२॥ हुकम दियौ रघुवीरने, शील परीक्षा देह। नातर क्यों आई तू यहां, परजा करे है सन्देह। विन० वि० ॥१३॥ पंच परम गुरु वंदिके, करि पतिकूं परिणाम। छिमाजी कराई सब जीवसें, देखें लछमन राम। विन० बि० ॥१४॥ पुत्र जुगल छोड रोवते, सो है शचो समान। हरख भरी सतवन्ती महा, बोली वचन महान। विन० वि० ॥१५॥ जो परपुरुष निहारिके, मैं कछु कियौ हो कुभाव। भस्म अग्नि मोहि कीजियो, नातर जल हुय जाव। विन० वि० ॥१६॥

ज्येष्ठ मास—जेठ तपे सूरज आकरे, नाचै अगनि प्रचण्ड। आसपास जल थल बयार सब, सूकि गग वन खण्ड। विन० वि० ॥१॥ कूदि पड़ी जलती आगमें, शांति भई तत्कार। उभरे कंवल अकाश लों, लीनी अधर सहार। विन० वि० ॥२॥ जल लहरावें बोले हंसनी, कर रही मीन सल्लोल छत्र फिरेजी उसके सीसपे। इन्द्र चंवर रहे ढोल। विन० वि० ॥३॥ शीतल मन्द सुगन्द जुत, मीठी चलै जीव पार। वरषे मणि अमृत ऊडी, देव करे जै जैकार। बिन० वि० ॥४॥ धन्य सती धन

सतवन्तनी, धन धन धीरज एह। ध्रिग ध्रिग ध्रिग हम उनकूं करे, जिनके मन सन्देह। बिन० बि० ॥५॥

अथ द्वादशानुप्रेक्षा भावना सीताजी भावे हैं, जोग धारण करेगी कमलमें बैठी विचार करे हैं।

सीता भावें मनमें भावना, यह संसार अनित्य। धर्म बिना तीनों लोकमें, शरण सहाई ना मित्र। बिन० बि० ॥६॥ उलट पुलट पाले हरदसा, ये संसारी चक्र। एक अकेला भटके आतमा, क्या पशु पंछी अरु क्या शक्र। बिन० बि० ॥६॥ अब कोई जगमें आपना, अब हम काहूके मेत। अशुचि अपावन तन विषे, करम करे विपरीत। बिन० बि० ॥७॥

संवर जलबिन ना बुझे, तृसना अगन प्रचण्ड। कर्म खपाए बिन नासपे, भटके सबे ब्रम्हंड। बिन० बि० ॥८॥ दुर्लभ बोध जगतमें, दुर्लभ श्री जिनधर्म दुर्लभ स्वपर विचार है। कर्म न डारयौ मर्म। बिन० बि० ॥९॥ परवश भोगी भारी वेदना, स्ववशस ही नहि रंच। सास्वत सुख जासे पावनी, नर्ह करमने बंध। बिन० बि० ॥१०॥ अब मैं सब वेदन सही, कीनी धरम सहाय। परतज्ञा पूरी करूं, मोह महा दुखदाय। बिन० बि० ॥११॥ राम कहैं प्यारी चल घरूं, क्या सुझमें मुजमें डारि। पाडि शिखा करपे धरि दई, त्यागयो हम संसार। बिन० बि० ॥१२॥ तुम त्यागा निरदोषकूं, हम त्यागे लखि दोष। करिके क्षिमा मैं संजम लियो, करियो मत अफसोस। बिन० बि० ॥१३॥ गई सती जीवन संगकूं, भई अरजिका धीर। उग्र उग्र तप सो करे सब दुख सही शरीर। बिन० बि० ॥१४॥ पूरी करि परजायकूं, अच्युत सुरग मंझार। इन्द्र भएजी पुन्य संजोगसे, भोगें सुख अपार। बिन० बि० ॥१५॥

इतिश्री सीताजीका बारहमासा समाप्त।

आगे कवि नाम ग्राम संवत लिख्यते—

पढ़ियो भाई भैना भावसे, गावो बाल गुपाल। भावोजी धरमकी भावना, सिर पर गरजत काल। बिन० वि० ॥१॥ शील महातमके मैं कह्यो, या सम धरम न कोय। शील रतन मोटा रतन, जातें जग जश होय। बिन० वि० ॥२॥ परभवमें सुख सम्पदा, इन्द्रादिक पद पाय। काटि करम शिवसुन्दरि वरे, जन्म मरण छुटि जाय। बिन० वि० ॥३॥ वंश बढै सब संकट कटैं सोग वियोग न कोय रोग मिटैजी सेवो सन्त जन। पाप सकल गेरे धोय। बिन० वि० ॥४॥ नैनानन्द प्रबन्ध यह, दयासिंधु सुत हेत। गायो ध्याय जिनेन्द्रकूं, पद्मपुराण उपेत। बिन० वि० ॥५॥ संवत विक्रम भूपको, नवशत एक हजार। ता बरपट चालीस पर, लीज्यो सुघड सम्भाल। बिन० वि० ॥६॥ माघ शुक्ल पुन्योंके दिना, पूरे किये बारामास। दयासिंधु जिन धर्मकूं, कीज्यो पुत्र प्रकाश। बिन० बि० ॥७॥ मत पडियो वेदो कुपथमें, तजियो मत जिन धर्म। कर लीज्यो बेटा नरभवकूं सफल, रख लीज्यों मेरी शर्म। बिन कारण स्वामी क्यों तजी, गावे जनक दुलारि। बिन कारण स्वामी क्यों तजी ॥८॥

इतिश्री श्रीमान् राजा जनककी पुत्री रामचन्द्रकी रानी महासती सीतामाताके शील महातम सम्बन्धी अद्‌भुत प्रभावका बारह-मासा यति नयनानन्द कवि कांधलानगर निवासी कृत सम्पूर्णम्।

इति नयनानन्द विलास संग्रहे सीता शील महात्म्ये अध्याय २४ वां सम्पूर्णम् ॥ २४ ॥

अध्याय पच्चीसवां

अथ वज्रदन्त चक्रवर्तीका बारह मासा अध्याय २४ वां प्रगट होकि वज्रदन्त चक्रवर्तिको वैराग्य उपज्या। तब वे अपने पुत्रोंकूं राज्य दे हैं पुत्र परम वैरागी राजकू अंगीकार नहीं कर रहैं, तिनके जुबाब सवाल हो रहे हैं। तिनकी वैराग्य भावनाका यह बारह मासा, यती नयनसुखदास कृत लिख्यते।

अथ मंगलाचरण छन्द सवैया ॥३१॥

वन्दूं मैं जिनन्द परमानन्दके कन्द जगवन्द बिमलेहु जड़ता तपहरनकूं। इन्द्र धरणेन्द्र गौतमादिक गणेन्द्र जाहि सेवें राव रंक भवसागरकूं॥ निर्बन्ध निर्द्वन्द दीनबन्धु दयासिन्धु करें उपदेश परमारथ करनकूं। गावे नैनसुखदास वज्रदन्त बारामास मेटो भगवन्त मेरे जनम मरनकूं ॥१॥

कथा प्रबन्ध दोहा—

वज्रदन्त चक्रेशकी, कथा सुनो मन लाय।
कर्म काटि शिवपुर गये, बारह भावन भाय ॥२॥

सवैया ३१—बैठे वज्रदन्त आय अपनी सभा लगाय, ताके पास बैठे राय बत्तीस हजार हैं। इन्द्र कैसे भोग सार रानी छाणवें हजार, पुत्र एक सहस महान गुणगार हैं॥ जाके पूण्य प्रचण्ड सैनायें हैं बलबन्द शत्रु हाथ जोड़ि मान छोड़ि सेवें दरबार है। ऐसो काल पाय माली ल्यायों एक डाली यामें देख्यौ अलि अंबुज मरण भयकार है॥३॥

चक्रवर्ति वैराग्य वरनन, सवैया ३१

अहो यह भोग महा पापको संजोग देखो डालीमें कमल यामें भौंरा प्राण हरे हैं। नासिकाके हेत भयो भोगमें अचेत

सारी रैनके लायमें विलाय छन करे हैं ॥३॥ हम तो हैं पांचू छीके भोगी भए जोगी नाहि विषय कषायनके जाल मांहि परे हैं। जो न अब हित करू जानें कौन गति पई सुतन बुलायके यों वच अनुसरे हैं ॥४॥

चक्रवर्ति वचन पुत्रोंसती सवैया ३१

अहो सुत जगरीत देखके हमारी नीति भई है उदास वनोवास अनुसरेंगे। राज भारसो सवरो परजाका हित करो हम फर्न शत्रुनकी फौजसूं लरेंगे॥ सुत वचन तब कहत कुमार अब हम तो नगालकूं न अंगीकार करेंगे। आप बुरो जानि छोड़ो हमें जगजाल बोडो तुमरे ही संग पंच महा-वृत्त धरेंगे ॥५॥

पिता वचन आषाढ़ मास छन्द चौपाई

सुत आषाढ़ आयो पावसकाल सिरपर गरजत जम विकराल।
लेहु राज सुखकरहु विनीत, हम वन जांय वडनकी रीत ॥१॥

गीता छन्द—जांय तपके हेत वनकूं, भोग तजि संजम धरें।
तजि ग्रन्थ सब निर्ग्रन्थ हो संसार सागरसे तरें॥
यही हमारे मन बसी तुम रहो धीरज धारिके।
कुल आपनेकी रीति चालो राजनीति बिचारिके ॥७॥

पुत्रोंका उत्तर चौपाई

पिता राज तुम कीनो वीन, ताहि ग्रहण हम रथ हीन।
यह भौंरा भोगनकी व्यथा, प्रगट करत कर कंगन यथा ॥८॥

गीता छन्द—क्या करसा कंगना सन्मुख प्रगट नजरां परें।
क्यों ही पिता भों रानि रखि भव भोगसें मन थरहरें॥
तुमने तो वनके वास हीको सुख अंगीकृत किया।
तुमरी समझ सोई समझ हमरी हनें नृपपद क्यों दिया ॥९॥

श्रावण मास पिता वचन चौपाई

श्रावण पुत्र कठिन वनवास, जल थल सींत पवनके त्रास।
जो नहि पलै साधु आचार, तौ मुनि भेष लजावै सार ॥१०॥

गीता—लाजे सिरी मुनि भेष ताते देहका साधन करो।
सम्यक्त जुत वृत पंच मैं तुम देशवृत मनमें धरो॥
हिंसा असत चोरी परिग्रह ब्रह्मचर्य सुधारिके।
कुल आपनेकी रीति चालो राजनति विचारिके ॥११॥

पुत्रोंका उत्तर-चौपाई

पिता अंग यह हमरो नाहि, भूख प्यास पुद्गल पर छांहि।
पाय परी सह कबहु न भजे, धरि संन्यास मरण तन तजे ॥१२॥

गीता—संन्यास धरि तनकूं तजे, नहि डंशमंसकर्न डरे।
रहे नगन तन वन खण्डमें जहां, मेघमूसल जलवरे॥
तुम धन्य हो बडभाग तजिके राज तप उद्यम किया।
तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमें नृपपद क्यों दिया। १३॥

भादों पिता वचन-चौपाई

भादोंमें सुत उपजे रोग, आवे याद महलके भोग।
जो प्रमादवस आस न टले, तो न दयावृत्त तुमसे पले। ॥१४॥

गीत—जब दयावृत नहीं पले, हवे उपहास जगमें जिनपे।
अर्हंत अरु निर्ग्रन्थकी, कहो कौन फिर सरधा धरे॥
तातें करो मुनि दान पूजा राजकाज सभारीके।
कुल आपनेकी० ॥१५॥

पुत्रोंका वचन-चौपाई

हम तजि भोग चलेंगे साथ, मिटे रोग भवभवके तात।
समता मन्दिरमें पग धरे, अनुभव अमृत सेवन करे ॥१६॥

गीता—करे अनुभव पान आतमध्यान वीणा कर धरे।
आलापि मेघ मलार सी हंससभंगी स्वर भरे॥

घगघग पखावज भोगकूं सन्तोष मनमें कर लिया।
तुमरी समझ सोई समझ ॥ १७ ॥

आसोज पिता वचन-चौपाई

आसुज भोग तजे नहिं जाय, भोगी जोवन कूड़ बिलाय।
मोह लहर जियाकी सुधि हरे, ग्यारह गुण थानक चढ़ि गिरे॥१८

गीता—गिरे थानक ग्यारवेंसे आय मिथ्या मू परे।
बिन भावकी थिरता जगतमें चतुर्गतिके दुख भरे॥
रहे द्रव्यलिंगी जगतमें बिन ज्ञान पौरुष हारिके।
कुल आपने की० ॥१९॥

पुत्र वचन उत्तर—चौपाई।

विषै विडारि पिता तन वसें, गिर कन्दर निर्जन वन वसे।
महामन्त्रको लखि परभाव, भोग भुजंग न घाल घाव ॥२०॥

गीता-घाले न भोग भुजंग तब क्यों मोहकी लहरां नढें।
परमाद तजि परमातमः परकाश जिन आगम पढें॥
फिर काललब्धि उद्योत होय सु होय यों मन थिर किया।
तुमरी समझ० ॥२१॥

कार्तिक मास पिता वचन-चौपाई

कातिगमें सुत फरे बिहार, कांटे कांकर चुभें अपार।
मारे दुष्ट खेंचिके तीर, फाढे उर थर हरे शरीर ॥२२॥

गीता—थरहरे सगरी देह अपने हाथ काट तन छिवने।
नहि और काहूसे कहैं तब देहकी थिरता हने॥
कोई खेचि बांधि थम्भसे कोई खाय आंत निकारिके।
कुल आपने की रीति ॥२३॥

पुत्र वचन चौपाई

पद पद पुन्य धरामें चले, कांटे पाप सकल दल मले।
छिमा ढाल तल धरे शरीर, विफल करे दुष्टनके तीर ॥२४॥

गीता—करि दुष्टजनके तीर निरफल दया कूंजर पर चढे।
तुम संग समता खडग लेकर अष्ट कर मनसे लडे॥
धन धन्य यह दिन वार प्रभु तुम जोगका उद्यम किया।
तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमें नृपपद क्यों दिया॥२५

अगहन चौपाई

अगहन मुनि तटनी तट रहैं, ग्रीषम शैल सिखर दुख सहैं।
पुनि जब आवत पावसकाल, रहैं साधन जन वन विकराल॥२६

गीता छन्द—रहैं वन विकरालमें जहां सिंह स्याल सतां वही।
कानोंमें बीछू बिल करें, अरु व्याल तन लिपटांय ही॥
दें कष्ट प्रेत पिशाच आनि अंगार पाया डारिके।
कुल आपने की रीति चालो राजनीति विचारीके॥२७॥

पुत्र वचन-चौपाई

हे प्रभु बहुत बार दुख सहे, बिना केवलो जांय न कहे।
शीत उष्णनके तात, करत पाद कंपे सब गात॥
गीता—गात कंपे नरकसे लहे, शीत उष्ण अथाह हो।
जहां लाख जोजन लोह पिंड सु होय गलगल जांय ही॥
असि पत्र वनके दुख सहे, परबस स्वयं तप ना किया।
तुमरी समझ सोई समझ० ॥२८॥

पौष पिता वचन-चौपाई

पौष अरथ अरु लेहु गयन्द, चौरासी लख लख सुख कंद।
कोडि अठारह घोडा लेहु, लाख कोडि हलधर्म्म गिनेहु॥२९॥
गीता—लेहु हल लख कोडि षटखण्ड भूमि अरु नवनिधि बडी।
ल्यो देशकोश विभूति हमरी रासि रतननकी पडी॥
धर देहुं सिरपर छत्र तुमरे नगर चौंर ढुरारिके।
कुल आपने की रीति चालो राजनीति विचारिके॥३०॥

पुत्र उत्तर-चौपाई

अहो कृपानिधि तुम परसाद, भोगे भोग सुने मरजाद।
अब न भोगकी हमकूं चाह, भोगनमें मूले शिवराह ॥३१॥
गीता—राह भूले मुक्तिकी बहु बार सुरगति संचरे।
जहां कल्पवृक्ष सुगन्ध सुगन्ध सुन्दर अपछरा मनकूं हरे ॥
जो उदधि पी नहि भया तिरपत ओस पीके दिन जिया।
तुमरी समझ सोई समझ० ॥३२॥

माघ मास पिता वचन-चौपाई

माघ सधे न सुरनतें सोय, भोगभूमियनतें नहि होय।
हर हरि अरु प्रति हरिसे वीर, संजम हेत धरें नहि धीर ॥३३
गीता—संजमकूं धीरज नहीं धरें, नहि टरे रणमें युद्धसूं।
जो शत्रगण गजराजकूं दल मलैं पकरि विरुद्धसूं ॥
पुनि कोटि सिलमुद्गर समानो देय फेंकि उपारिके।
कुल आपने की रीति धारों लो राजनीति विचारिके ॥३४॥

पुत्र उत्तर-चौपाई

बंध जोग उद्यम नहि करे, एतो तात कर्मफल भरे।
बांधे पूरब भव गति जिसी, भुगतें जीव जगतमें तिसी ॥३ ॥
गीता—जीव भुगते कर्मफल कहु कौन विधि संजम धरे।
जिनबन्ध जैसा बांधियो तैसा ही सुखदुख सो भरे ॥
यों जानि सबकूं बन्धमें निर्बंधमें निका उद्यम किया।
तुमरी समझ० ॥३६॥

फाल्गुण पिता बचन-चौपाई

फाल्गुण चाले सीतल वाय थर थर कम्पे सबकी काय।
तन भव बन्ध विदारनहार, त्यागे मूढ महाव्रत सार ॥३७॥
गीता—धार परिगृह व्रत विसारे, अगनि चहुंदिशि जा रिही।
करे मूढ सीत वितीत दुर्गति गहैं हाथ पसार ही ॥

सो होय प्रेत पिशाच भूतन ऊतग्रु भगति टारिके।
कुल आपने की रीति चालो राजनीति विचारिके ॥३८॥

पुत्र उत्तर—चौपाई

हे मतिवन्त कहा तुम कही प्रलय पवनकी वेदन सही।
भारी मछ कछकी काय, सहे दुष्प जल थर पर जाय ॥३९॥

गीता—पाप पशु परजाय परबस रहे खिग बन्धायके।
जहां रोम रोम शरीर कंपे मरे तन तरफायके ॥
फिर गेरि चाम उचेरि स्वानसि खान मिलि शोणित पिया।
तुमरी समझ० ॥४०॥

चैत्र मास पिता वचन—चौपाई

चैत लता मदनोदय होय, ऋतु वसन्तमें फूले सोय।
तिनकी इष्ट गन्धके जोर, जागे काम महाबल फोरि ॥४१॥

गीता छन्द—फोरि बलकूं काम जागे लेय मन पुरहो नहीं।
फिराया न परम निधान हरिके करे तेरा तोन ही ॥
इतके न उतके तब रहे गए कुगति दोऊ कर हारिके।
कुल आपने की रीति चालो राजनीति विचारिके। ४२॥

पुत्र वचन—चौपाई

ऋतु वसन्त वनमें नहि रहै, भूमि मसारग परीसह सहै।
जहां नहि हरित काय अंकूर, उडत निरन्तर अहिनिशि धूर ॥४३॥

गीत—उडै वनकी धूर निशिदिन धानैं कांकर आयके।
सुनि शब्द प्रेत प्रचण्डके तब कान जात पकायके ॥
मत कहो अब कछु और प्रभु भाव मोनस मन रमिया।
तुमरी ॥४४॥

वैशाख मास पिता वचन—चौपाई

मास वैशाख सुनत नरदास, कहों मन उपज्यो विलास।
अब बोलनकूं नाहीं ठौर, मैं कहूं और तुम करै और ॥४५॥

गीता—और अब कछु मैं कहूं नहीं रीति जगकी कीजिए ।
　　इकबार हमसे राज लेऊ चाहि जिसकूं दीजिए ॥
　　पोता था इकपट मासका अभिषेक कर राजा कियो ।
　　पितु संग सब जगजालसेती निकस बन मारग लियो ॥४६

कवि वचन—

उठे वज्रदन्त चक्रेश, तीस सहस नृप तजि अलवेश ।
एकहजार पुत्र बड भाग, साठि सहस सती जग त्यागी ॥४७॥

गीता—त्यागि जाकूं ए चले सब भोग तजि ममता हरी ।
　　शम भाव करि तिहुं लोकके जीवोंसे यों विनत करी ॥
　　अहो जेते जोव जगमें छिमा हम पर कीजियों ।
　　हम जैन दीक्षा लेत हैं तुम वैर सब तजि दीनियों । ४८॥
　　वैर सबसे हम तज्या अर्हतका शरणा लिया ।
　　श्री सिद्ध साहूकी शरण सर्वज्ञके मत चित दिया ॥
　　यों भाखि पिहिताश्रव गुरुन ढिग जैन दीक्षा आदरी ।
　　कर लोच तजिके सोच सबनें ध्यानमें द्रिढता धरी ॥४९॥

जेठ मास कवि वचन-चौपाई

जेठ मास लूताती चलें सूके सर कपिगण मद गलें ।
ग्रीषम काल शिखरके सीस धर्यो अतापन जोग मुनीश ॥४९॥

गीता—धरि जोग आतापन सुगुरुने शुक्ल ध्यान लगाईयो ।
　　तिहुं लोक भानु समान केवलज्ञान तिन प्रगटाईयो ॥
　　धन वज्रदन्त मुनीश जग तजि कर्मके सन्मुख भए ।
　　निज काज अरु परकाज करिके समयमें शिवपुर गए ॥५०॥

कवि वचन-चौपाई

सम्यक्तादि सुगुण आधार भए निरंजन निराकार ।
आवागन जलांजलि दई सब जीवनकी शुभ गति भई ॥५१॥

गीता—भई शुभ गति सबनकी जिन शरण जिनपतिकी लई।
पुरुषार्थ सिद्धि उपायसे परमार्थकी सिद्धि भई॥
जो पढ़ें बारामास भावन भाय चित हुलसायके।
पवित्र नैन आनन्द तिनके हों मंगल नित नए
अरु विघ्न जाय पलायके ॥५२॥

दोहा—नित नित नव मंगल बढ़ें पढ़ें जु यह गुण माल
सुर नरके सुख भोगि कर पावें मोक्ष रिसाल ॥५३॥

सवैया ३१

दो हजार माहितें तिहतर घटाय अब विक्रमको संवत् विचारिके धरत हूं। अघहन असि त्रयोदशी मृगांक वार अर्द्ध निशामांहि याहि पूरन करत हूँ॥

इति सिरि वज्रदन्त चक्रवर्तिको वृत्तांत, रचिके पवित्र नैन आनन्द भरत हूँ। ग्यानवन्त करो शुद्ध जानि मेरी बाल बुद्धि दोषपै न करो रोष करो पायन परत हूं॥१॥

इति श्री नयनानन्द यति विरचितायां श्री आदिपुरानुसारेण
विदेहक्षेत्रस्थ श्रीमान् राज राजेन्द्र वज्रदन्त चक्रवर्तिकी
वैराग्य दशाका बारह मासा सम्पूर्णम्।

इति पचीसवां अध्याय सम्पूर्णम् ॥२५॥

अध्याय छब्बीसवां

श्री जिन जगदीश्वराय नमः।

अथ श्रीमान् उग्रसेन राजमती सती राजराजेश्वरीकी वैराग्य भावना बारहमासा नवीन यति नयन-सुखदास कृत अध्याय २६ वां लिख्यते—

राग मरहटी-झडी

मैं ल्यूंगा सिरी अरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धांत च्यारका सरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना॥

यह टेक हर महीनेमें आवेगी।

आषाढ़ झडी—सखि आया साढ घन्घोर मोर चहुँओर मचा रहे शोर इन्हे समझावो। मेरे प्रीतमकी तुम पवन परीक्षा ल्यावो॥ हैं कहां मेरे भरतार कहां गिरनार महाव्रत धार बसे किस बनमें। क्यों बांध मौड दिया तोड क्या सोची मनमें॥

झर्वटे—तू जारे पपय्या जारे प्रीतमको देश मझारे।
रही नों भव संग तुमारे क्यों छोड दई मझधारे॥

झडी—क्यों बिना दोष भये रोस नहीं सन्तोष यही अपसोस बात नहीं झूठी। दिये जादों छप्पन कोड क्या सूझी मोही राखो चरन मंझार, मेरे भरतार करो उद्धार, क्या दे गए झुरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना॥ मैं ल्यूंगी सिरी अरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धांत च्यारका सरना। निर्नेम नेम० हमें जगत० ॥१॥

श्रावण झडी—सखि श्रावण संवर करे समन्दर भरे जतन क्या करिये। मेरे जीमें ऐसा आवे महाव्रत धरिये॥ सब तजूं हार सिंगार तजूं संसार क्यूं भव मंझारमें जी भर-माऊं। ज्यों पराधीन तिरियाका जनम नहीं पाऊं॥

झवंटे—सब सुनल्यो राजदुलारी दुख पड़ गया हमपर भारी।
तुम तज दो प्रीत हमारी, कर दो संजमकी त्यारी॥

झड़ी—अब आ गया पावस काल, करो मत टाल, भरे सब ताल, महा जल बरसे। बिन पासे श्री भगवान मेरा जी तरसे मैं तज दई तोजस लौन पलट गई पौन, मेरा है कौन मुझे जग तारना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना, मैं ल्यूंगी सिरी अरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धांत च्यारका सरना। निर्नेम नेम हमें जगत क्या करना॥२॥

भादों झड़ी—सखि भादों भरे तलाब मेरे चित्त चाव करूंगी उछावसे सोलहकारन, करूं दसलक्षणके वृतसे पाप निवारन। करूं रोटतीज उपवास पचमो अकास अष्टमी खास निशल्य मनाऊं, तप कर सुगन्ध दशमीकूं कर्म जलाऊं॥

झवंटे—सखि ऊद्धार सकी बारा, तजि हार च्यार परकारा। करूं उग्र उग्र तप सारा, ज्यों होय मेरा निस्तारा॥

झड़ी—मैं रतनत्रै वृत धरूं चतुर्दशी करूं जगतमें तिरूं करूं पखवाड़ा, मैं सबसे छिमाऊं दोस तजूं सब गाड़ा। मैं सातूं तत्व विचारकी गाऊं मलार, तजा संसार तो फिर क्या डरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना, मैं ल्यूंगी सिरी अरहन्त सिद्ध भगवन्त साध सिद्धांत च्यारका सरना। निर्नेम नेम०॥

आसौज झड़ी—सखि आ गया मास कुवार ल्यो भूषण तार मुझे गिरनारकी दे दो आज्ञा, मेरे पाणि पात्र आहारकी है परतज्ञा। ल्यो तार ये चूड़ामणी रतनकी मणी सुनो सब श्रणी खोल दो वेनी, मुझकूं अबश्य परभात ही दिक्षा लेनी॥

झवंटे—मेरे हेत कमण्डल ल्यावो, इक पीछी नई मंगावो। मेरा मत नाजी भरमावो, मत भूले कर्म जगावो॥

झडी—है जगतमें आखाता कर्म बड़ा वेशरम मोहके भरमसे धर्म न सूझे, इसके वश अपना हित कल्याण न बूझे। जहां मृग तृष्णाकी धूर हुं, पानी दूर भटकना भूरि कहां जल झरना निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना। मैं ल्यूंगी सिरी अर्हन्त सिद्ध भगवन्त साध सिद्धांत च्यारका सरना, निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना॥

कार्तिक झडी—सखि कातिग काल अनन्त स्रिरी अर्हन्तकी सन्त महन्तने आज्ञा पाली, धर जोग जतन भव भोगकी तृष्णा टाली। सजे चौदह गुण असथान स्वपर पहचान तजे मकानरु महल दिवाली. लगा उने मिष्ट जिन धर्म अमावश काली॥

झर्वटे—उन केवलज्ञान उपाया, जगका अन्धेर मिटाया। जिसमें सब बिश्व समाया, तन धन सब अथिर बताया॥

झडी—है अथिर जगत सब बंध अरी मतिमन्द जगतका धन्ध हैं धुन्ध पसारा, मेरे पीतमने सत जानिके जगत बिसारा, मैं उनके चरणकी चेरी तू आज्ञा देरी सुन ले मा मेरी है इक दिन मरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना, मैं ल्यूंगा सिरी अरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धांत च्यारका सरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना।५॥

अघहन मरहटी झडी—सखि अघहन ऐसी घडी उदेमें पडी मैं रह गई खड़ी दरस नहिं पाये, मैंने सुकृतके दिन विरथा यों ही गवाये। नहि मिले हमारे पिया, न जप तप किया न संजम लिया अटक रही जगमें। पडी काल अनादिसे पापकी वेड़ी पगमें॥

झर्वटे—मत भरियों मांग हमारी, मेरी शीलकूं लागै गारी। मत डारो अंजन प्यारी, मैं जोगन तुम संसारी॥

झड़ी—हुये कन्त हमारे जती मैं उनकी सती पलट गई रती तो धर्म न खण्डू, मैं अपने पिताके वंशकूं कैसे भण्डूं। मैं मण्डा शील सिंगार अरी नथ तार गये भरतारके संग आभरना, निर्नेम नेम विन हमें जगत क्या करना। मैं ल्यूंगी श्री अरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धांत च्यारका सरना, निर्नेम नेम विन हमें जगत क्या करना ॥६॥

पौषका महीना झडी गज्जी लगा महिना पौष ये नाया मोह जगतसे द्रोहरु प्रीत करावे. हरे ज्ञानावर्णी ज्ञान अदर्शन छावे। परदर वसे ममता हरे तो पूरी परेजु संवर करे तो अन्तर टूटे, अरु ऊंचनीच कुल नामको संज्ञा छूटे ॥

झर्वटै—क्यो ओछी उमर धरावे, क्यो सम्पत्तिकूं विल लावे, क्यो पराधीन दुःख पावे। जो संजममें चित लावे ॥

झडो मरहटो—सखी क्यो कहलावे दीन. क्यो हो छवि छीन। क्यो विद्याहीन मलीन कहावे क्यो नारि नपुंसक जन्ममें कर्म नचावे। वे तजे शील शिगाफले, संमार भिने दरकार नरकमें पडना निर्नेम नेम विन हमें जगत क्या करना मैं ल्यूंगी सिरी अरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धांत च्यारका सरना। निर्नेम नेम विन हमें जगत क्या करना। ७॥

माघ मास मरहटी झडी—सखि आ गया माह बसंत हमारे कन्त भये अरहन्त वो केवलज्ञानी उन महिमा शील कुशीलका ऐसे बखानी। दिये सेठ सुदर्शन सूरभई मखमूल हुं बरसे फूल हुई जै बाणी, ये मुनि गये छग भई कलंकित रानी ॥

झर्वटै—फिर गया दुर्योधन वीर हुई द्रुपदी [illegible] गई भीर लाज रति आवे, गये पांडु जुयेमें हार न पार बसावे।

भये कीचकने मन ललचाया, द्रुपदी पर भाव धराया। उसे भीमने मार गिराया सन किया जैसा फल पाया॥

मरहटो—फिर गया दुर्योधन धीर हुई दलगीर जुड गई भोर लाज अति आवे, गये पांडु जुयेमें हार न पार बसावे। भये परगट शासनवीर हरी सब पार बन्चाई चीर पकर लिये चरना, निर्नेम नेम विन हमें जगत क्या करना। मैं ल्यूंगो श्री अरहन्त सिद्ध भगवन्त चार साधु सिद्धांत च्यारका सरना, निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना ॥८॥

फालगुण मरहटो—सखि आया फाग बडभाग तों होरी त्याग अठां ही लागके मैनासुन्दर, हरा सिरीपालका कुष्ट कठ'र उदम्बर। दिया धवलसेठनें डार उदधिको धार तो हो गये पार वे उस ही पलमें, अरु जा परणी गुणमाल न डूबे जलमें ॥

झर्वटें—मिली रेनमंजूषा प्यारी, जिन धजा शीलकी धारी।
परी सेठपे मार करारी, गया नर्कमें पापाचारी ॥

मरहटो—तुम लखो द्रौपदी सती दोप नहीं रती कहें दुर्मतो पदमके बन्धन, हुया घातकी खण्ड जरूर। शील इस खण्डन, उन फूटे घडे मंझार दिया जल डार तो वे आधार थमा जल झरना। निर्नेम नेम विन हमें जगत क्या करना, मैं ल्यूंगो सिरी अरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धांत च्यारका सरना, निर्नेम नेम विन हमें जगत क्या करना ॥९॥

चैत्र मरहटो—सखि चेतमें चिंता करे न कारज सरे शीलसे टरे कर्मको रेखा, मैंने शीलसे भीलकूं होता जगत गुरु देखा। सखि सीलसे सुलसां तिरी सु तारा फिरी खला चीकरी सिरी रघुनन्दन, अरु मिला सोल परताप पवनसे अंजन॥

झर्वटे—रावणने कुमति उपाराई, फिर गया विभीषण भाई।
छिनमें जा लंक ढहाई, कुछ भी नहीं पार बसाई॥

मरहटो—सीया सती अगनमें खडी, तों उस ही घडी वो शीतल पडी चढो जलधारा। खिल गए कंवल भये गगनमें जै जै कारा पद पूजे इन्द्र धनेन्द्र भई शीतेन्द्र सिरी जैनेन्द्रने ऐसा वरना। निर्नेम नेम विन हमें जगत क्या करना, मैं ल्यूंगी सोरी अरहन्त सिद्ध भगवन्त साध सिद्धांत न्यारका सरना॥१०॥

वैशाख मरहटो—सखी आई वशाखो भेख लई मैं देख ये ऊर धन रेख पड़े मेरे करमें, मेरा हुया जनम भयो उग्रसेनके घरमें। नहि लिखा करममें भोग पड़ा है जोग करो मत सोग जाऊं गिरनारी, है मातपिता अरु भ्रातसे छिमा हमारी॥
झर्वटे—मैं पुन्य प्रताप तुमारे, घर भोगे भोग अपारे।
जो विधके अंक हमारे, नहि टरे किसूके टार॥

मरहटो—मेरी सखी सहेली वीर न हो दलगीर धरो चित धीरमें क्षमा कराऊ, मैं कुलकूं तुमारे कबहु न दाग लगाऊं। बोली आज्ञा उठ खडी थी मंगल घडी वनमें जा पडी सुगुरुके चरना, निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना। मैं लूंगी सिरी अरहन्त सिद्ध भगवन्त साध सिद्धांत न्यारका सर्ना, निर्नेम नेम बिन हमें जगतका क्या करना॥११॥

जेठ मरहटो—अजि पडे जेठकी धूप खडे सब भूप वो कन्यारूप सती बडभागन, कर सिद्धनकूं परणाम किया जग त्यागन। अजि त्यागे सब सिंगार चूडियां तार कुण्डल भारके लई पिछोटी, अरु पहरके साडी श्वेत उतारी चोटी॥

सर्वटे—उन महाव्रत तप कीना, फिर अच्युतेन्द्र पद लीना। है धन्य सतीओंका जीना, नहि विषयनमें चित दीना॥

मरहटी—अजि त्रिया वेद मिटाया पाप कट गया पुन्य बढ़ गया बढ़ा पुरुषारथ, करे परम अरथ फल भोग रचै परमारथ। यो स्वर्ग सम्पदा मुक्ति जायगी मुक्ति जैनकी भक्तिमें निश्चै धरना, निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना। मैं ल्यूंगी सिरी अरहन्त सिद्ध भगवन्त साध सिद्धांत च्यारका सरना, निर्नेम नेम बिन हमें जगतका क्या करना ॥१२॥

साल संवत् कवि वंशनगर नाम सहित महातम बारह मासेका।
जो पढ़े इसे नरनार बढ़े परिवार सकल संसारमें महिमा पावे, सुन सतियन शील कथान बिघन मिट जावे। नहि रहें दुहागन दुखी होय सब सुखी मिटे वेरुखी करे पति आदर, वे होय जगतमें महासतिन बादर॥
झवंटे- मैं मानुष कुलमें आया, अरु जाति जती कहलाया। है कर्म बदेकी माया, बिन संजम जनम गंवाया॥

झड़ी—है दिल्ली नगर सुथा वतन है खास फालगुण मास अठांही आटे, हां उनके नित कल्याण जो लिख लिख बांटे। अजि विक्रम अब्द उनीसपे धर पैंतीस सिरी जगदीशका लेल्यौ शरणा, कहै दास नैनसुख दोषपै दृष्टि न धरना। मैं ल्यूंगी सिरी अरहन्त सिद्ध भगवन्त साध सिद्धांत च्यारका सरना. निर्नैम नेम बिन हमें जगत क्या करना ॥१३॥

इतिश्री राजमतीका बारहमासा समाप्तम्। इति २६वां अध्याय।

अथ श्री नेमिनाथ तथा राजमतीके संवादमें
उर्दू भाषामें बारामासा प्रारम्भः।

दोहा- नेमिनाथ वन्दूँ चरण हरण कुमत सु प्रकाश।
विघन हरण मंगल करन, जैजै मुक्ति निवास॥१॥
जिन मुख उद्भव शारदा, वाकवानि तुम नाम।
वाक सिद्ध मुझ दीजिये, पुनि पुनि करत प्रणाम॥२॥

जैसे भुजबल हीन नर, दुस्तर जलधि अगाध।
तिरा चहैं कैसे तिरैं, तोहि कृपा विन वाद ॥३॥

गीता छन्द—कर वाकवानी मिहरबानीमें कदम तेरे गहे।
मनशा हमारी पूर सत्री, नयनसुख ऐसे कहे ॥
आया शरन पडके चरन तुम दुख हरन जगमें कही।
कर दया बारामास राजुल नेमिके भाखूं सही ॥४॥

कथा प्रबन्ध-दोहा

शौरीपुर इक नगर था, समुद्रविजै थे राय।
नेमिनाथ पदा हुये, शिवदेवी थी माय ॥५॥

छन्द—थी मात सेवादेवी, जिनके गर्भसे पैदा हुवे।
उग्रसेन राजाकी सुताके साथ वे मांगे गये ॥
दिया रूप उनके पुन्य नैनसुखचन्द्र नैना मदभरे।
आंसूसे शरमिन्दा हुये हिरनोंने घर बनमें करे ॥६॥
सुन कण्ठकी आवाज कोयल कूकती वनमें फिरे।
इस सोचमें काली पडी अपमान लखि मनमें झुरे ॥
काली जुल्फ नागन लटा मुख चन्दपर गालिब हुई।
ज्यों राहु आवे चन्दपर फिर हारकर नीची नई ॥७॥
लचका कमर खाती चले मद केहरीका मद हरे।
तब हुई गैरत शेरकूं घर छोडकर बन बन फिरे ॥
नहीं देख सकते हाथकूं वेरग करके दुखमें दुने।
तब हुवे शरमिन्दे कमल दरयावमें डूबन लगे ॥८॥
एक समय छप्पन कोड़ जादों नेमिजीके संग भये।
राजुलमतीके ब्याहनेको भूप जूनागढ़ गये ॥
इस भांति देख बरातकूं नृप उग्रसेनजीने लिये।
हर जातके पंछी पशु बन बन्दीखानेमें दिये ॥९॥
वे जानवर लखि नेमजीकूं कौतुक करते भये।
आया रहम दूलाकूं तुरत छुड बन्धन वैरागी हुये ॥

धिक्कार है संसारकूं इस व्याहने कौतुग करे।
अब जांयगे मारे पशु यह कौन हत्या सिर धरे ॥१०॥
तोरनसे रथ फेरा तुरत दिया फंक कंगना तोड़के।
गिरनार गिरपर तप करें मुक्तिसे नेहा जोड़के॥
यह खबर दुलहनने सुनी रोवे सरासर दुख भरी।
राजुलमती था नाम उनका सोग सागरमें पड़ी ॥११॥
रोवन लगी नगरी सभी पक्षी दरख्तोंसे उड़े।
घर घर गली कूंचे महल सब रोवते नजरां पड़े॥
सर सब्ज मण्डपके गिरद गुलशन चमन जो आरहा।
सुन खबर सब कुमला गये ज्यों कम्मल आतिशने दहा ॥१२
राजुलमतीका दुख निरख चौमासने आवन किया।
रो रो बुलन्द आवाजसे असमानसे पानी चुवा॥
पानी चुवा आसमानसे धरतीने छातीपर लिया।
सुन समझ चातरलोग उनका नाम नदियां धर दिया ॥१३
अब राग अरु वैराग्यका झगड़ाजु मैं वरनन करूं।
सुनयो सभाके लोग अब आषाढ़ होता है शुरूं॥
श्री नेमजी गिरनार पर लवलीन ठाढ़े तप करें।
राजुलमती नीचे खडी आवाजसे बिनती करें ॥१४॥

आषाढ़में राजुल पुकार–दोहा

हे स्वामी यह साढ़ है शुरू हुवा चौमास।
प्यास भूख सबकी गई हमें न दीजे त्रास॥

छन्द—यह आवरे जिसहो रही नदियां चली सबजो खिली।
बादल तड़क बिजली कडक आसमानकी आंसू ढली॥
ढल ढल पड़े आंसू जिमिपर देख दुख धरती फटे।
दुख मेट बिपत समेट प्रभु आषाढ़ यों कैसे कटे॥

नेमिनाथोत्तर-दोहा

किन गिनतीमें साढ़ है चला जमाना जाय।
तरुवर कीसी कूंपला इक आवे इक जाय॥

छन्द-राजुल सुनूं इस खलकका अव्वल अखीर न पाईये।
तकदीरकी जंजीरमेंसे निकसना अब चाहिये॥
यह ख्वाबकीसी जिंदगानी पाप नर्क निसानियां।
यह वक्त है तपकरनका आषाढ़ बीता जानियां।१॥

श्रावणमें राजुल पुकार-दोहा

सावन तीज सुहावनी, तौ घर घर झूलें नार।
झूलेसे सूली भली, तुम बिन नेमि कुंवार॥

छन्द—तुम बिन पिया धडके हिया छाती तपे जियराज ले।
जल बल बदन लागा तपन मेरी पदमसे पानी बने॥
इक रैनके फटनेसे चकवा चकवी दोनूं दुख भरें।
बनजारे कीसी अगनि छोडी सिलगति अब क्या करें॥

नेमीनाथोत्तर-दोहा

राजुल ऐसी मत कहो, सहो करमकी रेख।
हमरा मेटा ना मिटै, जो विधनाके लेख॥

छन्द—जो लिख दिया तकदीरमें सुखदुःख सभी भुगतै बनें।
देखे जगतके खेल सब आखिर मगर देखे मरें॥
जैसे किसी दरयावके नजदीक पर दरखत खड़ा।
पलपलमें कटकट जड सभी दरयावने देखा पड़ा॥

भादोंमें राजुल पुकार-दोहा

भादों भरे तलाव सब, कंवल खिले जल बीच।
भंवर फिरे गुंजारते, एह मदनके बीच॥

छन्द—सींचे मदनके फिरे सोरे गुलोंका रस चाखने।
चकचक कन्हैया करे पीऊ पीऊ पपैया भाखने॥

वेरन हमारी तूतियां तूही तूही करती फिरे।
हुवा खतम भादों सनम् हम तुम बिन मरती फिरे॥

नेमीनाथोत्तर-दोहा

कौन किसीकूं मारता, कौन जिलावन हार।
मरना सबकूं एक दिन, तो अपनी अपनी बार॥

छन्द—मरना है सबकूं एक दिन जगमें सुथिर कोई नहीं।
तकदीरकी स्याही लगी सो अब तलक धोई नहीं॥
नरकों पडे दुःखडे भरे अब याद आते हैं हमें।
जब तीर छुट जाय हाथसे थामो तो फिर कैसे थमें॥

आसोजमें राजुल पुकारा-दोहा

अब असोजमें ज्यान यह, रही होट पर आय।
अटक रही तेरी आसमें, बिना हुकम नहीं जाय॥

छन्द—यह ज्यान जाती फटे छाती हाय पिय कैसे करूं।
तुम मगन अपने हालमें इस उमरमें दुखमें मरूं॥
मानिंद हिरनीके तडफती मोह हिरदेमें जगा।
मैं यह न जाने थी सनम दशवें जनम दोगे दगा॥

नेमीनाथोत्तर-दोहा

लगा दाग उतरे नहीं, दगा दगे सब कोय।
बडो दगा जमराजको, तो ना जाने कब होय॥

छन्द—जब कजा देगी दगा हमरा सगा कोई नहीं।
जिसमें रहूँ मैं दम् व दम् आखिर मेरी होवे नहीं॥
अब तोड घरगढ अकलसे चढ़ाऊं भला आराम है।
अज झूंपडी जलने लगी कूवा चिनै किस काम है॥

कार्तिकमें राजुल पुकारा-दोहा

कार्तिक घरघर रोशनी, रंग सुरंग मकान।
तुम बिनवे ऐसे लगे, तो जैसे होय मसान॥

छन्द—जैसे मसान मकान मुझकूं लगे हैं मेरे पिया।
ज्यों फिरे घनकी आसमें चातक तडफ सूकाहिया॥

अब लेख बर आवे खबर देके दरस मुझकूं जिवा।
दिखता नहिं संसारमें दुःखका शरीकी तुम बिवा॥

उत्तर दोहा।

धवीशरीकी सुखके, दुःखमें सगा न कोय।
लगे कालकी भाल जब, करे एकके दोय॥

छन्द—करनी है टुकडे बदनके शमसेर सिरपर कालकी।
खेंचे पड़ा जमराज दुश्मन दाव तकता मालकी॥
खतरा रहै हरदम हमें हरगिज नहीं टाला टलै।
गालिब है दुश्मन ज्यानका गाहक कहो कैसे खलै॥

मागशिरमें राजुलकी पुकार—दोहा

मागशिर मांग भरै सभी, तो मंगल गावे तार।
सोवे पतिके सेजपर, नये नये करे सिंगार॥

छन्द—करके सिंगार दिखावे पियाकूं देखकर होते खुशी।
मुख मोड़कर सोते पिया होके खफा नारी रुखी॥
यों पेश अशरत सब करे तुम दुःख भरो नेमि पिया।
फिर ही कभी तप कीजियो मागशिर नहीं तपनें लिया॥

उत्तर दोहा

इस उभारमें बावली, हमरा है नुकसान।
मोह मगनकी मूलमें, कजा हरेगी प्रान॥

छन्द—मारे है सबके मान इसने है बड़ी जालिम कजा।
तिहुंलोक मुलक फतै किया जगजीतके गाली बजा॥
है सूरमा बह जगतमें पकड़के देवे सजा।
पावेगा राज सुसुक्तिमें नरदेहका येही मजा॥

पोषमें राजुलकी पुकार–दोहा

पोष प्रेम तुम तजा, किया रंजका काम।
मुजे सरन तिहुं लोकमें, स्वामी तेरा नाम॥
छन्द – है नाम तेरा सब जगे जिस कदर जो तुमको भजे।
कोई कहे ठाकुर प्रभु शिवराम नाम सभी सजे॥
तू फील फिल फिलका इरादा सबतरा पुकारे।
भर आस मेरी यो हमें जो नाम विश्वंभर धरे॥

उत्तर दोहा

नाम नहीं इस जीवका, देखो सोच विचार।
सिरसैं लेकर पैर लग, ढूंढ हजारों बार॥
छन्द—अव्वल शिखा मुख नाक हल्ल सारे गले सीना कमर।
पहदा बदन अरु जांघ घुटनोंमें कदम दिलका जबर॥
हैं नाम इतने बदनके, खुद नामकी नहीं है खबर।
ढूंढा जगत सिर मारके, अब हारके कीना सबर॥

माहमें राजुलकी पुकार–दोहा

माघ सरद गालिव हुवा, बरफजमें सब ठौर।
रहे दरशत जाडके, भगे रिपी तप छोडके॥
छन्द – भागे रिपी तप छोडके, लहुकते फिरें घर खोजते।
बाजे कहें तप क्या लिया, आई विपत सुख मौजते॥
कहीं हो रही रोशन अगन कहीं संगसे गलगल पड़े।
यह हाल विपति कमाल तुम नंगे बदन गिरपर खड़े॥

दोहा – जिस दिन हम पैदा हुये, नंगे बिना विलास।
जिस दिन यह जामा छूटा, रहै न कोई पास॥
छन्द—आवे न कोई काम मेरे, मैं अकेला हूँ सदा।
कहीं छेद भेद नरक परवस फिरा बोझ लदा॥

जो देखकर औरत पराई इश्कमें होवे मुदा।
दुर्गति पडे दुखडे भरे अठ कर्म फल भोगे तदा॥

फागुणमें पुकार राजुल–दोहा

फागुण होरी कासमें, घर घर कुंकुम रंग।
तुमने रंग सुरंगसे, कर लिया रंग कुरंग॥

छन्द—कर लिया रंग कुरंग प्यारे सोच दिलमें क्या करी।
सुन शोर सब है बानुका बयावन बनमें दीक्षा धरी॥
तज दिये छप्पन कोडी जादौं और पलि सहर पुरी।
अब दोष किसकूं दीजिये मैं आन तेरे बस परी॥

उत्तर दोहा

सब बसमें तकदीरके, जिनकी जीवन जात।
चौरासी लक्ष जोनिमें, तनहा कोई न साथ॥

छन्द—जावे न कोई साथ मेरे, जब गया आदम निकल।
मादर पिदर फरजिन्द सब अफसोसमें होंगे विकल॥
पिछले करम ईंधन जलाकर मोहको फूंकू सकल।
फिर जगतमें आऊं नहीं, मुक्तिके सुख भोगूं अटल॥

चैत्रमें पुकार राजुलकी–दोहा

चैत महीना मद चढ़े बढ़े इश्ककी बेल।
फली कली फली भौंरे फिरें जोबन चढ़ें चमेल॥

छन्द—जोबन चढ़ा बन देखूं हर तरफ सब जंगल हुआ।
कहीं नाचते हैं मोर मैना कोयल देते दुआ॥
हो बलम मत कर फिकर मैंने तुम्हारा क्या किया।
सुनके अरज अमल रक्खें तुम बिन मेरा ज्वाला जिया॥

उत्तर-दोहा

धरम बिन ह्यानत जिया, मनुष जनम दुशवार।
कुल धन जोबन कामनी, मिले न अछे यार॥
छन्द—अब सब मिले हमकूं, भले देखे मजे हमने अजब।
मरते बखत बैठे रहैं यह है बड़ा भारी गजब॥
जब मर गये तब यों कहैं, फूंके तो भोजन खाय सब।
यह जान छोडे यार मैं लागा इश्क मुक्तिसे अब॥

वैशाख मासमें पुकार राजुल-दोहा

लगते मास वैशाखके, मुक्ति भली या नाथ।
यह सौ कण मेरी आंखमें, खटकत है दिनरात॥

हरिगीता छन्द

हमकूं कहां सुख कन्थ सौ कण मुकतिने जादू किया।
तुम लगे उसके इश्कमें, हमकूं दुहागन कर दिया॥
तुमसे अगर पहली मिलूं मुख पीटकर फाड़ू हिया।
ज्यों फेर घर खोवे नहीं भुगते तुरत अपना लिया॥

जवाब श्री नेमिनाथजीका-दोहा

अपनी करनी आप ही भुगती सदहा बार।
जो जो दुःख संसारमें, कहन न पाऊं पार॥

हरिगीता छन्द

पावे न दुखका पार जगमें, कालचक्र महाबली।
षटखण्डके चक्री मरे आधीश रघुपति हरि बली॥
जब मर गये ऐसे पुरुष मेरी तुमारी क्या चली।
अब ल्या खबर तू दुःखन कर आई घड़ी सुखकी भली॥

ज्येष्टमें राजुलकी पुकार-दोहा

जेठ धूप अति सैपड़े, सूके सरवर नीर।
जिमी तपें लूवां चलें, लगें अगनके तीर।॥

छन्द—लागें अगनके तीर तेरा तन बदन कोमल कली।
पड़ गये छाले पैर में सूका बदन रौनक टली॥
हो सजन मत कर तजन देके दरस मुझकूं छली।
विधिना लिखी सो होचुकी अब काढ पिया सुखकी गली॥

नेमिनाथोत्तर—दोहा

गली भली जिन धर्ममें, हैंयां चौपद सार।
इस बिन मुक्ति न पाईये, जपो मन्त्र नवकार॥

छन्द—पावै जगतका पार वोही समझ कारज करें, यह सुन सजनका बचन राजुल सोच यों मनमें धरें। कीजे जतन तजिये वतन यह नर तनका हक भला, जावोरी सखी मत हो दुखी रहियो सुखी सजनी भला॥१३॥ माता पिता दुःख मत करो तुमने जनम मुझकूं दिया, करमोंका साथी कौन है उत्तम छिमा सबसे किया। सब तोड़ गेरे हार कंगन शिर तिलक मोतीलडी, यह हाल दुलहनका निरख गश खाय माता पडी॥१४॥ रोवें सुहेली संगकी हाहाकार करें दुखमें भरी, गुलशन चमन कुमला गये राजुल सती दीक्षा धरी। इस भांति राजुल नेमके संग होवै रागन बन बसी। कुर्बान उसके शीलकूं कीनी नहीं जगतमें हंसी॥१५॥

अब सुनो सब नरनार फल अंजाम इसका यह हुआ।
प्रभु नेमि पहुंचे मुक्तिमें राजुल सुरग अच्युत लिया॥
अब सुरगसे लेगी जनम होके पुरुष फिर तप करै।
धर ध्यान परम कृपान पूरण ब्रह्मकी पदवी धरै॥१६॥
है वतन दिल्लीके बने जमना किनारे प्यारा।
मथमें रहै भूधर यती बन नेम जैनीका घरा॥

उसने मुझे फर जिद्‌केमां निज खुद चेला करा करके।
रहम बक साफ हम मेरा नाम नैनानन्द धरा ॥१७॥
मैने जुबा रद मास राजुल नेमिका वर्णन किया।
क्यों ले चले चंदी कुणक मानोंकि लाब समें किया॥
यह साल अब दर हाल है उन्नीससे सोला सही।
बैशाख लगते अष्टमी मनकी गरज पूरी हुई ॥१८॥

दोहा—नगर साम पतमें बसे सेठ सुखादीराम।
तिनके सुत सुन्दर भयो सुगनचन्द गुण धाम ॥१९॥
तिनके प्राण नतें अधिक प्यारो सुत गुणवंत।
धरो नाम पण्डित जना चन्दनलाल सुसंत ॥२०॥
तासु हेत पुस्तक लिखी नैनानन्द सुधार।
श्री जिनेश गुण गाइयो भक्ति सहित नर नार ॥२१॥

इतिश्री नेमिराजमती सतीका बारह मासा उर्दबाल्य अवस्थाका बनाया हुवा सम्पूर्णम् ॥

इति सप्तविंशोऽध्याय समाप्तम् ॥
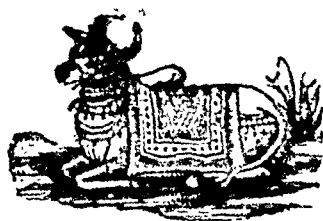
अध्याय अठावीसवां

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

अथ—यति नयनानन्द कवि कृत द्वादशानुप्रेक्षा भाषा लिख्यते तत्रादौ सूचना वचनिका ॥

प्रगट हो कि इस रचनामें छह भावनाओंका स्वरूप दरसा बना था, और वे प्रत्येक भावनाओंके प्रबन्ध बड़े बड़े हैं और सभाओंमें बतौर शास्त्रोपदेशके बांचनेका है और सामायक प्रतिक्रमणके तौरपर भव्य जीवोंके कल्याणार्थ नित्य ही स्मरण चिन्तन करनेके योग्य हैं। सो प्रत्येक भावनाकूं संवत मितिकी साथ पूरी करते चले गये हैं। सबको एक ही काल पढ़नेकी आवश्यकता नहीं है। पढ़नेवालोंकी इच्छा है चाहें जौनसी भावनाकूं याद करो पढ़ो पढ़ाओ बहुत कहने करि कहा। यह द्वादशानुप्रेक्षा क्या है द्वादशांग शास्त्रका सार है। कोई महान पुरुष ही इस अमृतको पीवेंगे। तस्मात् पिछली षट भावना चौपाई बन्ध छन्द दोहे बन्ध रचा है।

अन्तमें धर्म भावना फिर खयाल बन्ध रचा है, सो सब ही निज निज विषयकूं लिये तत्वामृत दर्पण नेपमाला तुल्य हैं। चाहिये कि साधर्मीजन इनकूं आदर पूर्वक पढें और सुने सुनावें स्वपर उपकार करें। लिखें लिखावें जहां तहां नकल कराय फैलाय देंगे तो कवि तुल्य पुण्यके भागी होंगे। इति ॥

आगे कथन रत्नकरण्ड श्रावकाचारके अनुसार है—

ॐ नमः सिद्धेभ्यः। नाम स्थापना द्रव्यभावतस्तन्न्यासः।

इस आज्ञा सूत्रानुसार कहिताहैं विवक्षा यहहै कि किसी पदार्थका नाम धरना चाहिये पीछे उसका विचार

करेंगे। तस्मात् भावना भावनके योग्य पदार्थोंका नाम करनेकूं मंगलाचरण पूर्वक भूमिका बांधे हैं तिसमें लोक मूलकी नाम स्थापना करे हैं तिसमें एक दोहा कहा एक चौपई कहि कहिकर एक एक चौक ख्यालनमें मरहटोका है ऐसे च्यार चौक लोक मूलकी स्थापनामें भूमिका कहे हैं।

अथ मंगलाचरण दोहा

सदा सत्यवक्ता नमूं, वस्तु प्रकाशन हार।
कहूं भावना द्वादशी, द्वादशांगको सार ॥१॥

चौपई—आगम रतनकरण्ड संभारा, तो मणि निले परम उपगारा। सोहम चुन चुन माल बनाई, पहरो सकल भव्य सुखदाई ॥२॥

ख्याल मरहटी लंगडी—भरम्यों मैं चिरकाल जगतमें निज अनुभूति न पहचानी बिना भावना। भई पर ममता मुझको दुखदानी ॥टेक॥

अहो कौनमें कौन ये पुद्गल कौन जगतका कर्तारा, जड चेतनमें परस्पर किसने यह झगडा ॥१॥ यह विभ्रमथा वर्तमान सो आप्त देवने निर्वारा, जिन प्रवचनमें कह्या है स्वयं सिद्ध सब संसारा ॥२॥ यह यह जगत अजन्मा निश्चल सदा सिंधुकी ज्यों धारा, यहैं अखण्डित जनम अरु मरण है ह्यां बारंबारा ॥३॥ उठे लहर लय होय सिंधुमें सिंधु सदा थिरज्यों प्रानी विना भावना भई पर ममता मुजको दुःखदानी ॥४॥ भरम्यों मैं चिरकाल जगतमें निज अनुभूति न पहचानी, बिना भावना भई पर ममता० ॥२॥

चौक दूजा दोहा

मिथ्या व्रत जोगते भये बिपर्यय भाव।

चौपाई—ज्यों चिरमूढ़ धतूरा खावे होय दरब कछु कनक बनावे, त्यों हम मोह विवस भये बोरा, सरधी जगथिति और हि औरा ॥२॥

ख्याल मरहटी लंगड़ी—षटदर्वन भरपूर सदा हीन नहि कोई कर्ताहर्तारा, सत असत्य ज्यूं सरक्त हैं दो त्यों ए षट न्यारा ॥१॥ व्यय उत्पत्ति ध्रौव्य गुण युक्तं सत लक्षण सम्राधारा, तदपि अमिल हैं। जातिगुण दरब छहोंका है न्यारा ॥२॥ धर्म अधर्म गगन अरु काल जीवरु पुद्गल विस्तारा, किसते उपजे कौन हैं किसका को है कि रखारा। ३॥ मैं चेतन जड़ पांच अजी है सत्य जिनेश्वरकी वानी बिना भावना। भई ममता मुझको दुःखदानी ॥ भरम्यो० ॥ ४ ॥

चौक तीजा दोहा

सुख दुःख वेदे आतमा, पंच अनातम भाव।
इनको कछु अटक्यो नहीं, अटकी हमरी नाव ॥१॥

चौपई—फंस रहे हम दल दलके मांही, जग जंजाल छूट टकी नाहीं। जबलगमें इन मांह बसा हूँ तबलग संसारी कहलाऊं ॥ २ ॥

ख्याल लंगड़ी मरहटी—जन्म व रक्त मई लोक नहीं है खटका है खटपट सारा, हो रहे आकुल आतमा अनन्त नहि बारंबारा ॥१॥ क्रोधमान छल लोभ कर्ममें पड़े नहीं कछु आधारा। क्यों कर निकसू होय अब क्यों कर मेरा निस्तारा ॥२॥ जिस मारग अरहन्त गये शिवद्वीप स्वपरका रज सारा। तज गये मोहन उसीमें चढ़ूं तो होगा उद्धारा ॥३॥ मैं मोहन मोहणीयां सुरते मैं सतरैया सुखदानी, बिना भावना भई पर ममता मुझको है दुःखदानी। भरम्यो मैं० ॥४॥

चौथा चौक दोहा

रूपे कोड़ो चाकचन, जीत्यों काल अनादि।
नहिं चेतूं तो फिर फसूं, और संकल्पकवाद ॥१॥

चौपई—वीतराग सर्वज्ञ बताया, पंच प्रोहण सोहम पाया। तातों में अपनी खेप चढाऊं, क्यों नहिं परम अरम अरथ फल पाऊं ॥२॥

ख्याल लंगडी मरहटी—धर्मध्यान संस्थान विचेमें आ मेरे चेतन प्यारा, धर ले समता अरे मत फिरे तूं अब मारा-मारा ॥३॥ पंच परावर्तन ते कीने करकर जनम मरन हारा। कारागृहमें सिंह हो पड़े तो कारज सारा ॥४॥ प्रगटो पड़ चेतो अब धीर नय ही सुगुरुने उचारा, वस्तु विचारो तो भावो परम भावना अब चारा ॥५॥ कहे नैनसुखदास जगतमें खाक भरतेरीमें छानी, बिना भावना भई पर ममता मुझको दुःखदानी ॥ मरज्यो० ॥६॥

अथ प्रथम अनित्यानु भावना दोहा

माता है वैराग्यकी, सब जीवन हितकार।
परमारथ पथ दीपका, नमूं भावना सार ॥१॥

चौपई—प्रथम अनित्य भावना भाऊं, सकल सृष्टिसे दृष्टि हटाऊं। चहुं गतिमें यह जगत अखाडा, क्षिण भंगुर है धुंध पसारा ॥२॥

चाल झडी बन्ध बारह मासे रुकमणीजीकी, चौक पहला। यह झडी हर जगह चौकके अन्तमें आवेगी।

अजि मैं चेतन चिद्रुप सदानन्द रूप जगत दुःखकूं यह मैं क्या करना, अब लिया सिद्ध परमेष्टि तुमारा शरना ॥टेक॥
सुन जीव अरे जडमती भ्रम्या चहूं गती रंक भूपती सबमें हलचल है। यहां सुरनर नारक तिर्यंचमें कलकल है ॥१॥

धन जोबन विखें दांत क्यों घिसें हाडकूं चसे तालवा फाटे तूं क्यों भ्रम भारथ हेत रचा नखा चाटे ॥८॥

झर्वटे—सब सगे संगाती प्यारे, हो आंयगे तुमसे न्यारे। ज्यों सूके तरवर डारे, उड जाय पन्छी रव्व चारे।

छडी—ज्यों विना नीर सुनबीर न आवे तीर पड़ूबट गीर तजे सबने हा, बिन स्वारथ पूछे कौन थके जब देहा ॥१॥ है नदीनाव संजोग कुटुम्बके लोग करमके योगसे हो रहे भेले, दिन दोयकके मेहमान हैं फिर अकेले ॥२॥

झर्वटे—निज निज करनी अनुसारे, चहुँ गतिके पन्थ सिधारे। सब थक रहे थाभन हारे, पर हो गये हमसे न्यारे ॥ ३ ॥

छडी—माटीमें मिलेगी देह होयगी खेह इसीके नेह पका दुख भरना। अब लिया सिद्ध परमेष्टि तुम्हारा शरना ॥१॥ अजि मैं चेतन चिद्रुप सदानन्द रूप जगत दुख कूप हमें क्या करना। अब लिया सिद्ध परमेष्टि तुमारा शरना ॥२॥

चौक दूजा छडी—अरे जीव उदय हो कष्ट भोग हो नष्ट इन्द्रिया भ्रष्ट बिखर जब जावें। होंगे अनन्त परमाणु पता नहि पावे।१॥ कोई देगा जमीमें दाब कोई ले चाब रहै नहि ताब जु फेर जिलावे। नहि इन्द्रचन्द्र धरणेन्द्रकी पार बसावे॥

झर्वटे—क्या कोट किले रखवारे, क्या मातपिता क्या प्यारे। सब यन्त्रमन्त्र करि हारे, वेदों सिर दे मारे।

छडी—हों नष्ट धाम अरु गाम पड़े रहैं काम रहै नहि नाम सब जावे। तब जाति पांति कुल गोतकी खोहि न पावे ॥३॥ सब मिटें अंक अरु वंक तथा आतंक नहिं कछु शंक रोवते दीखें। संपतिमें गावें गीत विपतमें सीखें ॥४॥

झवंट—किस किसकी कहूं कहानी, है जगद्‌जुदा-जुदा पानी। इसकी ममता दुख दानी, पत्थरकी नाव समानी।

झड़ी—कहै नैनानन्द सुन यार तू है सिरकार सकल संसार अनित्य समझना। अब लिया सिद्ध परमेष्टि तुमारा शरना ॥६॥ अजि मैं चेतन चिद्रूप सदा नन्दरूप जगत दुख कूप हमें क्या करना। अब लिया सिद्ध परमेष्टि तुमारा शरना ॥७॥

अथ तृतिय असरणानुप्रेक्षा लिख्यते।

दोहा—दर्शन ज्ञान चरित्र तप, तथा धरम दश सार।
हे संसारी ले शरण, करो शुद्ध व्यवहार ॥१॥

चौपाई—सम्यक उत्तम पद अनुसार, लीजे शरण शुद्ध व्यवहार। निश्चै आत्मशरण है शरण, इनसें इतर शरण नहिं वरणा ॥२॥

दोहा—वरण अशरण भावना, परमागम अनुसार।
जा कूं भा भगवन भये, जगत जलधिसें पार ॥३॥

झड़ी—हे आतम तजि पर आश न हो पर दास तू शक्ति प्रकाश क्यों निज पति खोई। तू है अशरण त्रिभुवनमें शरण न कोई ॥४॥ तू खट तन घर घर मरा ढूंढ़ता फिरा किहै कोई धरा सकल दुख दानी। भवमें वसि करि सब करल्यू मनकी मानी ॥५॥

कवॅट—नहिं भये मनोरथ पूरे सब रह गये काम अधूरे।
इन्द्रादि धनुर्द्धर सूरे, जमराजने आ चकचूरे ॥६॥

झड़ी—भये तीर्थंकर केवली तिनकी नहिं चली मौत नहिं टली तो अब क्या करिये। जिस पन्थ चले भगवन्त वही आचरिये ॥७॥ सब तजिके मरणामर्ण धर्मकी शर्णसे वश करि कर्ण कुमर्ण मिटाले। करि संवर सम्यक मर्णसे बन्ध छुटाले ॥८॥

झर्वटें—कर अशुभ निर्जरा सारी चल शुभ प्रवृत्ति अनुसारी।
शुभ अशुभको तज इकवारी, हो शुद्ध वरो शिवनारी ॥९॥

झडी—मैं अतुल चतुष्टयवान कहां भगवान किया नहि ज्ञान हुवा नहि तरना। अब लिया सिद्ध परमेष्टि तुमारा शरना ॥१०॥ अजि मैं चेतन चिद्रूप चिदानन्द रूप जगत दुख कूप हमें क्या करना ॥अब लिया०॥

अथ संसार स्वरूप तद्‌जन्य दुःख चिंतवन तृतीय भावना कथन।

दोहा—करत चतुर्गतिमें भ्रमण, बीत्यो काल अनन्त।
सो संसार विचार करि, करिये शुद्ध अनंत ॥१॥

चौपाई—रे मनमूढ विकल ना धरी, समझावें तो हि गुरु उपगारी। किये शुभाशुभ कारज सारे स्वपर स्वरूप लख्यो नहि प्यारे ॥२॥

दोहा—काल अनादि निगोद वशि, निकस भ्रम्यों जगजाल।
सो उच्छिष्ट अनन्तभव, मत भखि मूढ़ छगाल ॥३॥

झडी—मैं उगली नित्य निगोद उदय उपयोग स्वबलके योग उछल जग आया, करि करि भावाश्रव चहुँगतिमें दुख पाया। कभि प्रथिवीकी धर देह कभी भया मेह जगतकी खेहमें तडपड सूका, हो अग्नि जलाये जन्तु जगतकूं फूंका ॥

झर्वटें—हो पवन फिरा भन्नाता, दुनियामें खाक उडाता।
पथरोंमें शिर टकराता, अन्दरमें शोर मचाता ॥

झडी—कभी भयावनास्पति स्थूल सधारन फूल कन्द फल मूल साग अरुपता, कभी कली फली भया गलित काटमें छता। कभि कृमि पिपील भृंगार कभी भया स्यार कभी ऊंगाड कभी भया भैंसा, हो खरखरा इरवायें कमल अलम पाया जैसा ॥

झर्वटें—हो सैनी अंकुश खाये, चला विष विष विखने चलाये।
अमनस्कनमें दुख पाये, जिन आज्ञा वीर बतावे ॥

छड़ी—लिया जन्म हीन कुल नीच करम किये नीच मूपने खींच खींच गए डारे, कभी हुवा असुर महानीच नारकी मारे। मैं खटकाया मैं रूंध्या टांकियो लुचाऊंध्या अरु मुंधा खिंच्या नेपनमें, मैं तपि तपाय छिति विछिके मिच्या पेचनमें ॥

झर्वट—मैं अपल अनन्त चलाये, जल थल वन घन भ्रमलाये।
अरु वैतरणीमें न्हाये, मलमूत्रमें गोते खाये॥

छड़ी—मुझे दिया किसीने छौंक किसीने चौंक किसीने झोक भाड़में टेल्या, मुझे चीर विदार सुधारि तल्या अरु पेल्या। कसके संग फसिके फल्या पन्थमें पिस्या मधुमें फंस्या लथा फिरया वनमें, हित अनहित देव धरम न पिछाने मनमें॥

झर्वट—भया अन्ध पंगु अरु लुंजा, भया गुंगवधिर अरु खंजा।
भया नारि नपुंसक वंझा, लगाजनि दरु न कटा गंजा॥

छड़ी—मैं परसम्पति लखि झुरया कुगतिमें परया इता कुछ रल्या न ठीक ठिकाना, धारी अनन्त पर्याय भरे दुख नाना। धिग धिग संसार असार जहां गति च्यार अनन्तीवार पड़ा दुख भरना, अब लिया सिद्ध परमेष्टि तुमारा शरणा॥३॥

अथ जीव सदीव अकेला है। ऐसी एकत्व दशा चितवन हेतोः।

चौथी एकत्वभावना लिख्यते।

दोहा—भाले चौथी भावना, अरे जीव एकत्व।
मत थापे बहु वस्तुमें, तू अपना वहुत्व॥१॥

चौपई—जनमत जीव अकेलो हि आवै, मरत शरीर पड्यो सुख पावै; सब सम्पत जाय अकेला, बिछुर जाय सब बन्धव मेला॥२॥

दोहा—तीन लोक तिऊं कालमें, ज्ञान दृष्टि कर जोय।
धर्म संगाती जीवका, और न साथी कोय॥३॥

झड़ी—अरे इक इक भव मंझार, अनन्ती वार किये सब च्यार अठारा नाते। तैं लिया दिया किया सब कुछ पार बसाते॥ जब मरन किसीका आया तू पचि पचि धाया तेरी सब माया काम नहीं आई। तुमरा तो झांक; किसकी पार बसाई॥

कर्वटें—जब सुगति कुगति जा भोगी, भया इष्ट अनिष्ट संयोगी।
कांप ऊंचा कौन निथोगी, तेरे बदले विपता भोगी॥

झड़ी—तू दुर्गतिमें जा पड्या, सागरों सड्या मिल्या जिन घड्या महा दुःख दीने। तहां बचन अगोचर दुःख सहे इस जीने, तेरे सप्त व्यसनके यार जु करते प्यार नरकमें डार, पकर गये रस्ता। सब भज गये मोर वजीर बांधकरि बस्ता॥

सर्वटें—कोई पास वकील न आया, जिनकू मत कानून सिखाया।
तैं पराधीन दुख पाया, नहीं किनहूँ आन छुड़ाया॥

झड़ी—तेरे गये कटक सब सटक माल गये गटक रहे तुम अटक कठिन भया तरना। अब लिया सिद्ध परमेष्ठी तुमारा शरना॥ अजि मैं चेतन चि० ॥४॥

अथ जीव सबतें अन्य सब पदार्थ जीवतें अन्य ऐसा परत्व अपरत्व विचार करनेकूं अन्यत्व नाम पांचवीं भावना लिख्यते—

दोहा—निजतें अन्य विचार सब, सबतें अन्य निजरत्व।
भाय भावना पंचमी, अरे जीव अन्यत्व ॥१॥

चौपाई—ज्यों तिल तेल घी व दधि केरा, बहि पंच इक क्षेत्र बसेरा। यद्यपि एकमेक प्रतिभासे, तदपि जतन करि सुबुधि निकासे ॥२॥

दोहा—त्यों जड़ चेतन पर एलखि, सुरस निकस भये भिन्न।
ते शिव जाय बसा गये, और अन्य सब अन्य ॥३॥

छड़ी—श्रत परमें आप गिनें करें जिन मनं न कर्त्ता बनें अरे मन भाई। कर्त्ता अरु कर्मका क्रिया नरक ले जाई॥ तुम त्रिविध कर्मसे भिन्न सघन तैं अन्य उपाय न अन्य भावना भा लो, तजि सब परतत्व अपरत्वमें पिंड छुड़ालयो ॥३॥

सवैटे—अब सुन ले इसको भाया, मैं कहूँ अर्थ सुनाया।
तें जिस तनमें किया वास, यह जड़ चेतन भाषा॥

छड़ी—जो अन्य वस्तुको बात कहा सुन भ्रात जगत विख्यात पराई माया, क्यों मेरी मेरी करें किसने वह-काया। अरे कभी तूं हिंसा करे असत उचरे तू परधन हरे छले परनारी, क्यों बांधे पोट परिग्रह पापाचारी॥

सवैटे—यदि कहै तू जग मेरा, कहूँ क्या स्वरूप है तेरा।
यदि कहै मुझे नहीं घेरा, तो है तेरे रविमें अन्धेरा॥

छड़ो—जो है उभरनका चाव, परत्व हटाव स्वभावमें आव; निजत्व सुमरना, अब लिया सिद्ध परमेष्ठी तुमारा शरणा ॥४॥

अथ शरीर अपवित्र है इसके संग कर आत्म अपवित्र हो रहे हैं ऐसे शरीरका ममत्व छुड़ावनेकूं अशुच्यानुप्रेक्षा नाम छठी भावना प्रारम्भ।

दोहा—अशुचि अंगके संग करि, अशुचि भये अज्ञान।
सो अशुच्यता खोधिये, ज्यों सोधो भगवान ॥१॥

चौपाई—रे बहि रात मघरमें आज, निजमांहि समाजा।
परमातम गुण असल चितारो, फिर स्वातमकी नकल उतारो ॥२॥

दोहा—सोधत सोधत आतमा, हो परमातम अरहन्त रूप।
शुद्ध होय जगजाल ते, निकस होय शिव भूप ॥३॥

छड़ी—हैं परमातम अरहन्त सिद्ध भगवन्त परम अकलंक सकल निष्कल दो, द्रव्यार्थिक नय करि तद्वत निज लखि

इक। जो दुर्ध्यानकी तज दे विकल, अगर है नकल असल अरु नकलको दिलमें रचा ले। सांचेमें भर सांचेसे जांच जचा ले॥

झर्वट—अब बात घनी मत खो दो, तुम इन्द्रि पांच निरोधो।
पट मास हृदयमें सोधो, हां निश्चे प्रापति दो दो॥५॥

झडी—तू कर ले आत्म सरूप सेवा शिव भूपसे आतम रूपके गुण संवपण, हो निश्चे परमातम आतमका दर्शन। है समयसारमें साख तू निश्चे राख कहे कोई लाख अरे जगवासी, कहें कुन्दकुन्द हो जा पट मास उदासी॥

झर्वट—बिन ज्ञान ध्यान तन तेरा, है चंडालनका डेरा।
जिसने भीतरसे हेरा, उन्ह थू थू कर मुंह फेरा॥

झडी—मलमूत मासका घडा रातदिन खडा तुझे नित पडा उठा करना, अब लिया सिद्ध परमेष्टि तुमारा शरणा॥६॥

अथ कर्माश्रवके कारणोंका मूल कारण मिथ्याभाव है और मिथ्याभावके घातक प्रगट दोष पचीस और सात प्रकृति हैं तिनका विचार करनेकूं आश्रव नाम भावना सतमी लिख्यते।

दोहा—भाऊं आश्रव भावना, जो भावें भगवान।
सो भावो अज्ञान तजि, ज्यों पावो विज्ञान॥१॥
जहां त्रियोगकी चपलता, तहां शुभाशुभ होय।
कर्मनका आस्रव है, बन्ध बढ़ावे सोय॥२॥
जिन कारन जारी रहै, कर्माश्रवको स्रोत।
तिनको कारण मूल है, मिथ्या भाव उद्योत॥३॥

चौपाई—वस्तु दोष मुख्य एक हमारा, मिथ्या भाव रु आश्रव प्यारा। द्रव्यार्थिक नय करि जब जाती, दोऊ हैं चेतनके छाती॥४॥ युगपत ही उतपति जिन गाई, वचन द्वार वरनें नहि जाई। क्रमवर्ती है वचन हमारा, छद्मस्थ

जिन गोचर न्यारा ॥५॥ तिनको मनन करे मुनि ज्ञानी, सो आश्रव भावना बखानी। भावें मुनि आगम अनुकूला, त्यों तू भाव फिरे मत भूला ॥६॥

दोहा—भावनमें चितवन करो, आश्रव मूल मिथ्यात।
मिथ्या पोषक भाव फिर, दूं ढ तजो इक साथ ॥७॥

ख्याल रंगत लंगड़ी।

लब्धिसार अनुसार अरे, मन बात मेरी सुनना चाहिये।
मिथ्या पोषक दोष हैं, पचिससो सुनना चाहिये ॥टेक॥
सम्यकके हैं शत्रु मूढ त्रिक, तजि वसु मद निर्मद विचारो।
शंकादि कमल, आठ तज खट अनायतनमें नचरो ॥१॥
तीन प्रकृति दर्शन मोहनिकी, मिथ्या तन हैं तिनसे डरो।
करे मिथ्याती, बिगाडें शुद्ध दृष्टि सो वे गहरो ॥२॥
पहली है मिथ्यात दूसरी सम्यक मिथ्या तन बचरो।
तथा तीसरी, कही सम्यक महामलकी पद रो ॥३॥
पुनि चतुष्क चारित्र मोहकी, अनन्तानुबन्धी चतुरो।
क्रोध मान छल लोभ अरु विघ्नकरणहारी है नरो ॥४॥
दोष पचीस लगा इनके, संग प्रथम नाक सबकी कतरो।
मूंडि मूंडिके, चढा धो खरपे कुछ संसै न करो ॥५॥
काला मुख इनका करके जगत निकला ध्यान धरो।
उपसम सम्यक, तथा क्षम उपशम क्षायक पन्थ परो ॥६॥
अरे जीव मिथ्याभाव अब तज निज गुन चुन्ना चहिये।
मिथ्यापोषक, दोष है पचिससो सुनना चहिये ॥७॥
लब्धिसार अनुसार अरे मन बात मेरी सुनना चहिये।
मिथ्यापोषक, दोष हौं पंचिससो सुनना चहिये ॥८॥ इति।

श्री आश्रवनाम सातमी भावना समाप्तम् ॥७॥

अथ कर्माश्रवके रोकनेका उपायरूप संवरनामा अष्टमी भावना लिख्यते।

दोहा—अब सुनि अष्टम भावना, संवर धर्म निधान।
भाकरि आश्रव स्रोतमें, ठोको हट समान॥१॥

चौपाई—अरे जीव करि अशुभ निवृत्ति फिर तू करि शुभ मांहि प्रवृत्ति। फेर शुभाशुभ कर्म निकरो, सो संवर भगवान उचार्यो॥२॥

दोहा - तहां भाव ऐसे धरो, कर्म वेदनी जन्य।
पुन्य पाप दो पुत्र है, मैं अन्यठ ए अन्य॥३॥

चौपाई—मैं पर सुत निज सुत सम पोखे, इन दुष्टन मोहि दिये बहु धोखे। करि करि पाप एकठे पाल्या, तिन मोहि अटक बन्धमें डाल्या।४। सागरान जल थल निपार्यो, नाना भांति कष्ट दे मार्यो। ताडन तापन सूल दिखाए। छेदिभेदि दुर्वचन सुनाए॥५॥

वचन अगोचर जन दुख दीने, परवश होय सहे सब जीने। च्यार लाख गति नर्क मंझारा, भुगताई जब तब बहु दारा॥६॥ फेर मोहवशमें उर लायो, इन मोहि पशुगतिमें पटक्यो। बासठि लाख कुगति दिखलाई खाई पाप कपूत कमाई॥७॥ थिति पूरि करि जब तब आयो, पुन्य सपूत जानि हरखायो। तिन चौदह लख मनु गति मूंक्यो, दे दे दुख नानाविधि कूंक्यो॥८॥ अन्ध पंगु संढादि अनाथा, गूंगा बधिर हरि सपरस नाथा। बालवृद्धन करि दीना, इष्ट अनिष्ट मिलाप सु कीना॥९॥ सप्त विसनकरि कियो कलंकी, नारि नपुंसक अधम अशंकी। जोगीभोगी मूरख ग्यानी, रावरंक सेवक अभिमानी॥१०॥

जपीतपी दाता जगनामी, कुगुरु कुदेव कुमत अनुरागी। अनतम ग्रीवक लौ पहुँचायो, होन अधिक सुख दे ललचायो॥११॥

बार अनन्त अनन्त घनेरे, उगार छाक सुरगतिके फेरे। करचारा चण्डाल मजाके, तिन कहां लग तिनके थाके ॥१२॥ चौरासीलख ज्यों न मनहारा, दोनों मिल संकटमें डारा। पंच परावर्तन करचारा, हा हा कर्म बना घनचारा ॥१३॥ बिना दोष हमकूं दुख दीन्यों, कहो हम इनको का छीन्यों। सुख नाश हम कीन्ह गुंदण, नित्य निगोद पटकि दुख धारा ॥१४।

दोहा—अति अबध्यकूं बध कियो, बिना दोष दुख कीन।
हा हा ए विधिनि दई, हतें दृष्टि करि दीन ॥१५॥

चौपाई—मैं बालक पागनल परमादी, अपर्याप्त लघु जनम अनादी। द्रव्य करम बल अबल बिचारा, अति अशक्त था जन हमारा ॥१६॥

अथ जीव निज स्वभाव वर्णन प्रारम्भ।

प्रति स्वास अनम तारा धराय, जो विपति सही कछु कहि न जाय। अक्षर सु भाव थो मोर पास, दुख सह्यो तदपि न भयो विनास ॥१७॥ अक्षरको अक्षः अर्थ जान, है नाम भेद पर सक मान। है जीवतत्व अक्षर अनूप, सो चेतन केवल ज्ञानरूप परिपूरण अक्षय लब्धिवान ॥१८॥ सो तो अर्हतरु सिद्ध जान, क्षयरूप सकल संसार बीच। सब जन्तु रहे फंसि कर्म कीच ॥१९॥ लगि रहे घातिया कर्म साथ, तिन कीनों चेतन ज्ञान घात। सबते लघु ज्ञान दशा हमार, कछु कियो न कर्मनको बिगार ॥२०॥ जिसके सुभाव जो होय मीत, सो नष्ट होय नहि जगत रीत। मोहि काललब्धि दीनों उछार, उपयोगी लक्षणके अधार ॥२१॥

अथ द्रव्यकर्म दोष चितवन भाव कर्मनों कर्मबन्धनमें डार आश्रव उपजाना।

चौपाई—आय परयो व्यवहार मझारे, इष्ट अनिष्ट पदार्थ निहारे। जो नौ कर्म कहे जिनवाणी, तिने देखि भये भाव अज्ञानी ॥२२॥ सो सब भाव कर्म कहलाए, इन तीनो सुभ असुभ कराए। तातें पुन्य पाप किये भारी, तिन तें भए दो आश्रव जानी ॥२३॥

दोहा—यदपि शुभा सुभ मन वचन काय जोग परजाय।
मैं लीजयों मिथ्यात वश, आश्रव द्वार बनाय ॥२४॥

चौपई—तदपि जुगल वेदनीके आए, इन द्रष्टन आश्रव करवाए। तातें आश्रव आड लगाऊं, संवरकी द्रिढ हाट अराऊं ॥२५॥ तोए कर्म रुके दुःखदाता। धर चारित्र लहूं सुखमाता मैं चेतन ए जड अधाकारी, मेरी इनकी कईसी यारी ॥२६॥ सिद्ध समान सरूप हमारा, नौकार अक्षर अनुसारा। मैं आनन्द मूर्ति नित ज्ञानोए आकुलता सहित अज्ञानी ॥२७॥ मैं तो अजर अमर पदधारी, एज्ञ स्मरण सहित सविकारी। मे करुणामय परम पुनीती, ए हिंसक अति अधम अनीति ॥२८॥ इत्यादिक परणाम करि, दर्शन ज्ञान चरित्र। पाले ते टाले सकल, आश्रव होय पवित्र ॥२९॥ एक घड़ी आधी घड़ी, रे जिया ताजि सब द्वन्द्व। संवर भावना भाईये, बंधे न ज्यों फिर बन्ध ॥३०॥

नैन चैन जिन बैन सुनि, बाल बुद्धि अनुसार। कथन कांधला नगरमें, कियो स्वपर हितकार ॥३१॥

पद्धडी—दो सहस्र माहि पचपन विचारी, सित माघ दुवमी शुकवार। हम भाए संवर भाव दोहि, यादीमें मन लवलीन होय ॥ ३२ ॥

दोहा—सुथिर होय संसारमें, जिनसाशन जयवन्त।
जो डूबत भव भवरमें, बांहिग है भग जंतु ॥३३॥

अथ—संवर नाम अष्टमी भावना सम्पूर्णम्।

अथ—संचित कर्मका क्षय करनेवाली निर्जरा भावना अर्थात् कर्मोंके आगमनको रोके ऐसी संवररूपा आठ लगाए पश्चात् संवरके पहले आ चुके जे कर्म सो जीवकी सत्तामें तिष्ठकर बन्ध रूप होय जीवकूं बांधि रहे थे और संसार सागर ते पार नहीं होने देते थे तिस बन्धनका अभाव करि मोक्षकूं प्राप्ति करन हारी निर्जरा भाव नवमी भावना उच्यते॥

दोहा—याकूं निर्जरा भावना, नवमीको दरसाय।
जो विधि बन्ध अभाव करि, करे मुक्तिको राय।११॥

चौपाई—कर्मास्रव जल जब भरि आवे, जीव नाव डूबनको धावे। संवर लंगर डारि विज्ञानी, थामे नावरु रोके पानी ॥२॥ तदपि रिताए बिन मझधारा, अटकि रहे हुय बारन पारा। ते जिया करम द्वार सब रोके, संवरके डाटे द्रिढ ठोके ॥३॥ तदपि करम जल सत्ता मांही, लघीमार चालन दे नाहीं ग्रस्र अटक जब अटके नैया ना डरो ॥१२॥

अथ सर्वोपदेश त्याग।

हो सर्वदेशी साधु सर्वदेश व्रत जिन आदरे, तिनसें कहें कोई मुनी में इन दुःख आप अनादरे। बारु समथी वह वस पूछे तब छिमा मुनि मन धरे, छिमवादे न छिमवाय तो गहे मैं न मृत्युसे ना डरे ॥१३॥

दोहा—पर पीडाके कारणे, कबहु न कहें असत्य।
सत्या सत्य न उचरे, लखि परपीड निमित्त ॥१४॥
सहे परीषह चदेगत, सकल व्रती सम चेत। अब आगे वर्णन करूं, अणु धर्म हित हेत ॥१५॥

अथ अणुव्रत गीता छन्द

यदि हो गृहस्ता बार अणुव्रत धरि दया जिन आदरी, कोई बात ऐसी आवने पर ज्या न परवश आ परी। तहां

पकर भूप बुलाय पूछे धर्म धरिकर पर कहे, थी सत्य सब पर सत्य पूछे प्राणत सुहर लोंच है ॥१६॥ तहां हानि लाभ विचारि पर उपगारमें उद्यम करो, हो साध्यकी जहां सिद्धि साधन जाय तो मत ना करो। ह्यां साध्य है दयाभाव सत् साधन असत् भई सत्य है, हो दया सतकी सिद्धि तो वह असत पूरो सत्य है ॥१७॥

अथ विशेष पुष्ट ताहे तो सत्य समाधान गीता छन्द।

जिस काल मुनि सत मुक्ति साधे साध्य तो ह्यां मुक्ति है, तिस कार्यकी सिद्धिका साधन सतद्विर सकर युक्त है। मुनिराज तो गहि मौन सत्य असत्य संती टरिगए, पश्चात लखि दया व भाव धरि सत साध्य सिद्ध करि शिव गए ॥१८॥ ह्यां करो जैनि बुद्धिपैनी डारि धर्म विचारियो, कर लई सिद्धी साध्यकी साधू तहां बोल्यो न क्यों। साधक बौधाधक कार्यको जिन अवक्तव्य दशा धरी, तिसकी व्यवस्था जगतके व्यवहारमें यों उच्चरी ॥१९॥

अथ परमार्थ ते उलटा लोक विव्हार लोक व्यवहार ते उलटा परमार्थ दिखावे हैं।

वह सत असत् करि युक्त है क्यों ज्ञान लोप भए तज ह्यां, सो असत है व्यवहारमें अरु कपट है परगट जहां। जहां कपट है तहां भई माया आर्त भाव कहां रह्यौ, गयौ आर्त भाव जहां तहां फिर मल भाव तभी गयौ ॥२०॥ इत्यादि अपगुण युक्त थो वो सत्य ह्यां जग स्वार्थमें, सोऊ कथंचित सत्य तदपि असत्यथी परमार्थमें। जिम हेम हो पर घास भूपनि पात टुकडी बातनें, अरु होय कारन घातको वह हेतु अरु हो हाथनें ॥२१॥ पुनि सत असत करि युक्त हो अरु अवक्तव्य पदार्थ हो; व्यवहार हां के अर्थ हो

परमार्थ मांहि अनर्थ हो, तो साधु सर्वदेश त्यागी जो लगे परमार्थमें। जिन धरमको धर्म दया मई लग रहे स्वपर हितार्थमें ॥२२॥ ते हानिलाभ विचारि साधु सु कार्यको साधन करें, धर मौन सत्य यथार्थ हित सव कथं चित नहि आदरे। वे स्वपर घातक वचन हिंसक ना कहे निज वैनमें, परको धरमके परखो सोसत जसत हैं जंनमें ॥२३॥ अब कहुं वात समेटके शिव साध्वी मुनिरायके, जिसकी थी साधक दया केवल स्वपर घात हटायके। थो दया साधक पूर्ण सव-लोकी कसत उत्पातथो साधकरूं बाधक लखि भये चुपको स्वपरको घात थो ॥२४॥ यहां मौनही में थी यथारथ सत्यकी परिपूर्णता, अरु स्वपरकी थी दया हिंसक भावकी थी चूर्णता। निज साध्वीकीथी विद्ध दुकसी बात ही की बातमें, परमार्थका हो लाभ तहां भव स्वार्थ है उत्पातमें ॥२५॥

दोहा—तिस कारण मुनि जन तहां, धारे मौन तुरंत।
　　स्वपर घातकी बात लखि, स.ध्यन बांधे संत ॥२६॥
　　दया धरमके कारणे, हिंसक भाव निवार।
　　सत्य कहे के चुप रहें, ऐसा करें विचार ॥२७॥
　　सकल पाप संसारको, एक जीवको घात।
　　तिनमें है अन्तर इतो, वह वेटा वह तात। २८॥
　　तात विना उपजे नहीं, पुत्र कदाचि त्रिकाल।
　　निज पर घात निवारके, पालें दया दयाल ॥२९॥
　　फिर आगे वर्णन कहूं, यही धर्म अनुसार।
　　दया धरम साधन अर्थ सद्भावार्थ निहार ॥३०॥

गीता छन्द—यदि हो प्रसताचार अणुव्रत धरि दया जिन आचरो, कोई वात ऐसी आ बनें पर ज्ञान परवस जापरी। तहांय कर भूप बुलाय पूछे धर्म धरि शरपे कहे, थी सत्य

तिस पर पूछे प्राण तसु हरनो कहै ॥३१॥ तहां हानि लाभ विचारि पर उपगारमें उद्यम करो, हो साध्यकी जहां सिद्धि साधन जाय तो मत ना डरो। भावार्थ है पर प्राण घातक वचन मुख मत उचरो, छुटवाय तो तन धन यत्न करि सत असतमें मत डरो ॥३२॥

दोहा—अब विशेष वर्णन करूं, तज संसार विचार।
परमारथमें सत असत, कौन हिता हितकार ॥३३॥
तहां विचारो प्रथम तुम, आपनो पद भवि भ्रात।
मत खंचो मतयों कहो लघु मुख मोटी बात ॥३४॥
तुम अणुव्रतके हो धनी, चलण ग्रहस्ताचार।
तातें अपनी योग्यता, लयो इस भांत विचार ॥३५॥
मैंने त्रस रक्षा लई, अणू रूप लई सत्य।
थावरकी हिंसा करूं, दंलूं सत्य असत्य।३६॥
अब मो त्रसकी घात मैं, बोलूं लौकिक सत्य।
तौ परमारथमें सुगुरु, भाख्यो ताहि असत्य ॥३७॥
परमारथमें सत्य वह, परम अरथ दे साथ।
स्व पर घात सत नहि लेयौं, जातें दहे उपाधि ॥३८॥
लौकिकमें सत असत करि, युक्त कहो सब वाद।
अवक्तव्यसो वचन है, मुनि मारग मरजाद ॥३९॥
मैं मुनि नहीं गृहस्थ हूं, मौन धारण असमर्थ।
मौन धरे नाहीं सरे, राजा करै अनर्थ ॥४०॥
बोलूं केवल सत्य तौ, औरां करत असत्य।
त्रां जंगमकी घातमें, सो सत कहे असत्य ॥४१॥
अब रखनो मोहि धर्म मुक्त, सत्य वचन प्रकाश।
अणुत श्रादके त्यागकी, यही मैं रहे त्रास ॥४२॥
अगपथ तें शिव पथ विमुख, शिवपथ तें संसार।
अब मोहि अपने साध्यकी, करनी प्रथम संभार ॥४३॥

परमारथ है साध्य शुद्धि, साधन हैं व्रत पांच।
तिनमें स्व पर हितार्थ हम, लियो अणुव्रत सांच ॥४४॥
परमारथ अरु स्वपर हितका साधन है सत्य।
जो संसार विचारते, जुदा जिनोदित तथ्य ॥४५॥
सोको लौकिक सत्य कहि, स्वपर मानतों नाहि।
यह बाधक परमार्थके कारज साधक नाहि ॥४६॥
इत्यादिक सुविचार करि, लौकिक सत्य हटाय।
सत्यारथ वच बोलिके, करो स्वपर उपगार ॥४७॥
आधे दोहेमें कह्यौ, कोटि ग्रन्थको सार।
पर पीड़ा सोई पाप है, पुण्य सु पर उपगार ॥४८॥
तन बल मन बल वचन बल, धन बल जनबल और।
बुधि बल गुण बल धर्मबल तथा मृदु बल कोर ॥४९॥
जिस तिस विधि रक्षा करे, सो परघात निवार।
यही धर्ममें यादिना, होय न जग उद्धार ॥५०॥

अथ चोरी वर्जन अचौर्य व्रत कथन।

दोहा—है आतम है आर्य अब, शेष निर्जरा भाव।
दया धरमके कारणों चोरी देहू हटाय ॥५१॥

चौपाई छोटी ॥

सर्वो देश त्यागी मुनि करें, क्यों पर दरब हरण चित धरें।
जिन जान्योंमें सबते अन्य, पंच दरब सें चेतन भिन्न ॥५२॥
पर चेतन परमें बहु भांति, आपो थाप मान रहे शांति।
मैं परमारथ हित व्रत धरयो, दया निमित पर धन परिहरयो
तिल तुस मात्र अदत्त आचरूं, जीव सतायकु गतिमें परूं।
यों पाले मुनिवरत अभंग, ते अदत्त त्यागी सरवंग ॥५४॥
अरे जीव कहूँ बेठि इकंत, पाल दया अघ टाल महन्त।
कर्म निर्जरा हेत उपाव, बैठ भावना ऐसे भाव ॥५५॥

ऐसो दिन कब आवे मोहि, पर तजल्यूं निज संपति होय।
अतुल चतुष्टय पास हमार; ज्ञान सुख वीर्य अपार ॥५६॥
तौ क्यूं परधन इछा करूं, क्यों भव भव दुर्गतिमें परूं।
तौ भव बन्ध आरहुं च दूर, पाव' भवतर सुख भरपूर ॥५७॥
अथवा पंच अणुव्रत धार, तीन गुण शिक्षा च्यार।
बारह व्रत धरि परम पुनीत, आगमोक्त श्रावककी रीति ॥५८॥
कूप नीर निज आपन देव, देखन माटो निजकर खेत।
ता बिन तो छिरै न लगा रखि, अब करि अन्य विचार ॥५९॥
कुम्भलकी चोरी मत करे, वस्तु पराई मत आचरे।
दाव घातमें मत दे चित्त, दोस मोस मत ले परवित ॥६०॥
निजमें खोटी वस्तु मिलाय, मत ले तोल मोल भरमाय।
हीन अधिक मत नापे वीर, अदल बदल मत दे परबीर ॥६१॥
सौंपी वस्तु सु करमति जाय, कृत कारित सब दोष लगाय।
इत्यादिक चोरीके अंग, सो तजि पाल व्रत विभङ्ग ॥६२॥
अरे जीव तैं भव भव मांहि, करे कुकरम धर्म गह्यो नाहि।
करत अनर्थ व्यर्थ गयो काल, अब कछु करि परमार्थ संभाल ॥
जब तू परधन पर त्रिय हरै, मारे पर न मरनतैं डरे।
परी टेव मन मानै नाहि रोकि, कर धर्म उपाय ।६४॥
कठिन कठिन धन संचय करयौ, तैंसो जाय छिनकमें हरयौ।
वृद्ध अवस्था अति परवार, पास न धन रह्यौ सबके कार ॥६५॥
बाल वृद्ध रोगन कर भरयौ, ताको तैं सब सब धन हरयौ।
तैं तौ मार धरे सब ठौर, जीव दुखाय कियौ अघ घोर ॥६६॥
जातें परमारथ नसि जाय, हिंसा होय तू फंसि जाय।
भव भव वैर वंश विस्तरे, हे मन ऐसो काज न करे ।६७॥

अथ ब्रह्मचर्य व्रत वर्णनम्।

दोहा—अब आगे वर्णन करूं, ब्रह्मचर्य व्रत सार।
परमारथ निज धर्म हित, स्वपर दया हितधार ६८॥

चौपाई—सर्वोदेश महा व्रत धरो, सहस अठारह दूषण हरो। शील रतन नव कोट बनाय, स्वपर दया हित लेहु बचाय ॥६९॥ हो निर्ग्रन्थ महा तप करो, काटि करम शिव सुन्दरि वरो। के परनारि सकल परिहारि, उत्कृष्ट श्रावक व्रत धरो ॥७०॥ प्रतिज्ञा करि अणुव्रत धर्म, धारि करो तप काटो कर्म। देवि पशु वनितादि निहार, बिम्ब देख करि नीषो नारि ॥७१॥ वृद्ध नारि माता करि मानि, लघु पुत्री सम बहन समान। पास अकेलीके मत जाय, प्रति इकली आव न दे ताही ॥७२॥ हाव भाव ताके मत लखै, भण्ड वचन उपहास न अखै। मत पकावन वाहन चढे, मति शृंगार कथा नित पढ़े ॥७३॥ मत त्रिय लिंग धवरी करे, मति पर-मय वांछा उर धरे। इत्यादिक सब दोष निवार, शील राखि बारह व्रत धारि ॥७४॥

के जघन्य क्रिया आचरो, अविशाहित मत ना आदरो। मातपितादि पंचजन रीति, धर्मपन्थ अनुसार विनीति ॥७५॥ शीलवन्त कन्या कुलवती पाणिग्रहण करिलयौ शुभ मती। मध्यम किरिया भेद अनेक, मही ग्रहस्थ जिनागम देख ॥७६॥ अरे जीव तें सेय कुशील, भोगो कुगति भयो बहु जलील। जिन तेरे लिये देखि कुकर्म, काढ्यौ नाक उडाई धर्म ॥७७॥ के लड़ि लडि मरि दुर्गति गए, वैरभाव करि संकट सहे। अब तू वीरण होय सुशील, मत कर परमारथमें ढील ॥७८॥ कर्म निर्जरा करि शिव वरो, सुगुरु सीख इम हिरदे धरो। तजि तृष्णा पंचम व्रत धारि, सकल पापतें पल्ला झारि ॥७९॥

अथ परिग्रह त्यागन हेतो तृष्णा वृत-दोहा।

हे ? तम आय अब, त्याग परिग्रह जाल।
तप करि कर्म खपाय सब, ज्यों हो जगत निकाल ॥८०॥

चौपाई

परिको अर्थ विशेष विचार, ग्रहको अर्थ गांठि उर धरि।
दोनों शब्द मिलावो जबै, परिग्रह नाम होत है तबै ॥८१॥
ताको मूल अर्थ यह होय, घुलवां गांठि खुलै नहि कोय।
अरे जीव तू अपनी साथ, याको अर्थ लगा इस भांति ॥८२॥
मैं अनादितें सब हठ गह्यौ, पकरि असत सततें फिर गयौ।
मानौं नाहि सुगुरुकी सीख, करूं न हित अनहित तहकीक ॥

घुल रही भरम भावकीग्रंथ, खोलूं किस विधि हो निर्ग्रंथ।
मोह पिशाच कियौ परवेश, मानों नाहि सुगुरु उपदेश ॥८४॥
इत्यादिक परिग्रहके अर्थ, सो तजिये लखि सठह व्यर्थ।
तृष्णा हेत करे हठ कूर, बन्धे पाप नहि लाभे पूर ॥८५॥
तृष्णा वस करि करि भरमार, मरि मरि जाय कुगति दरबार।
तृष्णा हेत असत उचरे, नाना भांति उपद्रव करे ॥८६॥
तृष्णा तें परधन सब हरे, मरकर नरकके दुख भरे।
तृष्णा हेत हरे परनार, करे परिग्रह बहु उपकार ॥८७॥
बहु आरम्भ परिग्रह हेत, बारबार पड़ि नर्क निकेत।
भोगे भवभव संकट घने सो कछु बात कहत नहीं बने ॥८८॥

द्रिष्टिमान सब जग जंजाल, कहूँ कहां लग ताको हाल।
जामें दरब अनन्त भरे, मैं निज भाव सबनमें धरे ॥८९॥
बिछुर गयो सब अङ्ग भङ्ग, हो गये मान हमारे भङ्ग।
संग चली नहि देह हमार, तजि गये पलरीमें जरवार ॥९०॥
तदपि न त्याग्यौ जियाने खोट, पटकीना हम हठकी पोट।
तातें बहुत रुल्यौ संसार, रे जिया अब तू पहा मार ॥९१॥
पांच पापतें होय निवर्त, फिर तू करि कुछ पुण्य प्रवर्त।
फिर तज पुण्य पाप सर्वंग, करो अचल उप होय असंग ॥९२॥

दोहा—तारो चौवीस भेद तुम, सकल परिग्रह भार।
करो कर्मकी निर्जरा, ज्यों हो जग निस्तार ॥९३॥
भाय निर्जरा भावना, करो पाप अवसान।
पावो यह सकल सुख, परमव पद निर्वाण ॥९४॥
जेठ मास अलि पंचमी, उन्नीसमे पैंताल।
सौम्य दिवस पूर कांधले रचोनेनसुख माल ॥९५॥
एक घड़ी आधी घड़ी, एक पलक छिन एक।
जे नर भावे भावसों, छूटें पाप अनेक ॥९६॥

इति निर्जरा भावना समाप्तम्।

अथ लोकाकार चिन्तवन हेतो नाम भावना दशमी लिख्यते।
दोहा—भावो दशमी भावना, चिन्तवो लोक अकार।
कौन भांतिको भाम है, है किसके आधार ॥१॥

चौपाई—किस बन्दी गृहमें तुम पड़े, पापत्रिदिश रोगमें सड़े, निकसनकी है यही उपाय। समस अकार ममत हटाय ॥२॥ इन्द्रादिक पदकी तजि आस, ले अपनेकू आप निकास। तू है जीव अपना ही चोर, चितने दिनदिन परधन ओर ॥३॥ तजि संतोष करे पर आस, क्योंकर होंगे मित्र खलास। आतमलब्धि अनंत सुलाय, निजकूं प्रभूको चोर बनाय ॥४॥ रह्यो सदामें तू मद अन्ध, अरे जीव तजि अब सब धन्ध। करि आतम परमातम ध्यान छूटे बन्ध होय कल्यान ॥५॥ अब तू लोक सरूप चितार, ये है लोक भावना यार। मत संसार भावना कह्यो, अन्तर निशदिन कैसे गह्यो ॥६॥ चलै हरटसो संसार, यही जगतको अर्थ विचार। चहुं गति भ्रमण तत्व तिस जान, अब सुन लोकतत्व व्याख्यान ॥७॥

दोहा—तीन भेद हैं लोकके, ऊरध मध्य पताल।
तीन भांति रचना तहां, त्रिविध जीवको हाल ॥८॥

चौपाई—सुख न सुख भोगे चिरकाल, सुखदुख मध्य विपति पाताल। चहुंगति चौरासीलख ज्योंन, जन्म मरणको है इक मौन ॥९॥ एक पिंडकरि वर्णन करूं, लोकाकार कथन उच्चरूं। संस्कृत शब्द लोक पहचान, भाषा माहि लोग सरधान ॥१०॥ जैसो होय पुरुष आकार, तैसो लोक अकार विचार। ताको भेदाभेद निहार, कह्यो केवली बहु विस्तार ॥११॥

दोहा—अमित अलोक अकाशमें परमित लोक अकाश।
तासु उदर अवकाश में, है सब विश्व विलाश ॥१२॥

चौपाई—वातवलयकरि बन्ध रही हद, चौदह राजु ऊंचौ कद। वापि उदीपि आदि अवसान मध्य सात राजू परमान ॥१३॥ पूरब पश्चिम बहुत विनान, कीनो चरचा शतक बखान। सो प्रमाण सुनि मेरे जीव, मिटे भरम सुख होय अतीव ॥ १४ ॥

तदुक्तंचर्चाशतकानुसारेण सवैय्या ३१ साक्षी भूतमिदम।

पूरब पच्छम सातनर्क तले राजू सात आगे घटा मध्यलोक, राजू एक रहा है। ऊंचे चढ़ाया ब्रह्मलोक राजू पांच भया, आगे घटा अन्त एक राजू सरधया है। दक्षिण उत्तर आदि मध्य अन्त राजू सात ऊंचा चौदह राजू षट द्रव्य भरि रहा है, घरमांहि छीका जैसे लोक है अलोक बीच छीकाकूं अधार यह निराधार कह्या है ॥१५॥

चौपाई

ज्यों नर पूर्व अपर मुख धारे, दक्षिण उत्तर टांग पसारे।
कटि पर धरदोऊ भुज बलधारा, खड़ा रहै निश्चल अविकार ॥१६॥
त्यों यह लोक पुरुष आकाश, अधर अलोक आकाश मंझार।
तीन शतक तेतालिस राजू, घनाकारतिस सर्व समाजू ॥१७॥
शास्त्र त्रिलोक सारमें गाया, तिल तिल दशदिश नापि दिखाया।
बात बड़ी सुख तन कह मारा, कथन बहुत लखि करि गये हारा।

अथवा लोक पिंडके रूप, यों मनशाय कह्यो जिन भूप।
अर्द्धमृदंग अधो मुख, तापरआधी धराकर देख ॥१९॥
ठाड मृदंग जकार समान, पूरब पश्चिम ऐसो जान।
दक्षिण उत्तर सर्व सपाट, दिये बल मनु वज्र कपाट ॥२०॥
ऐसो लोक अलोक मंझार, टाडो बात वलय आधार।
ज्यों नर चेतन लिपटो खाल, ज्यों तरवर पर लिपटी छाल ॥२१॥
जैसे अण्ड पिण्ड पैछोत, ज्यों मृदंग हद घेरा होत।
तैसे लोक हद भगवान, भाखो तीन पवन बलवान ॥२२॥
जैसे नर तन छिला तीन, कहुं मोटी कहुं होय महीन।
त्योंही तीन लपेटा लिए, खड़ो लोकक्रं बापू लिए ॥२३॥
यही विश्वको है आधार, भाखो केवलज्ञान मझार।
हद बिना कोई लोक न बने, बढ़े सपत्रुष लम्बो तने ॥२४॥
बात कभो नहि टेडो होय, लोक शब्दको लोप हि होय।
जगमें नाना वस्तु अपार, एक वस्तुको द्वितीय अधार ॥२५॥
ज्यों छींडाको छतको हेत, छतकूं भी तषद्वारा देत।
भींतनको है नींव अधार, नींवनको है भूमि सहार ॥२६॥
सकल लोक को थामें कौन, जो न होय हदपर वह पौन।
हद होय तब लोक कहाय, नातर भू लोप हो जाय ॥२७॥
मूढन मोहि दियो भरमाय, एक सींगपर जगत उठाय।
मूंडो वेल खडो पाताल, करि श्रद्धा नर लयो जगजाय ॥२८॥
कोई मूढ बात अस घडे, शेषनाग ले फरण पर खडे।
कोई कहे कछवेकी पीठ, धरयो जगत नहि माने ढीठ। ॥२९॥
जब पूछे उनको आधार, कोई जल कोई कहत पहार।
जब पूछे कहु उनकी टेक, तो बतलावे लोक अनेक ॥३०॥
जब पूछे किन राखे थाम, तब कहैं विश्वाधार है राम।
जब पूछे वह राम तुमार, है कैसो किसके आधार ॥३१॥

ाब भाखे हैं गगनाकार, मेघ वरण जिन सता धार।
ाही विश्वको याथ है एक, वही आधार वही है टेक ॥३२॥
याागी जन करि जान्यूं जाय, यों कहिकरि फिर यों फिरजाय।
श्वरके हैं रूप अनेक, पर जड चेतन सत हैं एक ॥३३॥
ाण्डाथो है गोल मटोल, करे मूढ जन घोकम घोल।
ात्मप्रमाणमें यों उच्चरे, कल्पित मत सत थापा करे ॥३४॥
ादुक्तं च छद्मस्थजगोक्त विश्वाधार विषये मिथ्यावाक्यमिदम्।

घोलमघोल श्लोक।

शांताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं।
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णंत्रिनेत्रं॥
लक्ष्मी कान्त कमल नयन योगिभि ध्यानगम्यं।
वन्दे विस्नु भव भय हरां सर्व लोकैक-नाथं॥

अस्य खण्डन मिदम्।

चौपाई।

मत पोखैं मत भेदन करै, एक कहैं अरु लहि लहि मरें।
जैन मतोक्त जगत आधार, भया सिद्ध जानै न विकार ॥३४॥
अब करि आगे चितवन एम, धंधि गयौ लोक हदको नेम।
हदसे तो हम भरा न पीत, हद स्वरूप कह्यौ विपरीत ॥३५॥
ताको निर्णय करनों ठीक, सचों कौनरु कौन अलीक।
इक श्लोक शब्द ले छांटि, तिनको दो हिस्सों पर बांटि ॥३६॥
सम्भव शब्दनको ले बाटि, असंभाव्य दे अलग बगाय।
तिनको अब वीरप सुनि लेऊ, असंभाव्य उपमा हैं एह ॥३७॥
भुजगसैनको ह्यां नहि काम, पद्मनाभिको ह्यां नहि धाम।
फिर सुरेशसें मतलब कौन, रह्यो कह्यां दो जिसका मौन ॥३८॥
लक्ष्मीकांत जगतमें घने, कमल नैन बहुतनपे बनें।
विस्नु गए मरिके परलोक, भव भय हरें नरे कहि शोक ॥३९॥

इन शब्दनको ग्रां न भठाव, ए उपमा हैं भक्तिभाव।
जहां दोष आवै अव्याप्त, वस्तु स्वरूप न होवे प्राप्त ॥४०॥
अति व्याप्त दूषण आ जाय, वस्तु घटै उपमा बढ जाय।
असंभाव्य ए दोनूं कही, सम उपमा है सम्भव सही ॥४१॥
जैसी होय बातकी छान तैसी बात कहैं बुद्धिवान।
मोकूं बांह मातने जन्यों, सो अन्याय न्यायमें भन्यों ॥४२॥

कहा करे राजा न्याय, देखो लखि विक्षिप्त प्रलाय।
इमकूं विश्व अधार आकार, करनों है तद्रुप निवार ॥४३॥
तातें शब्द असम्भव टालि, ले तू सम्भव शब्द निकाल।
उक्त श्लोक निरखि ले टोहि, जिस विधिमें बतलाऊं तोहि ॥४४॥

अथ विश्वाधार आकार साधन हेतोः।
उक्त श्लोक मध्ये सम्भव वाक्य संग्रहणवर्णनम् यथा।

चौपाई।

शांताकार शब्द ले थापि, ध्यानम्य सेराखि मिलापि।
विश्वाधार शब्द करि याद, गगन सदृश दोनूं आराधि ॥४४॥
मेघ वरणसे रख ले नेह, अरु त्रिनेत्रसें मन लव लेहि।
सात शब्द तुम लेकर वीर, फिर ऐसे गुणि साहस धीर ॥४५॥
सुनि भावार्थ खुलासा भ्रात, वैठि इकांत शांतके साथ।
योगी वन तन मनकूं रोकि, अचल ध्यान धरि मत ना चौंकि ॥४६॥
विश्वाधार आकार विचारि, समझ स्वरूप सकल संसार।
तजके भाभज निज आतमराम, जाते सिद्ध होय सब काम ॥४७॥
सदृश शब्द लीजै उस ठौर, जाकी सम होहू को और।
जाके बिच है लोक विलाश, ऐसो है इक द्रव्य अकाश ॥४८॥
सकल दरब जिन उरमें दिये, ताके दोय भेद जिन किये।
कछु बाहर कुछ भीतर सोय, थोथ थोथ दोऊ इकसीं होय ॥४९॥

गगन सदृशको मतलब इतो, द्विविध अकाश हृदयमें चितो।
बाहर हाय अलोक अकाश, भीतरको नभलोक है खास ॥५०॥
बाहर कीधो कथनी छोड़, शून्य द्रव्य है द्रव्य न और।
निराकार अनहद अलोक, हद बिना तो होय न लोक ॥५१॥

ह्यां आकार चितवनसे काम, कैसो जीव केहको धाम।
भीतरलेकी चर्चा करो, यो सर्वत्र विश्वमें भरो ॥५२॥
मिथ्या तिनको जो भगवान, ताको तिने कैयों सधान।
सर्वव्यापी हमरो देव, निराकार है नभ सम एव ॥५३॥

उपमा धरि साधें उपमेय, सत्योपम बिन सधैन ध्येय।
रह्यौ विश्वमें व्यापि अकाश, निराकार लक्षण है तास ॥५४॥
जहां देखो तहां वही दिखाय, सकल दरप उर धरण सु भाय।
तिसकी उपमाता पर जोडि, सत्यारथ तत्वारथ छोडि ॥५५॥

कहै विश्वको नाथ है एक, वही आधार वही है टेक।
ताके नहीं आधार अकार, वही विश्वको विश्वाधार ॥५६॥
तिनको मत खण्डण अब करूं, वह क्यों अद न वहकमें पड़ूं।
यद्यपि निराकार भगवान, तद्यपि एवम्विध ज्ञान निधान ॥५७॥

कहां गगन निजी व अज्ञान, भेदइ तो धरती असमान।
लखिके निराकार इक पोल, कियौ मूढ़ जन घोलमघोल ॥५८॥
जड़ चेतनाको गड़बड़ कियौ, अतुल दोप ईश्वरकों दियौ।
हदरूप यह लोक अकाश, जामैं अनहद जीव निवास ॥५९॥

यद्यपि व्यापि रह्यौ नभ तहां, तद्यपि कहां जड़ चेतन कहां।
चेतनकी है दो विधि उक्ति, इक संसारी दूजो मुक्त ॥६०॥
दोनूंको गुण व्यापक नाहि, व्याप्यो गगन जगतके मांहि।
गगन सदृश ईश्वरकूं मानि, अरु जग जीव लखे इक थान ॥६१॥

अरु लखि बाह्य अकाश अनन्त, भीतर जीव अनन्तानन्त।
इत्यादिक बहु कारण पाय, ज्ञान हीन जन गये भ्रमाय ॥६२॥

एकोदेश लखन उर भार, सर्वदेश कियो व्यभिचार।
सर्वव्यापी ईश्वर कह्यो, वही बाह्य वही भीतर दियो ॥६४॥

वही ठरायो विश्वाधार, गगन सदृश अरु निर आकार।
तीनो दोष लगा यकि रहे, सो तो मूढ़ नृपात कि रहे ॥६५॥

ईश्वरमें व्यापक सब दर्व, नहि ईश्वर व्यापक अग सर्व।
ज्यों दर्पणमें तन झलकाय, तनमें दर्पण घुसि न जाय।६६॥

पुनि दर्पण ते है तन दूर, अरु तन ते रहे दर्पण दूर।
तदपि विमल गुणके परभाव, करे दूर द्रव्य न-दरसाव ॥६७॥

त्यों तिहुं काल त्रिलोक मंझार, बहुनिरा कृत अरु साकार।
जड चेतन भगवतके ज्ञान, प्रतिबिंबित हो प्रगटे आन ॥६८॥

वो परमातम परम पवित्र, विश्व अशुद्ध ठचित्र विचित्र।
क्यों सर्पोंकी सेजया करे, क्यों वह कंवल नाभिमें धरे ॥६९॥

स्वच्छ होय क्यों नीलो बनें, क्यों वंटे लक्ष्मीके कनें।
जगत वस्तुकी लेय सहाय, क्यों भाखे मोहि यो प्रगटाय ॥७०॥

धिग धिग जड़ बुद्धिनकी टेक, भाखे जग व्यापी अरु एक।
गगन दश दशको खंडन कियो, मेघ वर्ण अब बाकी रह्यो ॥७१॥

अरु रहे तीन नेत्र सुनि भ्रात, सोहे त्रिविधि बातकी बात।
विश्व अधार कह्यो हम जैन, सोहै तीन भांतिकी पौन ॥७२॥

अथ जैन मतानुसार विश्वाधार वातवलय वर्णनम्।

चौपई बड़ी।

प्रथम घनोदधि वलय कहावे, जल अरु पवन बराबर पावे।
सजल घटावत दश दिग छाई, मेघ वरण भगवान बताई ॥७३॥

दूजा वातवलय घन मानों, पवन अधिक जल सूक्ष्म जानों।
तीजो खुश्क पवन तनु नाम, तिन यह लोक अभर ले थाम ॥७४

छिपटी पवन अतुल बल भारी, दशहूं दिश कहे तीन प्रकारी।
समबल करि सब ही दिश रोक्यो, मानो वज्र वज्रमें ठोक्यो ॥७५
ध्रुव स्वरूप यह लोक अनादी, निधन स्वरूप कह्यो सतवादी।
स्वयं सिद्ध करता नहीं कोई, अनहर्ता न विनशता सोई ॥७६॥

दोहा—यों त्रिनेत्र धन वर्णको, करि खण्डण मण्डान।
लोक शिखर शिव लोकको, आगे सुनो बखान ॥७७॥

अथ—मुक्तिशिला लोकमें है वा लोकसे बाह्य है और कैसी है तिसमें परमात्मा एक विराजे है अनेक वा एकानेक विवस्था है, तिन दोनोंका आकार कैसा है तिसकी सिद्धिके वास्ते सिद्ध शिला और सिद्ध परमेष्टीके स्वरूपका वर्णन करे हैं-

चौपाई।

अब सुनि परम धामको भेद, बसें सिद्ध निष्कल निर्वेद।
पुरुषाकार जगतके सीस, कही थोथ इक जिन जगदीस ॥७८॥

दोहा—जैसे नरके सीसपर, देखो मित्र टटोल।
अर्हचन्द्र आकार इक, कहे कपालमें पोल।७९॥
तहां आत्मारामा चढि, करे आय विश्राम।
है विख्यात त्रिलोकमें, ज्ञान शक्तिको धाम ॥८०॥
त्यों त्रिलोकके अग्रपर, तत् प्रकार अनुसार।
एक थोथ निर्मल कही, नहीं भीतर नहिं बार ॥८१॥
सो पैंतालिस लाख मित, जोजन परम महन्त।
परम धाम तिस नाम है, तिष्ठे सिद्ध अनन्त ॥८२॥
अन्तवलय त्यके अन्त तक, एकानेक स्वरूप।
बसे अकल परमातमा, निराधार चिद्रूप।८३॥
ओं ओं कहि मुनिजन रटे, जोगी ज्ञानाकार।
सोहं सोहं कहि तिरे, भव समुद्रके पार।८४॥

अरे जीव जीस भांति मुनि, तजि तन लोग अकार।
भजि निज पद गहि स्ववत धुल, हरि भय कारागार॥८५॥
निकसि बसे शिव लोकमें, सकल शोक करि दूर।
त्यों तू लोक अकार लखि, डारि ताहि सिर धूर॥८६॥
बैठो एकांत प्रशांत हो, तजि दे मोह ममत्त।
जाते पावे जगतसुख, दुःखको मूल प्रमत्त॥८७॥
तजि लपपन है सहसमें, जेठ कृष्ण हट जीव।
वाहि नभाई भावना, पढ़ियो सन्त सदीव॥८८॥

इति लोकाकारस्वरूप भावना समाप्तम् दशमी भावना समाप्तम्॥१॥

× × ×

अथ बोधदुर्लभभावना ग्यारवीं लिख्यते—

दोहा—गाले अघ पाले जगत, टाले कर्म अनन्त।
हरि त्रिवर्ग अय वर्ग दे, नमूं बोध भगवन्त॥१॥
दुर्लभ है संसारमें, वीतराग विज्ञान।
अरे जीव आराधि नित, आदि मध्य अवसान॥२॥

चौपाई।

गुणते वस्तु अस्ति कहलावे, गुण बिन वस्तु नास्ति हो जावे।
ज्यों धनते धनवान पियारा, पुत्रवान बहु पुत्र नवारा॥३॥
त्यों भगते भगवान कहावे, भग भगवान ज्ञानकूं गावे।
हो भग तुल्य वस्तु जो प्यारा, सो भगवत व्याकर्ण मंझारा॥४॥

दोहा—सिद्ध भयो भगको, अर्थ ज्ञान तथा विज्ञान।
ज्ञानवान है आत्मा, विज्ञानी भगवान॥५॥
सेवक तू स्वामी प्रभू, परम गुरु परमातमा।
परम दया तुझ पर करे, समझि निजातम तदात्म्य॥६॥

चौपई।

अरे जीव तू ज्ञानी प्यारा, तदपि अनादी है मत वारा।
कुमति कुश्रुति दूर अवधि विचारे, दिगरचो अरु परलोक दिगारे॥८
हे वीरण अब सठहठ त्यागो, सुख कारण परमारथ लागो।
सुमति सुश्रत शुभ अवधि धरो उर, मन पर्यय लहि केवलमें पुर॥
दुर्लभ है विज्ञान अज्ञानो, प्रगटाले हो अतर ध्यानी।
है तुजहीमें संपति तेरी, ले अब काठि करे मत देरी॥९॥
पाय मनुष पद बादि गंवाये, तो फिर जनम जनम पछतावे।
बाजि मतंग जई धन ढोवे, पाय सुधारस जो पग धोवे॥१०॥

कंचन भाजन धूरी भरावे, पाय महामणि सिधु बगावे।
छेदि कलपतरु कांटे बोवे, सोसठ मूड पकरि कर रोवे॥११॥
काल अनंत चतुर्गति वीरा, लख चौरासी गतिकी पीरा।
सुगति मनुष दुर्लभ पाई, तिरि समुद्र भयो पार अन्याई॥१२॥
निपट निकट तट है तुज खेवा, तज परमाद भजो जिनदेवा।
एक पलकमें पार लगावे, जन्म मरणके दुःख छुडावे॥१३॥
तिर नाहे तो तिरले प्राणी, पढया है तो पढि जिनवानी।
तू अनादिका है अज्ञानी, ज्ञान बिना मुक्ति नहीं पनी॥१४॥
मुक्ति बिना कहूं सुख नहि प्यारा, झूठा है जग सुख पसारा।
जतन करत सड़ जाय शरीरा परम विपत्ति को धाम है धीरा॥
त्यागो जनसब भांती टटोरचो, इन्द्रादिक पदसे सुख मोरयो।
तीर्थंकर से अन्तर जामी, जिन्हैं नमैं त्रिभुवनके स्वामी॥१६॥
बिश्व बिभूति पडो जिनद्वारे, तै जे कार अगम दुवारे।
ते क्षण भंगुर लखि जग माया, परमारथसे ध्यान लगाया॥१७॥
तो तुमको नहि नरमें बांके, आणकित हो कौन कहांके।
कहां तुमारो संरसिरो, आए थे तुम नगन शरीर॥१८॥

जायोगे तज सधमन डेरा, जिसे कहे तू मेरा मेरा।
निरखे निसदिन तू जग मेला, मरगया वह तजि राज अकेला॥
वह रोवे जाकी पटरानी, गावत निस दिन बात निरानी।
अपनी कष्ट दशा न निहारे, भय भयो नित सेखी मारे॥२०॥
मैं बलवंत रूप धन मेरा, देश कोश अरु पुत्र घनेरे।
दासी दास महल कुल नामी, विद्या बल अरु दलको स्वामी॥
भारतमें बहुगार तमीनों, शत्रु जिहसे हम बहु पीने।
मैं न मरूं भावे मरियो काई हाहा मूढ कहां पति खोई॥२१॥
सुनी अपनी अब दृष्ट कहानी, समझेंगे कोई सज्जन प्रानी।
ज्यों कोई पथिक करमका मारा, भूल्यौ पंथ बिदेश मंझार॥
अटत पटत अटवी दिश दौरा, त्यों अगन जामें बहु भारा।
व्याकुल चित फांस्यौ पछतावे, भागं चहुं दिश पंथ न पावे॥२३॥
तहां बसे इक गज अभिमानी, देखि पथिक मनमें इम जानी।
इन यह बन चहुं दिश भरमाया, सूंड उठा मारनको धाया॥२४॥
लखि गजपति सुधबुध गई मारी, भाग परयौ काहू दिश अविचारी
अन्धकूप पछूंड न करि छाको, याको कर्म बढ़े अब आयो॥२६॥
तलखिर ऊपर पाया पियारे, अन्धकूपमें नाथ खिमारे।
बीचों बीच बिरख पट छायों, तापर पड़ि अतही दुख पायौ॥
करम जोग करि होश जुआई, पकड़ जटालट कर्योंतिस माही।
पड़त भार तरवर थर्रायो, मधु छता फटि दल उलटि आयौ॥२८॥
लिपटि गई माखी तन सारे, नीचे अजगर अहि मुख फारे।
ऊपर गज घूमें मत वारा, निरखे वाट टरे नहि टारा॥२९॥
स्याम स्वेत चूहे जड काटे, माखी चूंट चूंट तय चाटे।
निरखि पथिक कर ग्यान विग्यानी, दुखकेता सुखकी न निशानी
चानकदेव बिमान सिधारया, निरखि पथिक दुःखहाथ निकारया
अहो दुःखी नरदेह मुज वीरा, बैठा बिमान हरूं तेरी पीरा॥३१॥

सुनत सब वचन नाहि पठाई, मधुकी बिंदु टपकि मुख आई।
आशावश फिर फिर मुखा फारे, वारवार यो देव उचारे ॥३२॥

अरे मूढ अब मत कर देरी, कट गई जड अब आरही तेरी।
तज मधु बिंदु बिखेकी आशा, करलेगो अजगर तेहि ग्रासा ॥३३॥

लगी घात सट मूंड हलावे, ऐसो स्वाद कहां फिर आवे।
नेक ठहर दो बूंद चटाल्यूं, अपने मनकी हौंस मिटाल्यूं ॥३४॥

हा हा धिक धिक मूल पियारा अरे जीव सोई हाल तुमारा।
त्रिश्ना वश कर्म यके मारे, भूल सुपथ कुपंथ संसारो ॥३५॥

पडे जगत वनमें पछतावो, लागं अगन चहुँ गत दुख पावो।
परभव काल बली गज मारयों, या भव भमकूपमें डारयों ॥

आयु विरख अहाते गहि राखी, निसदिन कटत रही कछु बाकी
चूंट चूंट परि जन तन खावे नीचे नर्क सर्प मुख बावे ॥३७॥

तू भगवान ग्यान धूतेरे, परम निधान काटि किन लेरे।
तू आतम परमातम प्यारा, तू सिद्धांतम तू ओंकारा ॥३९॥

मत कर मिश्र जगतकी आसा, कर लिए ते सब भोग बिलासा
स्वात नरक नव ग्रवक तोई, देखे सव सुख दुःख तुम भाई ॥४०॥

मत मधुबिंदु स्वार्थ वश हानी, मत कर परमारथमें हीनी।
बहुत गई रही थोरी वीरा, करो ग्यान धर धीरज भीरा ॥४१॥

जाते भव परिहृ कर आवे, काल अनन्त सदा सुख पावे।
फेर न होय जगतमें वासा, मिटे अनादि करमका रासा ॥४२॥

दोहा—करले वीर बिवेक इम, देव धर्म गुरु सार।
सांचे सेवत मोक्ष पद, गूंठे सेवत छार ॥४३॥

सवैया ॥३१॥—देव नमे देव अरिहन्त हैं परम देव सर्वज्ञ वीतरा राग तारण तरण है, गुरुनमें गुरु निर्ग्रंथ हैं जगतगुरु जाके निजपर परमारथ करण है। धरममें परम धरम है

दयामई है और जग स्वांग सब पेटको भरण है॥ याहीको शरण लेहु नाथ कैसो खेवा खेहु बारमे है, पार मझधारमें मरण है।' सोइ अन्धकार अनिवारिके निवारिबेकूं पूरब दिशामें पद इनके फर ले, सुनिके सुमारग कुमारगको हाल फिर पूछि शुद्ध मारग विचार मन कर ले, तू है ज्ञानवान भगवान सो महान कर ध्यान, ऐस भांति यथार्थ चित धर ले। याही भांति करि जो तिरे तो वेग तिर मीन, अन्यथा तिरे न तू हजार बात धरि ले॥३३॥

जोलों डाट गिली ईंट चूनेकी है डीली तों लो माटीहीको काचो सांचो साधक है धामको। डाट पकि जायऽ कि जाय बोम काम तब बाधक योही फेर बनीवे आरामको॥ त्योंही आप्त आगम सुगुरुको शरण वीर पूरब दिशामें अवलम्बन है कामको। कहे नैनसुखदास तजि मधु बिन्दु आश हूबत भवांबुधिमें कारण है थामको॥४६॥

दोहा—इकपर नवतापर चतुर, चतुरन पर धर पांच।
जेठ असित द्वितिया भविक, रवि दिन लीजो बांच॥४७॥
ता दिन भावई भावना, नैनानन्द गरीब।
पढ़ें सुनेंगे भव्य जन, जिनके बड़े नसीब॥४८॥
इति बोध भावना ग्यारमी समाप्तम्॥११॥

+　　+　　+

अथ मोक्ष प्रापक जिन धरम आराधन हेतो धरम भावना बारमी लिख्यते।

दोहा—शिव प्रापक जिन धर्मको, अरे जीव ले शरण।
साधो सम्यक रीतसे, दर्शन ज्ञानाचर्ण॥१॥

ख्याल लंगडी रंग तककी चाल

अर्हतादि त्रिलोक पति न करि जिन ग्यारह बातें जानी।
सत्प्रतीतमें, धरे चित्त कोई हैं सचे श्रद्धानी॥ टेक॥

तीन काल षटद्रव्य नवों पद अरु षट कायाके प्रानी।
लेश्य भाव षट तथा पंचास्तिकाय जिनने जानी ॥१॥
द्वादश व्रत अरु समिति पंचगति च्यार जिन्होंने पहिचानी।
ज्ञान चरणके समझि करि भेद स्वपर परणति छानी ॥२॥
यही मोक्षका मूल कहैं सतगुरु ज्ञानी, शिव सुख कारण, दर्शनावरण, निवारण सुख दानी ॥३॥ मिटे द्रिष्टि तेरी भ्रष्ट नैनसुख अन्त वरोगे शिवराणी। जन्मतीतसे, धरें चित्त सोई हैं सधे श्रद्धानी ॥४॥ अर्हन्तादि त्रिलोकपति न करि जिन ग्यारह बातें जानीं। सत्प्रतीतसे, धरें चित्त सोई हैं सधे श्रद्धानी ॥५॥

खयाल बांसव रेलीका।

जे मोक्ष मारगकी प्राप्ति करन हारे हैं, अरु कर्म महा भूभृतके हरनहारे हैं। जे सकल तत्वका ज्ञान धरणहारे हैं, ते वन्दूँ तद्गुण लब्धि भरण हारे हैं॥ भाई सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण चित्त धर ल्यौ, है यही मोक्षका पन्थ इसीमें चरल्यौ। तत्वारथकी सत्यारथ श्रद्धा करिल्यौ, है सम्यग्दर्शन यही इसीकूं वरल्यौ ॥१॥

सो दो प्रकारसे उपजत रे सुनि प्रानी, इक तौ सुभावसे कह्यौ निसर्गज ज्ञानी। जो उपजै आप्तरु आगम गुरु परवानी, सो उपदेशज अधिगम कह्यौ जिन वानी ॥२॥

पुनि जीव अजीवरु आश्रव बन्ध चितारो। संवरको समझि निर्जरादि मोक्ष विचारो॥ इन तत्वनिमें तुम कौन जुदा करि हारो। फिर तज परार्थकूं अपना अर्थ निकारो ॥३॥

भवभव समुद्रसे पार करनहारे हैं, ते वन्दूं तद्गुण लब्धि भरणहारे हैं। जे मोक्ष मारगकी प्राप्ति करनहारे हैं। ते वन्दूं तद्गुण लब्धि भरणहारे ॥४॥

जे सकल तत्वका ज्ञान धरण हारे हैं।
ते वन्दूं तद्गुण लब्धि भरणहारे हैं॥

ते नाम थापना द्रव्यभाव कर जानों। इन च्यारूं निर्क्षेपोंसे इन्हें पहिचानो॥ जिन लक्ष्य परतुके लक्षण जिनका ठानो, तातें ऐसा घन साध्य वस्तुके मानो॥१॥

पुनि दो प्रमाण अरु सप्त नय करि भाखो, आते हो अर्थ अनर्थ विचार अभाखो। फिर पांच भेद विधि थापि इन्हें काराभो निर्देश तथा स्वामित्वके पेर अमाहो॥२॥

पुनि साधन अरु अधिकरण स्थिति भेदोंसे, करो पूर्व कथित सब सिद्ध छुटो खेदोंसे। सत्संख्या क्षेत्र स्पर्शन भेदोंसे, समझो कालांतर भाव जैन वेदोंसे॥३॥

तुमको तो साध्य है शिव संमति अविनाशी, जो पर ते पर स्वच्छज्ञानमें भाशी, है दर्शानंद परमार्थकी सिद्धि जहां ही। तू जाया चाहे जहां तोड़ि भव फांसी॥४॥

ए बहुत अज्ञान हरण हारे हैं, ते वन्दूं तद्गुण लब्धि भरण हारे हैं। जे यथार्थ तत्वका ज्ञान धरणहारे हैं। ते वन्दूं०॥५॥

ख्याल बांस बरेलीका परन्तु ओपलीब दली गई है केवली भशीत द्वादशांग॥

तुम द्वादशांगके करल्यो तीरथ प्यारे, जलजांयगे मल होजांयगे मंगल सारे॥टेक॥

ए सकल विश्व विद्याके हैं पूरण सागर, हैं साधक तद्भव पर भव मोक्ष उजागर॥१॥ हैं आप्त कथित गणधर गुंथित पसारा, मत मानों इनसे इतर बतीस अठारा।॥२॥ भाई काल दोष करि जगमें भर्म पर हैं, कल्पादिक सूत्र नमें बहु दोष भरे हैं॥३॥ तिनके तो कथनका कुछ नहीं ठीक ठिकाना। आचार विचारमें दोष भरे हैं नाना। ए द्वादश भार। रूप अनादि कहावे। इनके प्रताप भवी जीव मुकतिमें

आवे, जिन शरण लई तिनके सब अघ धोडारे ॥गलजायगे०॥ तुम द्वादशांगके करल्यों तीरथ प्यारे, गलजांयगे मल हो जांयगे मंगल सारे ॥४॥ पुनः॥

एक परमपूज्य है जैन वेद सुन प्राणी।
हिंसा गर्भित है वेद महा दुःखदानी ॥१॥
इनकूं आराधे सन्त बड़े सब ज्ञानी।
उनकूं आराधे हिंसा लग रही जगतमें ऐंचातान विडंबन।
विन जिन शासन नहिं सुखदायक अवलम्बन॥२॥

यह वीर हिमांचलसे जिन गंग टरी है।
सो गोतमादि गुरुके घटमें पसरी है ॥४॥
सप्तांग सुधारससे सर्वांग भरी है।
जडतादिक जगकी बाधा सर्व हरी है ॥५॥
पाखण्ड महावनके जिन पेर उखारे।
गल जांयगे मल हो जायगे मंगल सारे।
तुम द्वादशांग करल्यो तीरथ प्यारे ॥ जल जांयगे० ॥६॥

इनतोडे भ्रमगज दन्त पन्थ जिन सोधे, दिये मोहमरू रथल फेंकि अधर्मी बोधे ॥१॥ प्रक्षाले जग जन मन कलंक सब याने, ताते संतन करि सेव्य सुरादिक माने ॥२॥ हैं मुनि भिरु पासित तीरथ तारण हारी, है सदाकाल जयवन्त जगतकूं प्यारी ॥३॥ याकूं तजके मनमें मत कुमति बिचारो, मत नदनालनमें पडि जीवनकूं मारो ॥४॥ इस ज्ञान गंगजलसे मनकूं धो डारो, नहि अवसर बारंबार समझ ल्यो प्यारो ॥५॥ मत भवसमुद्रमें आतम रतन बगावे, तो हिनाहि परख यह तुमको परप करावे ॥६॥ परखनके लिये भेदानुभेद करि डारे, गलजांयेगे मल हो जांयेगे मंगल सारे, तुम द्वादशांगके करल्यो तीरथ प्यारे, गल जांयगे मल होजांयगे मंगल सारे ॥७॥

एकांत बैठि इस अलका भाव विचारे, तुमहीमें सबै यह अंग तुही धरधारो ॥१॥ तेरे ही रतन ए द्वादश तुममें भरे हैं, है तुही खान तुही चोर तु जीमें धरे हैं ॥२॥ है तु होनाय तुही पेरक तू तरवैय्या, रे तेरी ही अटक रही खेव तुही अटकैय्या ॥३॥ तू अपनी खेप कूं आप ही पार करेगा, चाहै जाति रातो वैरक मार गिरेगा ॥४॥ तू उमास्वामि कृत तत्वार्थक पढिले, तू भव समुद्रसे वेगी वेगी कढिले ॥५॥ कहै दास नैनसुख मत पुरुषारथ हारे, गल जांयेंगे सब ही जांयगे मंगल सारे, तुम द्वादशांगके करतयी तीरथ प्यारे ॥ ॥ गल जांयगे० ॥६॥

दोहा—इक पर नव नव पर चतुर, चतुरन पर धरि पांच।
जेठ असित दशमी भयिक, शशि दीन लीजो बांचि ॥१॥
भाई इस नृप भावना, मनमें उठी तरंग।
जयवन्ती वरते सदा, द्वादशांग जिन अंग ॥२॥

इति द्वादशमी भावना समाप्तम् ॥१२॥

+ + +

अथ द्वादश भावनाओंकी सिद्धांतसंग्रह नामा एक भावना अन्तकी लिखिये है। तिसमें स्वाख्याततत्वानुचिन्तवन अनुप्रेक्षा इस आद्या सूत्रका पहले अर्थ करे हैं—

दोहा—स्वाख्यात तत्व अनुचिंतवन, सुनियाको चिरतन्त।
जैसो जिसको नाम गुण, तैसो तत्व विचित्य ॥१॥
अनुप्रेक्षाको अर्थ यह, पीछे करे सम्भाल।
पिच्छल बुद्धी जीव ज्यों, पहली मत दे टाल ॥२॥

अथ षट द्रव्यनके पेचमें जीवकी क्या दशा है सो सिद्धांत काढे है—

गीता छन्द—अब टालि चेतन कुमति पहली सुमति अवलम्बन करो, जिस भांतिको जो भावना तसु तत्वको

चित्तमें धरो। रे जीव! तू निर्जीव सो है, गगनमें उड़तो फिर्यो॥ है काल सो अरु धर्म सो तू गेंद सो लुढ़तो फिर्यो॥३॥ पढ़ि मर्म मूढ़ोंके अधर्मी भेष बहुते तैं धरे, रह्यो नित्य सो न अनित्य सो कछु काज नहीं तेरे सरे। नहीं जीवकोश शरण किसीका चतुर्गतिमें यह भ्रमे, तिहुँलोक तीनों काल इकला अन्यसे नाही थमें॥४।

तू अशुचितनके संगसे अशुचिता खो रह्यो, शुभ अशुभके भरिभार भवकी धरमें तूढै रह्यो। अब पाटि आव श्रवदार दे करि डाट नवका फटी रही, दे सर्व भार उतारि हो भवपार अब मैं अंटि रही॥५॥ तू लोकको करि शोक भवकी रोकमें क्यों ही रह्यो। तू होय जाग्रित जोति क्यों कर मौतके घर घर सो रह्यो। अब जाग शिवपथ लाग मिथ्यात्यागि सम्यक आदरो, हो शांत तज एकांत गहि सिद्धांत भवसागर तिरो।६॥

अथ नैनसुख वा दृगसुख ऐसा नाम कविताका है व्याकरण द्वारा इसका अर्थ तत्वार्थ श्रद्धान रूप वा सम्यग्दर्शन रूप सुख है सो कहे हैं—

गीता छन्द—दृग दर्शन है धातु सम्यग्दृष्टिसें तू दशि ले तत्वार्थको श्रद्धान सम्यग्दर्शन पढ़ि परशि ले। तै नैनसुख जो नाम पायो धर्म द्रिष्टि हटाय ले, घट घटनकी पट पटनमें जिन बिन निरखि सुख पान ले॥७॥

भई अष्ट अनादिसे ये रोग राज असाध्य है, यह द्वादशांग जिनेन्द्र अंजन मिश्र तोहि अराध्य है। इस भांति भाई भावना अर्हन्तके सत पन्थकी, सब भांति हला कीजिये भनि बात है सब तन्तकी॥८॥

परमार्थकी है दीपिका अरु न्यायको तत्वार्थ है, है स्वपरको उपकार सन्त अनन्त पुरुषार्थ है। भगवानकी पहचानहु

भगवानको ज्ञान है, भगवानने नई ज्ञान सभावोंमें मात्र महान है ॥९॥

यह कर्मकष्ट मिटानेकूं भावनामृत चूर्ण है, भयो वरमके परभावसे यह आज ही परिपूर्ण है। हेम हुसमेंसे काठि पञ्चपन ज्येष्ठ अलि भौदास धरो, भृगुवार नगरी कांबला जिन शांति तप मंगल करो ॥१०॥

इति श्री नयनानन्द कवि विरचित जैन मते द्वादशानुप्रेक्षाय, सिद्धांतसार समाप्तम्।

इति श्री नयनानन्द विलास संग्रहे अध्याय २८ वेमें प्रथम भाग समाप्तम्॥

श्रीमदर्हते नमः ॐ नमः सिद्धेभ्यः।

अथ कवि ननयानन्द यतिकृत "भजन विलास" लिख्यते—तस्य उत्तर भाग मिदम्। २ अथोवर भागस्य भूमिका. माहा विज्ञापन।

विदित हो कि मैंने इसका पूर्व भाग तो पहले १७ अध्यायोंमें पूर्ण किया था। और दूसरा भाग २३ अध्यायोंमें सम्पूर्ण किया था। जिसकी १ प्रत तीतरम नगरमें। और दूसरी प्रति जगाधरीमें। और तीसरी लाला हरनामदासकू रहुतकमें। और चौथी प्रति मेरठ शहरके जैन मन्दिरमें और पांचमी शौरभ नगरके मन्दिरमें पूरी पूरी दे चुका हूं।

पाछे ऐसा विचार हुआ कि—साजबाज परगानेकी चीजें कुछ तो पूर्व भागमें हैं कुछ उत्तर भागमें हैं जो ए सब पूर्व भागहीमें हो जांय तो रथजात्रा आदिकके उत्सवोंमें सारा ग्रन्थ पास रखनेका जरूरत न पडे। इस वास्ते अध्याय १८ वेंसे लेकर अध्याय २१ और थे सो सब गान समाज। गान समाजके थे वे भी उत्तर भागमेंसे छांटकर पूर्व भागमें

शामिल कर दिये हैं। इस उत्तरभागमें सिर्फ बड़े बड़े प्रबन्ध और सभामें बैठकर सुननेके लायक धर्म-चर्चाओंका संग्रह है, परन्तु और कोई प्रबन्ध घटाया बढ़ाया नहीं। जो वे पांचों ग्रन्थ हैं, अलबत्तै अध्याय उलटे पलटे गए हैं और कुछेक किनारे पर लम्बरोंके अंक भी जादा करि दिये हैं सो इस वास्ते कि सूचीपत्रमें लम्बरके इशारेसे कौनसी कथनीकूं देखा चाहेंकु झट पा जाय।

गरज पूर्व भागके अध्याय १७ थे अब २८ हैं अरु उत्तर भागके अध्याय २३ थे अब १२ हैं। दोनूंके सर्व अध्याय वे के वे ४० जानने। पुनः विदित हो कि मेरे रचित पदोंमें ६ नाम अरु ४ नाम मेरे शागिर्दोंके पडे हैं सो अब मेरी रचना जानना, शंका न करनी।

इति उत्तर भाग भूमिका पुनः विदित हो कि इस ग्रन्थके दोनूं भाग पूरे कर दिये।

पश्चात और भी अनेक अध्यात्म पद रचे हैं और यह विषय मेरा छूटता नहीं है। जो आयु अवशेष रही तो उसका चिदानन्द नाटक नाम धरिके जुदा ग्रन्थ पूरा कर दूंगा वह इसका तीसरा सत समझा जायगा, नहीं तो यह ग्रन्थ परिपूर्ण दो भागोंमें है।

अथ इस उत्तर भागके १२ अध्यायोंकी सूचना—

सनातन सन्मतार्थ सद्धर्म निर्णयका मुकदमा जिसमें सन्मतार्थ जैनी लोगूंके ४० नियम हैं यहां प्रश्नोत्तरके सनार्थ छल मत खण्डण है सो अध्याय २९। बाइस अध्यायमें छल मतार्थोंकी ११ कुयुक्तियोंका मण्डन अरु खण्डन है ॥३०॥

इस अध्यायमें छल मतार्थोंके कर्त्तावादका मण्डन अरु खण्डन है। अरु सन्मतार्थ सद्धर्मका यथार्थ मण्डन है ॥३१॥

इस अध्यायमें छह मतार्थ सहित पाखण्ड मतका मूर्ति खण्डन है, अरु जिन मत प्रतिमा पूजनका मण्डन है॥३२॥

इस अध्यायमें वेदोत्पत्तिका वर्णन है जिसको निराकार ईश्वरका वाक्य छह मतार्थी मानते हैं अरु सन्मातार्थ वेदका मण्डन है॥ ३३॥

इस अध्यायमें अद्वैता ब्रह्मवादका खण्डण अरु जिनमता-नुसार द्वैताद्वैत ब्रह्मवादका मण्डण है॥३४॥

इस अध्यायमें नित्य कृत महापापोंके फलका वर्णन सहित नर्कादि घोर दुःखोंका वर्णन है। तामें नर्कका सम्पूर्ण हाल लिखा है, तातें इसका नाम दुर्गति दीपिका नामा बारहखडी धरया है, तामें प्रश्नोत्तर द्वारा समाधान होने हैं अति उत्तम धर्मोपदेश है॥३५॥

इस अध्यायमें मुन्नूलाल दिल्ली नगर निवासी संघपतिकी सम्मेदशिखरकी यात्राका सर्व वृत्तांत है जिसमें ४०० आदमी यात्री थे, संवत् १९४२ में यह संघ दिल्लीसे चला, मार्गके तीर्थों समेत हाल है॥३६॥

इस अध्यायमें चतुर्थ कालके जैनावतार २४, चक्रवर्त्त १२, प्रतिनारायण ९, बलभद्र ९, नारायण ९, नारद ९ रुद्र ११ ऐसे पदवीधारक ८३ पुरुषोंकी तवारीख है जिनका नाम आयायु अन्तराल मीमांसा है। ३७॥

इस अध्यायमें पंचमकालके २९ महामुनियोंकी तवारीख है जो सूत्रकार हुये ४१३११७ वर्ष कम एक कोडाकोडि सागर-प्रमाण वर्षोंकी जैन मतकी वर्तमान तवारीख सभी हैं दोनू भागका नाम आप्त अन्तराल मीमांसा है॥३८॥

इस अध्यायमें नाना प्रकारकी अद्भुत रचनाऊंका सर्व संग्रह है॥३९॥ चालीसवें अध्यायमें हेमराज कविकृत श्वेतांबर

व दिगम्बर आम्नायके ८४ बोल-भेद हैं, गुम हो जानेके भयसे लिख दिये हैं कामके थे।

ॐ निष्कल परमात्मने नमः। तत तत ॐ सकल अर्हत परमात्म गुरवे नमः। अथ सनातन सन्मतार्य सद्धर्म निर्णयका एक मुकद्मा बनाकर लिखिये हैं।

इसका दूसरा नाम छल पन्थ आर्गल है।

तत्रादौ मंगलाचरणम्।

दोहा—नमूं ब्रह्म सर्वज्ञको, जाके वचन अखण्ड।
करूं जैन महिमा प्रगट, खण्डुं मत पाखण्ड॥

प्रगट हो कि यह एक धर्म निर्णयका मुकद्मा है। पहले इस मुकद्मेंकी असलियत समझ लेनेके वास्ते नियमका यह किये जाते हैं। चाहिए हर मनुष्य पहले इन नियमोंको खूब ध्यानमें जमाले। एनेम ४० बतौर प्रश्नके निर्णयपूर्वक लिखे हैं तहां प्रश्नकूं समझि कर प्रश्नके उत्तरकूं सन्मतार्योंके नियम समझना ॥छल पथ किसकूं कहते हैं॥

उत्तर—जिसमें चाला कर वह काल बुद्धिकूं भरमा कर अधर्मी लोग लेजावे अरु भोरे जीवोंका धर्म धन लूटलें जिससे आत्मा परमात्मा अरु सर्व प्राणीनाशका घात होवे ॥२॥ आर्गल छल पंथकी क्या है?

उत्तर—अर्हत सर्वज्ञ सकल परमात्माका उपदेश बिगु असर्वज्ञका उपदेश छद्म युक्त, छल पंथ होता है। सोकु पंथमें ले जाता है, जैसे किसीने अपने नगरके गलीकूं चेतो देख रक्खे हैं। परन्तु विलायत नहीं देखी, कर कहर वह पशु विलायतका रास्ता बताकर लिख कर दर गया वह रास्ता ठीक नहीं है। चलनेवालोंकू चाहिये कि किसी ऐसे पुरुषसे निश्चय करे कि जो उस रास्तेकूं चल कर

विलायत देख आया हो या मों शिक्षा कर गया हो, या उसके जानकार सम्मताग्रू में। नहीं तो कब पता लग सक्ता है, अर्थात् संसारी पुरुषोंने जायक अर्हंत भगवान घाती है तावत अनाप्त अवस्था है। आप्त नहीं है इस वास्ते छद्मस्थ है, उनकूं संसारीक ज्ञान है। संसार मार्गमें चतुर हैं मोक्ष-मार्गमें अंश नहीं, या तो पूरे जानकार नहीं हैं। जिनसे पूछना, या जिनके वचनकी लकीर पर फकीर होना सम्य-त्वियोंका धर्म नहीं है, किंतु यह पंथ प्रारम्भमें सरल है। आगे चल के भव भ्रमण है, धर्म धन लुट जायगा। तातैं देख कर लौट आना चाहिये जानेका नाम आर्जव है सो यह आर्जव जैनकी प्रणीत सम्यक्तावोंके मोक्ष होनेके निष्क-पट रूप सरल मार्ग है। हाथ कंगनकूं आरसी क्या जिसका जी चाहे परीक्षा कर ले ॥२॥ पंथके हैं ॥

उत्तर—दो हैं, एक संसार पंथ ॥१॥ दूजा मोक्ष पंथ ॥२॥ मोक्ष पंथ कौनसा है ?

उत्तर—एक जिन मत ही है जिसका जिसका सम्यग्दर्शन-ज्ञान चारित्राणि मोक्ष मार्गः। ऐसा लक्षण है, अर्थात् सम्यक् श्रद्धान, सम्यकज्ञान, सम्यक् आचरण रूप दयामय एक ही मार्ग है। प्रथक प्रथक तीन मार्ग नहीं हैं, इस वास्ते मार्गः। प्रथमांत पद पड्या है, और पंथोमें श्रद्धा न है तो ज्ञानपूर्वक नहीं ज्ञान है तो आचरण ठीक नहीं। आचरण है तो श्रद्धान ज्ञान दोनू ठीक नहीं, एक एक अंगकूं पकडि कर अपनी अपनी रूचि माफिक मत पोखे हैं ॥४॥ संसार मार्गके हैं ॥५॥

उत्तर—सनातन तो पांच हैं और पांचोंके मोटे छलकूं धारण करके कोई सौ वर्षसे कोई हजार दो हजार वर्षसे इत्यादि सैंकड़ों हजारों नये हो रहे हैं। परन्तु उन पांचोंके

सूक्ष्म छलकू जिनकूं मोटी बुद्धिवाले नहीं समझ सकते ये एक नये चतुर धूर्तने संग्रह करके व्याकर्ण विद्याके छलसे दोषोंको तो गुण वर्णन करे। अरु उन मोटे छलियोंके छलकूं खण्डन करके उनकी आखूंमें धूल भर दई है, और उन बारीक दोषोंको गुणसे दिखाय अपना पंथ एक नया भी सन् १८५७ ईसवीमें चलाया है सो महा छलका जाल है। जिसके फन्दमें अनेक फंस गये अरु फंसे चले जाते हैं। यह नया छल पंथ सब छल पंथोंमें प्रधान है इसीसे यह मुख्य छल पंथ है ॥५॥ यह नया छल पंथ किसने चलाया है उसका नाम बतावो ॥६॥ सनातनी पांच संसार पंथ कौनसे हैं ॥७॥

उत्तर—मत सनातनी छह हैं तिनमें एक जिन मत ही मोक्षमार्ग है, और सर्व मतोंको विजय कर कई चिर रहकर सरल है। बाकी पांच अपने छलसे वक्र हो रहे हैं। सो सब अनार्थ अरु छल युक्त पांचोंकु पन्थ हैं, फिरफिरके संसारहीमें पतन करावे हैं। तिनके नाम जैन पन्थकूं छोड़कर बाकी इस श्लोकमें समझ लेना।

श्लोक—जैनं मैमांसिकं बौद्धं। सांख्यं शैवं च नास्तिकं।
स्व स्वतर्क विभेदन, जानियाद्दर्शनानि षट् ॥

जैन मत मोक्षमार्ग है ॥१॥ मैमांसिक संसार मार्ग है ॥१॥ बौद्ध संसारी मार्ग ॥२॥ सांख्य संसार मार्ग ॥३॥ शैव संसार मार्ग ॥४॥ नास्तिक संसार मार्ग ॥५॥ ए पांच सनातनी हैं। इनके निकले हुये नये और पुरानेसे सैकड़ों मजहब हैं, जो उरे उरे तो सीधे चलते हैं। परे खिचल जाते हैं। सब संसार ही की बात करने लगते हैं, अरु फिर फिरके संसार ही में आ पड़ते हैं ॥७॥ यह दयानन्द सरस्वती पंच संसार मार्गोंमेंसे कौन मतका आदमी था ॥८॥

उत्तर—उसके समाजी नियमोंसे तो यह मालूम होता है कि वह दूसें नास्तिकमती था किंतु अद्वैत मतको कर्ता सृष्टिका बताता था परंतु बाद चालपर से फिरेता था, कहीं कुछ और कहीं कुछ बकबक लिखलिख जगतकूं भ्रमा गया है। जिसकी हम मतहदके लोग और प्राचीन अद्वैत सर्व निंदा करते हैं।

इससे जाना गया कि यह अपना आप एक छह मत न्यारा चला गया है। जिसमें बहुतसे भोले प्राणी फस गये हैं और उसकी दो तीन बातें मुख्य थीं। जो वेदिक मतमें भारत मण्डलके पण्डित नहीं बताते हैं। जिससे यही जाना गया कि उसका मुख्य मतलब यही था कि मेरी बातें प्रचलित हो जांय। इस वास्ते एक मुख्य छलमतकी ढाल उसने बनाके जाल रोपा था। अर्थात् मैंमासिक मतमें बारीक छल है। जिनको जिन मतने ही परखा है। और किसीने नहीं परखया, सारा जगत इसके जालमें फंस रहा है। तभी तो वह इसकी ओटमें चोट करे था, और अपने नगारे बजा गया ॥८॥ दयानन्द सरस्वतीके मुख्य इरादे क्या थे और किस वास्ते उसने अपना मत चलाया ॥९॥

उत्तर–उसके मुख्य इरादे ये थे। वर्तमान कालमें जैनावतार भी नहीं हैं। और उनके शिष्य साधुगण भी नहीं है.और साधुगणोंमें गणेश्वरादि कोई महान् प्रभाववान आचार्य भी नहीं है। और उनकी आज्ञा प्रतिपालक धर्मके रक्षक अधर्मियोंको दण्ड देनेवाले चक्रवर्ती राजेन्द्र भी नहीं हैं, अठ नारायण, ।प्रति नारायण बलभद्र ऐसे त्रिषटशलाका पदवी धारक सन्मताय राजा भी नहीं है। और जो हैं तो जैन धर्मसे परान्मुख आचारसे भ्रष्ट हैं और जैनी आर्यावर्तमें थोडेहीसे हैं, और वे भी सब

पण्डित नहीं। अब सूना खेत है अंग्रेज बहादुरानकूं अपने मतकी भी पक्ष नहीं, और सच्चे झूठे मजहबोंवालोंको आम इजाजत है कि चाहो जैसे कोई नगारे बजावो तो अब मेरा वक्त है स्वछन्द क्रोडा करूं। मुझे कोई न रोकेगा मैं हाकिम वक्तका भला रहूँ, और अपना मत चलाऊं। गरज इसमें उसने दो बात तो सरकारके फायदेकी सोची और अपने फायदेकी अनेक, एक यह कि सब लोग मेरे मतमें हो जायगे तो वर्ण भेद न रहेगा। जब हर जातका खानपान व्याह शादी होने लगेगी, संतान बढ़नेसे प्रजा बढ़ेगी यह कमावेगी सरकारको फायदा पहुंचेगा।

दूसरी यह कि रांड स्त्रियोंको उत्तम कुलोंमें पुनर्व्याह होने लगेंगे, सन्तान बढ़ेगी सरकारको फायदा होगा। परमारथ किसीका बिगडे सुधरे मुजे क्या मतलब। तीसरी यह जब सब जाति एक हो जायगी, तो वे मूर्ति पूजन आदि जितने मत और देवता हैं सबको पूजना छोड़ देंगे। और उनकूं फिर अपने मतोंको गुरुदेवता शास्त्रोंके सुनने माननेकी और आचार विचारमें रहनेकी पाबन्दी न रहेगी, तब अपना धर्म मेरे रचित ग्रन्थोंहीकूं समझेंगे इनहीकूं पढेंगे। इसीसे उसने इकलस सब मतोंकी निंदा सब पुन्य कार्योंकी बुराई प्रतिमाओंका खंडन, रांडोंका पुनर्व्याह करना अख्तियार किया था। जिससे उसका खास मतलब ये था कि मेरा ही मत कायम रहे, उसीसे उसने वेदकी ओट पकडी थी। अद्वैत मतकूं मानो अरुओ चाहे सो करो, इसीमें वह धरम जानता था। तो विचार तो कुछ रह्या नहीं। अमूर्तिका ध्यान करना रह्या, जानता था कि अमूर्तिका ध्यान विषयासक्त पुरुषों कहै होयगा नहीं तब मेरे ही मतमें रहेंगे परन्तु विषय त्याग कर

योगाभ्यास करके मुनि होनेका उसने उपदेश दिया। वह करावे पराई रांडोंसे परपुरुषोंके ब्याह और गृहस्थोंके आचार विचार खानपान जपतप संयमशीलके पालनेका उपदेश नहीं वे ऐसे गृहस्थ जालमें फंसे अमूर्तिका शुद्ध ध्यान कैसे कर सकते हैं, और बिना योग प्रदीप शास्त्रोंके अभ्यासके शुद्ध ज्ञान आचरण ध्यान कैसे हो सकता है ?

इस वास्ते जैन दल इस दयानन्दी संसार पंथमें अनार्य मतकी सम्भावना करके खंडन करे है, और इसकी नजरोंमें इस नथमें प्रश्नोत्तरके अनुसार अरु उसके आपे समाजी नियमोंके देखनेसे और उसकी रचनाओंके अवलोकनसे उसका छलमत, पंचांग हत्या करि गर्भित आत्मा परमात्मा और सर्व प्राणी मात्रका घातक रहि पड्या है। तिनकूं जैन मत पंचांग दिखा देगा, चौथा यह कि हजार मण गेहूंके ढेरमें कोई दो च्यार दाने जौके रला दे तो वे शुमार नहीं होते।

इसी तरह पचास बातें दो दो च्यार च्यार मत अपनी रला रलाकर मतवादियोंने अनेक मत चलाये हैं। उसी तरह इस दयानन्दने अपना मुख्य मतलब जो हम ऊपर लिख चुके हैं। अर्थात विधवाओंसे नियोग अरु मन्दर खण्डन अरु मनुष्य मात्र एक जाति हैं सो वर्ण हो जावे। इत्यादि अनार्य कर्मोको आर्य धर्ममें अपने छलसे रलाकर अपना नाम वेद-पाठी और वैदिक मती अरु आर्या धरके धूर्तताके छलमें छल मत चलाया है, जो एकाएकी कोई समझ नहीं सकता किन्तु वेदका तुर्रा उसपर जमा रख्या है। जिसमें लोगूंको अन्धे बना गया है ॥९॥

हत्या किसको कहते हैं और हत्याके ५ अंग कैसे हैं ?

उत्तर—जिससे आत्मा और सर्व प्राणी सताये जावें और जन्म जन्म दुख भरे सो हत्या है, उसके ५ अंग हैं।

जीवके अंगका विध्वंस कर देना ॥१॥ जीवकूं झूठा दोष लगाकर सताना ॥२॥ जीवका माल चुराकर पीडित करना ॥३॥ जीवकी स्त्रीकूं बाधन कूंवा स्त्रीके पुरुषकूं हर लेना कुशीलार्थ ॥४॥ जीवोंको नाना प्रकार तृष्णाके मार्गमें चलाना ॥५॥ जिससे वे अनेक घोर अनर्थ करे, यह पंचांग हत्या है। सो दयानन्दके मतमें गर्भित हैं और इसी अर्थ उसका उपदेश है सो उसको साबित कर देंगे ॥१०॥ तुम क्यों उसके मतके दोष प्रगट करते हो ॥११॥

उत्तर—हमें कुछ गरज निंदा करनेसे तो नहीं है, परन्तु हां उसने हमारे मतमें जो बात नहीं थी और उसने अपनी हठसे झूंठा दोष लगाया है। तब हमने सोचा कि इसने तो झूंठा दोष लगाया, और साबित न कर सका। परन्तु तुम झूंठा दोष तो मत लगावो सच बोलनेमें दोष नहीं है, इस वास्ते उसके ही ग्रंथानुसार उसके छलकूं दिखाते हैं। चाहै कोई कुछ समझो हमारा धर्म झूठ बोलनेका नहीं है। यह बात सर्व मत प्रसिद्ध है कि जैन मत जीवकी निरन्तर रक्षाका है और योगीश्वरोंका धर्म है जिसमें तृणकूं भी सताना कहीं नहीं लिखा।

परन्तु इस निर्दई निर्भय नेह हमारे मतके बाबत अपने रचित सत्यार्थ प्रकाशके बारेमें समुल्लासमें चार्वाक मतके पंद्रा श्लोक लिखकर यह लिख दिया कि ए जैन मतके श्लोक हैं अरु कहता है कि इससे जाना जाता है कि इस मतमें जीव दयाका लेश नहीं है। और भी अनेक निंदा लिखी हैं। और उसका नाम वेदका उलथा धरा जिसका नाम सुनकर जगत हमारा वैरी हुआ चला जाता है। और हमारे भोरे भाई भी कहीं कहीं बहकते जांय हैं तो क्या हम सत्य भी न कहैं हैं। इस वास्ते हम उसके छल दिखाते हैं। और

इस सूत्र कहते हैं तो उसके रचित सत्यार्थ प्रकाशके बारवें समुल्लासमें पत्र ३९६ से लेकर पत्र ४४२ तक देखलयो, उसने कितना दोष हमारे मतकूं लगाया है यह जिल्द सन् १८७५ ईस्वीमें छपी थी। खास प्रयोजन हमारा यह है कि हमारे मतकी इज्जत जैसी है वैसी ही बनी रहै लोग हमारे शत्रु न हों भाई हमारे वहके नहीं।

पुनः हमकूं उसके धर्मराजकी आज्ञा भी है कि सत्यके ग्रहण करनेमें अरु असत्यके त्यागनेमें हमेशा तयार रहना चाहिये। इस वास्ते ही हम असत्यवादके मेटनेमें उद्यत हुये हैं ॥११॥

यह कोई मुकद्दमा किसी अदालतका है?

उत्तर—नहीं, मजहबी मामला है हाकिम वक्त किसीके मजहबको भला बुरा नहीं कहते वे तो मदालतत बेजा करनेवालेको दण्ड देते हैं हमारे दयामय धर्मकूं अनार्योंने निर्दयी ठहराया है, परन्तु हम दयामय धर्मके धारक हैं।

इस वास्ते अदालतमें दावा करके निंदकको दुःख नहीं पहुँचाते हैं परस्पर शास्त्रों द्वारा आप ही धर्मका निर्णय किया है, परन्तु मुकद्दमेके तौर पर सब असत्यकूं दिखाया है जो हमेशेको याद रहै। १२॥

हमकूं तो निकम्मा निकम्मा झगड़ा निरर्थक दीखे है या कुछ अर्थकी सिद्धि होगी ॥१३॥

उत्तर—निरर्थक नहीं है इस तत्वार्थ अधिगम सूत्रानुसार प्रत्यक्ष परोक्ष प्रमाण करि जीवराशि दो प्रकार है। एक भव्यराशि जो मोक्ष हुये अरु होय हैं अरु होंयगे। अर्थात आर्य। दूसरे अभव्यराशि जो मोक्ष हुए न होते हैं न होवेंगे। अर्थात अनार्य। अरु ए दोनूं राशि अनन्तरूप हैं तिनमें आर्य-राशिके मोक्षफलकी प्राप्तिके अर्थ अरु आगामी सर्वदाके लिये

सनातन धर्ममें विघ्न न पड़े, अनार्य उत्पात न करे इस प्रयोजनकी सिद्धिके हेतू, यह मुकद्दमा है।१३॥

मोक्ष क्या वस्तु है?

उत्तर—अपवर्गपदका नाम मोक्ष है। अर्थात् स्त्रित्व—पुरुषत्व—नपुंसकत्व ये त्रिलिंग रूप त्रिभेष है। तिसीका नाम त्रिवर्ग है। तिनतें भिन्न सतचितरूप आत्मलब्धिकूं पाय सबते उन्नति होना अर्थात् सबके मस्तकपे बिराजना तिसका नाम आत्मोन्नति अरु मोक्ष है। सो दो प्रकार है। एक सर्वथा अपवर्ग होना तिसको निर्वाण कहते हैं। दूसरा जिस अन्तम शरीरकूं तजि अपवर्ग होगा। और घातिक कर्मकूं नाश करि केवलज्ञानमय हो चुका। इंद्रियोके आधीन नहीं रह्या। अतींद्रिय ज्ञानकूं प्राप्त, ऐसा जो यथार्थ वक्ता आप्तदेव। सो जीवन्मुक्त है। अर्थात् संसारमें है अरु सब मस्तक झुकाय हितोपदेश पूछे हैं, ऐसा अर्हंत जीवनमुक्त है। इस भांत मोक्ष दो प्रकार है॥१४॥

परमात्मा है वा नहीं?

उत्तर—ईश्वर अरु परमेश्वर अथवा सकल निष्कल ऐसे भेदकरि परमात्मा दो प्रकार है॥१॥ सकल परमात्मा वो है जो अन्तम शरीर करियुक्त जीवनमुक्त होय संसारमें विद्यमान है। केवलज्ञानमय है, मरेगा तो सही परन्तु अपवर्ग होय फिर न मरेगा न जन्म धरेगा, परमेश्वरमें लय होकर भी न्यारा द्वैताद्वैत होय रहैगा।

इसी वास्ते परमात्माकी एकानेक स्वरूप व्यवस्था है वचन अगोचर है। यों तो ईश्वर है सो अर्हन्त है वही सकल है॥१५॥ निष्कल परमात्मा वो हैं जो स्त्रीलिंग पुल्लिंग, नपुंसक लिंग रूप त्रिवर्गकी व्याधि उपाधियोंसे छुटकर मोक्ष होय अपवर्ग हो चुकया सो परमेश्वर है जो फिर न मरेगा न

जन्म लेगा। यों परमेश्वर है सो सिद्ध है निरञ्जन है ॥१८॥
यह बात कैसे जानी ?

उत्तर—सकल परमात्माके उपदेश द्वारा ज्ञानी अर्थात् अर्हन्त जिनेश्वरके उपदेशतैं ॥१९। अर्हन्त कौन अरु जिन कौन क्या भेद है अरु जैन क्या ?

उत्तर—अर्ह पूजायां ऐसा व्याकरणका धातु है, जिसका यह अर्थ है। पूजाका पूज्य अथवा पूजनेके योग्य जो कोई होय तिसकूं अर्ह कहिये पुनः अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म वाचकम् परमेष्ठिनः सिद्धचक्रस्य सद्वीजं सर्वत : प्रणमाम्यहम्। इस अपेक्षातैं अर्ह ऐसा, ऐसा जो अक्षर है सो परम ब्रह्मका नाम है। पुनः तत्करवतु भावकार्ययोः अर्हतिस्म इति अर्हन्:,

इस न्यायतें व्याकरण द्वारा अर्हका अर्हत: ऐसा बन गया पुनः निपातास्तम् इस सूत्रके न्यायतें अर्हन्त ऐसा बन गया। क्योंकि यल्लक्षणेनानुत्पन्नन्तत्सर्वं निपात् सिद्धति। इसकी व्याख्या व्याकरणमें बहुत है, जो सबका परम गुरु वा ईश्वर है ॥२॥

दूसरा उत्तर—जिनाभ व्याकरणका धातु है सो जय अर्थमें वर्ते है अर्थात् इसका अर्थ विजयवन्त ऐसा है। इसमें नक् प्रत्यय कर्तामें होती है अरु यह प्रत्यय व्याकरणके उणादिगणमें हलं त्यम् सूत्रसे व्याप्त है तहां क् की इत संज्ञा हो जानेसे लोप हो जाता है इस क् का प्रयोजन यह है। इससे गुण नहीं हुवा नहीं तो जिसके इकूं गुण होनेसे जेन ऐसा हो जाता।

अब जिन ऐसा रह गया यह नकार, नक् प्रत्ययका है। गरज कृदन्तसे तो बन्या ॥जिन॥ तिसका अर्थ हुवा जयति नाम सर्वोत्कृष्टत्वेन वर्तते यः स जिनः। इत्यर्थः। ऐसा तो जिनका कथन है। यहां प्रमाण है व्याकरणका, समन्तभद्रो भगवानमारजिल्लोकजिज्जिनः इत्यमरः।

अर्थात् समन्तभद्र अरु भगवान् मारजित, अरु लोकजित। अरु जिन ए नाम भगवानके हैं। अब भगवानका क्या अर्थ है सो कहे हैं। भग नाम ज्ञानका है। ज्ञानवालेको भगवान कहिये। जैसे धनवालेको धनवान। पुत्रवालेको पुत्रवान। किंतु गुणसे गुणी भिन्न नहीं होता है। कथन मात्र गुण अरु गुणवाला दो दीखे हैं। परन्तु गुण न हो तो गुणी न कहावे। तैसे ही ज्ञान न हो तो ज्ञानवान न कहावे। जैसे ताप न हो तो अग्नि न कहावे। तैसे ही भगवालेको अर्थात् ज्ञानवालेको भगवान कहे हैं। तहां ज्ञानमें यहां केवलज्ञान लिया है, जो लोकालोकका भानु है, ऐसे ज्ञानवालेको जिन भगवान कहिये हैं। सो अर्हत है जो अर्ह पूजार्थां इस धातु द्वारा सिद्ध है पूज्य है ?

उत्तर तीसरा–अब तद्धितसे जैन बनता है।

जैनकी व्युत्पत्ति यह कि जिनो देवता येषांते जैनाः तहां सास्यदेवता यह व्याकरणका सूत्र है, इस सूत्र से जिनके आगे अण प्रत्यय लगाए है यह अण केण कारकी इति संज्ञा होनेसे लोप हो गया है। जिन अ इतना ही रह गया तब एकाकारके आकारकूं मानि कर जिकूं वृद्धि हो गया तब जिसे ॥जै॥ ऐसा हो गया फिर नकारके अकारका लोप कर देनेसे यह नकार नस्वर रह गया। सो अणका जो अकार बच्या था उसमें जा मिल्या तब जैन ऐसा रूप सिद्ध भया।

भावार्थ—सबका येह है, पूजाके योग्य हो सो तो अर्हत अरु पूजाके योग्य है तो कौन है भगवान नहीं होता है। अज्ञान नहीं सो भगवान केवलज्ञानीको कहते हैं। अरु भगवानहीका नाम वेस्या जिन अरु यह जिन है सो सर्वज्ञ वीतराग तरनतारन परम पुरुष हैं। तभी तो लोकजित ईश्वर

उसका नाम है, सर्वज्ञ तभी तो वीतराग है, वीतराग है तभी तो यथार्थ वक्ता है। यथार्थ वक्ता है तभी तो तरन तारन है, नहीं तो आप डूबे औरनकू डबोये। सकल कहिये वर्तमान पर्यायकूं छोड़ेगा।

निष्कल कहिये मोक्ष होय अपवर्ग पदकूं पावेगा, कहां त्रिविध रूप उपाधि नहीं है। शरीर संयुक्त है, जीवन मुक्त है तभी तो उपदेश करे हैं। बिना शरीरवालेके उपदेश कहां। कर्त्ता हर्त्ता क्रिया तीनोंसे भिन्न इस भांत ईश्वर परमेश्वर सकल निष्कल भेद करि परमात्मा दो प्रकार है, ऐसा सकल अर्हंत भगवान जिन नामका केवलज्ञानमय जीवन मुक्त संसारमें विद्यमान तद्भव मोक्ष जानहार परम शरीरी है देवता जिनका ऐसे यति श्रावकोंके समूहका नाम जैन है। इत्यर्थः ॥१७॥

धर्मका क्या अर्थ है?

उत्तर—धर्मशब्द धृ. धातु अरु मन प्रत्ययसे बना है। अरु यह धृ धातु उन चतुर्दश धातुवोंमेंसे है जो कि आकारसे नकार तक अष्टाध्यायीके सूत्रोंमें लिखा है। इसमें मन प्रत्यय द्वारा नाम संज्ञा बनाई जाती है।

यह मन प्रत्यय ज्ञानार्थमें ही है, इसमें नकार तो हल है सो तो जड़ है अरु मकार स्वर है सो चेतन्य है। यह मकार मन प्रत्ययके गुणकूं अर्थात् ज्ञानकूं धारण कर रह्या है, अरु नकार व्याकर्ण द्वारा मन प्रत्ययमें संयुक्त है। सोध धातुमें मन प्रत्यय द्वारा सगुण मकारको संयुक्त कर देनेसे, धर्म शब्द उधारण हुवा। अरु मनके अर्थ आत्माके भी हैं, तो जिस मकार स्वरकी धारणा द्वारा ज्ञानात्मा हो वह उसकी या अरु कर्मके संयोगसे जो नाम संज्ञा बनी उसीका नाम धर्म है ॥इति॥ धर्म शब्दस्य व्याख्या ॥१८॥

धर्मका क्या फल है?

उत्तर—उधृतीति धर्मः डूबनेका उद्धार करे है ॥१९।
धर्मका क्या स्वरूप है?

उत्तर—वस्तु स्वभावका नाम निश्चयात्म धर्म है, अर्थात् जड़ पदार्थ जडता न तजे जड़ ही रहे। अरु चैतन्य जड़ कर्मादि उपाधितै छूटि केवलज्ञानमय निष्फल निज स्वभावमें आ जाय, दयामय हो रहे तो निज भाव है। कर्ता कर्म क्रिया जडताका लक्षण हैं यह उपाधि छूट जाय सो निश्चयात्मक निज धर्म है, पुनः धर्म शब्द दश प्रकार भी है, तीन प्रकार भी है, उत्तम क्षमा १, कोमल स्वभाव २, आर्यता ३, अर्थात् निष्कपटता वा सरलता वा निश्चलता, वा शुद्ध वृत्ति। ये आर्य धर्मके लक्षण हैं ३, सत्यवाद ४, निर्लोभता ५, संयम ६, तप ७, त्याग ८, निरन्तर संयमकी सम्भाल ९, ब्रह्मचर्य १०, पुनः सम्यक् श्रद्धान १, सम्यक्ज्ञान २, सम्यक् आचरण ३, एवं ॥३॥-॥२०॥

धर्मके साधनेमें मुख्यता करि किस अंगकूं पाले है ॥२१॥
उत्तर—जीव दयाकूं जिसमें आत्म घात पर घात दोनूं न हों ॥२१॥ क्या जीव मरे है? उत्तर मरता नहीं सताया जाय है, तब पर पीडासे पाप होय है। पापके फलसे आत्म घात होय है, जन्म जन्म दुःख भरिये है ॥२२॥
धर्म कैसे प्राप्त होय है?

उत्तर—धारयतीति धर्मः धारण करनेसे नहीं तो नहीं किन्तु आत्मा अनादिका धर्मात्मा नहीं। नहीं तो क्यों संसारमें भ्रमता हो अधर्म बिना ही धारया अनादि है ॥२३॥
क्या अना अविद्या दूर हो सकती है?

उत्तर—हो सकती है भव्यकी अर्थात् आर्य जीवकी,

अमरणको नहीं अर्थात् आनागतको अरु पचपा क्रियाको भा न होय तो सर्व धर्म लोप हो जांय। और सब ही को दूर हो जाय तो संसार न रहे॥२४। जे क्रियका नाम है जड़ है या चैतन्य है?

उत्तर—जड रक्षणे धातुसे बना है, अर्थात् जडति रक्षतीति। ॐ। यास्यतस्या रक्षतीति ॐ। चैतन्यका नाम है आत्मा या परमात्माका, स्वभाव ही से रक्षा करे है पर भावसे नहीं यह नियम है।२५॥ संसारका क्या अर्थ है।

उत्तर—संरेखा तो उपसर्ग है अर्थात प्रशंसाके वास्ते वा बड़ाईके वास्ते लगाया जाता है। और सृग तो ऐसी एक व्याकरणकी धातु है जिससे संसार शब्द यों सिद्ध हुवा है कि सृग तो अर्थात सृका अर्थ गतिका है या प्रयोका है। अर्थात चल्याही सदासे जाय, यही अर्थ जगतका है। गच्छतीति जगत तो चल्या ही जाय उसकूं जगत कहैं हैं। तो चल्या ही जाय अर्थात आगतका भी अर्थ दे हैं, अर्थात चल्याही सदासे आवे है। किंतु जाणेके साथ आवणेका सम कालमें सम्बन्ध है। जैसें कोई कहीं जाय है तो, जहां जायगा वहांके उसे आया भी कहेंगे या आवता है। ऐसा भी कहेंगे। दोनूं क्रिया सम कालमें होंय हैं, ऐसा अर्थ संसार अरु जगतका है। अब संसार शब्दकूं सिद्ध करे हैं वहां सृकूं धामि कर गतोकी बद्दलमें घ. ञ. नामा प्रत्यय व्याकरण कालयाते हैं। अरु घ. ञः अर्थात ।घ। अरु।ञ। इनकी व्याकरण द्वारा इत संज्ञा होनेसे लोप कर देते हैं। प्रश्न किस सूत्रसे?

उत्तर—लशक्वतद्धिते, इस सूत्रमें तो ।घ।की। अरु हलंत्य ।म्। सूत्रसे ।ञ। की। अब बोलो कि सं उपसर्ग सहित सृके आगे घन अवल्य पे तो संसृघञ ऐसा रह गया यह ।आ।

घकारमेंसे निकस्या है, फिर नकारकूं फिर नकारको मानी-कर सू के नपकारकूं अप्दोभीति सूत्रसें आर हुद्दो हो गई। अर्थात् सू सें संसार हो गया, तब संसार ऐसा सिद्ध हो गया ॥ २६ ॥

सतविद्या वा सत पदार्थोंका कोई वक्त ऐसा था कि ए थे ही नहीं और इनके अभावकूं किसीने आदि सूर बनकर उत्पन्न किसी दिन कर दिये ?

उत्तर—सर्व विद्या और सर्व पदार्थ अनादि हैं। अन्य-मतार्थ सबका कर्ता और सबकी आदिका कोई दिन मनसें समझ रहे हैं। हम जैनमतार्थ सत् असत् दोनू विद्याओंको अनादि माने हैं। असत् विद्यावाले न होते तो सतविद्या किनके अर्थ होती अरु सत् असत् विद्यावाले दोनू न होते तो चैतन्यका अभाव ही होता, और कोई भी पदार्थ न होता तो जड़ चैतन्य किसकूं कहते। और सिवाय दो पदार्थके तीसरा कोई किसीने बनाया हो तो दिखावें ॥२७॥

सत्का लक्षण क्या है ?

उत्तर—जो अनादि हो अर्थात् नित्य पदार्थ हो अविनाशी रूप हो ताका नाम सत् है, नास्तिका नाम असत् है। जो चीज हो होगी नहीं वह होही नहीं सकती, सदा जिसका अभाव था। वह सदा अभाव ही रहेगा।

अरु किसीने कोई कभी बात मनमें संकल्प करके इसके लिख धरी तो वह पढ़ीजनेके चमत्कार [illegible] [illegible] चमक करि थोड़े कालमें अभावकूं प्राप्त हो जाती है फिर कोई उसका नाम भी नहीं लेता, जैसें [illegible] एक कभी

कर्त्ता था फिकर अभावमें सद्भाव कर देनेवाला निराकार ईश्वरकूं माने है। और यह दुरा लगावे हैं कि वह सर्व शक्तिवाला था, और सबका कर्त्ता मान्या तो कारण भी वही सबका ठहरा। और कारण जगतका परम अणुको मानते हैं। और जगतमें जितने जड़ चैतन्य हैं इनकी उत्पत्ति परम अणू हीसे बतावे हैं, और परम अणू सहित सबका कारण भी कर्त्ता भी निराकारकूं माने हैं। तो इससे सिद्ध हुवा कि यह कर्त्ता मूरख भी है पण्डित भी है, तभी तो सन्मतार्थ छल बलके ईश्वरकूं हलाय कहते हैं अर्थात छल बुद्धी।

यदि सर्वज्ञ होता तो बेहूदी बात न कहता परन्तु हम यह भी कहैं हैं कि ईश्वर तो बेहूदा नहीं है, दलदल बेहूदा है। जो ऐसी पागलकी बातकूं माने हैं, और मत भी ये पागलोंका कल्पित है। सो दश बीस ही वर्षमें देख लेना इसका कोई नाम भी न लेगा, पुनः ईश्वर तो सच्चित। आनन्द स्वरूप कृतकृत्य कृतार्थ है, ये कहते हैं उसने अपनी शक्तिकूं सफल करनेके वास्ते जगतकूं रच्या है। इससे जाना गया वह इनका ईश्वर निर्फल ही चला आय है कृतार्थ नहीं है। किन्तु अभी तो रचे ही जायगा और इनहोका बोल है कि इसकूं कोई नहीं बता सकता कि कब तक रचे जायगा तो साबित है कि वह सदा ही निर्फल रहेगा।

अरु ए सदा ही अज्ञान रहेंगे, देखो आर्या दर्पणलंबरी १० शांहापुरकी सभाका तारीख २० अक्टूबर सन् ७७ का खास दयानन्दकी जबानका बयान छपवाया हुवा बखतावरसिंह कि करटरी आर्या समाज शाहाजहांपुरका पत्र १३ से २२ तक। इति ॥२८॥

तुम अक्षर जानो हो?

उत्तर—जाने है जिसका क्षय नहीं हो उसकूं अक्षर कहे हैं ॥२९॥

कौनसी वस्तु है वह?

उत्तर—आत्मा वा परमात्मा वा जड ॥३०॥

काहेसे जानी?

उत्तर—सत् विद्यासे ॥३१॥

सत् विद्या कौनसी है?

उत्तर—जिससे आत्मा अरु अर्हत परमात्माका स्वरूप जान्या जाय अरु जड़ पदार्थोंका ॥३२॥

क्या निष्कलंक परमात्माका स्वरूप नहीं जाना जाता उससे?

उत्तर—वह अर्हतके ज्ञानगोचर है हम तो ५२ वर्ण ही जाने हैं ज्यादा नहीं निष्कल परमात्माकूं सकल परमात्मामें मुनि ध्यावे हैं ॥३३-३४॥

तिन बावन वर्णमें तुम अर्हन्तके स्वरूपकूं कैसे जानो हो?

उत्तर—इतना जाने हैं अकारसे हकार पर्यंत अक्षर इन अक्षरोंसे अर्ह धातु अरु मन प्रत्ययसे अर्हं ऐसा रूप बनता है। तिसकी सर्व मिमांसा जाननेवाली विद्याका नाम सत् विद्या है सो अनादि धारा प्रवाहसे नित्य स्वरूप है, याका कोई कर्ता नहीं है विशेष वर्णन ज्ञानार्णव शास्त्रमें देखो ॥३५॥

क्या असत् विद्याका कोई कर्ता है?

उत्तर—यह भी अनादी है जो पावो नहीं तो कर्ता कर

धर्मोपदेश क्यों होता. असत्यवादी न होते तो सत्यवादी न होते तो सत्यवादी किसकूं उपदेश धर्मका करते ॥३६॥

अर्हतके जाननेसें क्या सिद्धि होगी?

उत्तर—अर्हतसे ही हो जांयगे जैसे पुस्तकके लिखे अक्षरोंको देखदेख लिखेंगे वो उस्ताद ही हो जाते हैं, तैसे ही अर्हतके गुण चिन्तवन करनेसें अर्हन्त पन्थ चलनेसे अर्हत ही हो जाते हैं ॥३७॥

फिर क्या होगा?

उत्तर—अर्हन्त हो जांयगे तो निर्वाण उद्भव मोक्ष होय निष्कलंक परमात्मा हो जांयगे फिर जन्म न धरेंगे ॥३८॥

बस यही प्रयोजन है या कुछ और?

उत्तर—बस इस ही प्रयोजनके वास्ते यह छह मतार्थ मत खण्डण सन्मतार्थ धर्मके निर्णय करनेकूं मुकदमा गाया है ॥३९॥

समवशर्णका क्या अर्थ है यह शब्द कैसे बन्या है?

उत्तर—सं अरु अव ए दोनूं उपसर्ग कहावे हैं, सृ धातु है जिसके किया ल्युट प्रत्यय फिर ट अरु टकी इत संज्ञा होगई। लशक्वतद्धिते सूत्र से लकी अरु हलंत्यम् सूत्रसे टकी बाकी रह्या युकूं युवोरनाकौ सूत्रसे अन आदेश हो गया। तब सम् अव सृ अन्, ऐसा रह गया तब सर्व धातुकार्धधातुकयोर्गुणः इस करिके ऋकूं अर् गुण हो गया। तब शआ मिल्या अरके अमें, रकार जा मिल्या अनेके अमें। अट्कुप्वाङ्नुम् व्यवायेपि इन सूत्रों ते, नकार णकार हो गया। फिर समूका मकार अवके अमें जा मिल्या तब, समवशरण ऐसा रूप सिद्ध हो गया ॥४०॥

संवर कैसे बन्या ?

उत्तर—सम्‌तोल उपसर्ग है वृधातु है, अर्थ आवर्ण करनेका है। पीछे भावमें अच प्रत्यय ल्याए, अ न की इत संज्ञा होनेसे लोप हो गया। अकारका अकार रह गया, सार्व धातुका र धातु कयोगुण:। इस सूत्र करके अरगुण हो गया फिर रहर ही नंपरेण संयोऽयं इस सूत्र करिके रकार अकारके अकारमें आ मिल्या फिर नश्चा पदांते झसे, इस सूत्र करके मकारकूं अनुस्वार हो गया तब ॥संवर॥ ऐसा रूप सिद्ध हो गया॥४१॥

इति सन्मतार्य जैन दलके ४० प्रश्नोंके समाधान रूप नियमावली स्वधर्मकी रक्षा निमित्त संपूर्णम् ॥ (इति)॥

नयनानन्द विलास संग्रहे जैन मत नियमावली वर्णनो नाम एकोनत्रिंशोऽध्याय संपूर्णम् ॥

अध्याय तीसवां

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

आगें छल मतायोंको, ग्यारह ११ कुयुक्तियां हैं इनका ३० अध्याय लिखें हैं, १ कुयुक्ति ईश्वरमें सर्व शक्ति होती हैं। न करणीकूं न करै उत्तर जैन दल॥

सर्व शक्तिका अर्थ पूर्ण शक्तिका है अर आत्माकूं पूर्ण शक्ति प्राप्त होती है, तब ही वो अनादि कर्म बन्धनकूं तोड़ कर मुक्त होता है। तिसके कर्ता कर्म क्रिया कहना यही छल है अरु, प्रजाकूं बहकाना है॥१॥ कुयुक्ति सामर्थकूं दोष नहीं होता है।

उत्तर—सामर्थ होगा सो अपने सेमाडेकूं कभी दुःख न देगा॥२॥

कु० जिसमें सर्व शक्ति नहीं वह ईश्वर नहीं?

उत्तर—जिसमें सर्व शक्ति भी हैं और लोककूं जीत चुका इस वासते ईश्वर हो गया, तब पिता होकर पुत्रोंको कभी दुःख न देगा। किंतु क्या उसमें क्रोध रोकनेकी सामर्थ नहीं है, अरु नहीं है तो सर्व शक्तिमान नहीं अरु है तो अपनेसें न्यून पर क्यों क्रोध करे॥३॥

कु० बिना उसके हुकम पता नहीं हलता?

उत्तर—सब काम उसीके हुकमसे होते हैं तो पापाचारियोंकूं पाप करनेका हुकम कोई और देता होगा या वही पाप भी करता है॥४॥

कु० बिना ईश्वर जगत कहांसे आया॥५॥

उत्तर—जैसें संसार सृग वो भावुसें स्वतः सिद्ध अनादी है यही जगतका अर्थ है, जो चल्या ही जाय उसको संसार कहते हैं॥६॥

कु० पुन्य पापका फल वही तो दे है?

उत्तर—जेसा कोई बोता है फलनेके वक्त स्वतः फलता है, उस वक्त अनेक सुख दुःख देनेवाले भी खड़े हो जाते हैं। न बोये तो न खड़े हों नेम है, जीव खुद कर्म कर्ता भोक्ता है॥७॥

कु० प्रलय होने पर कुछ कर्म जीवोंके बाकी रह जाते हैं, इस वासते फिर संसारमें पटके है?

उत्तर—किसो वक्तकी प्रलयमें भी किसोके कर्म क्षय न होते होंगे, यदि किसीके भी नहीं होते हैं तो सदा दुःख ही भरेंगे ऐसी भ्रष्ट सृष्टि क्यों रची थी। जिसकूं सताना सताता कभी तृप्त हो न हो बडा अन्याई है॥८॥

कु० जगत उसहीका रूप है सारे वही है सबमें व्यापक हैं?

उत्तर—जगत उसीका रूप है और वही एक सबमें है तो आप ही अपने सिरमें जूतियां मारे है वाह क्या कहने हैं भल पगले मिले, ऐसा नहीं है ईश्वर सबमें व्यापक नहीं ईश्वरके ज्ञानमें सर्व पदार्थ व्यापक हैं। निर्मल ज्ञानके कारण जैसें निर्मल दर्शन दर्पणमें दूरवर्ती पदार्थ व्यापक हो दिखाई देते हैं, परन्तु दर्पण किसोमें व्यापक नहीं होते हैं॥९॥

कु० मूर्ति अपूज्य है सब?

उत्तर—वेदादि पुस्तकोंमें जितने अक्षर हैं सब मूर्ति हैं, अरु असल प्रतिसे प्रति उत्तर कर संसारमें प्रचलित हैं। अरु उन नकलोंसे तुम अपने परमेश्वरको जानों मानों हो तो हमकू यह संदेह है कि नकलसे असलका बोध होता है तो हम नकलकूं क्यों नहीं माने हम नकलहीकूं प्रतिमा कहते हैं। तुम प्रतिमाकूं क्यों पूजते हो अपने ईश्वर या गुरुके खिलाफ क्यों करते हो यदि इन नकलोंसे असल अक्षर रूप परमात्माका बोध होता है तो नकल ही असलको प्रति-

बोधक हुई। अरु यह एक अतदाकार मूर्ति है किंतु वर्ण सब संकेत रूढ़ हैं कल्पित हैं. तो वीतराग मूर्ति तो तदाकार है सो अवश्य वीतराग परमात्माकी बोधक है। अरु वीतराग भावका कारण है क्यों नहीं उसके दर्शनसे वीतराग भाव होगा, और यह तो सब जानें है कि मूर्ति अचेतन्य हैं। जैसे अक्षर कागज, स्याही, पुनः प्रतिमा नकल है असल नहीं। परन्तु तदाकार होनेसे असल सर्वज्ञ अर्हंत केवलज्ञानी, जीवन मुक्त पुरुषकी थिर सम दम वृत्तिका सूचक है। हां वीतराग मूर्तिके सिवाय कुदेवकी मूर्ति विकारकूं उपजानेवाली अतदाकार सब अपूज्य हैं। इसकूं हम माने हैं परन्तु सर्वथा निषेध नहीं है, और उत्तर दशामें यह भी बाधक है। अर्थात स्वरूपकी लब्धिमें ज्ञान होने पर निराकार आत्मा परमात्माका ही ध्यान योग्य है॥१०॥

कु० रांडोंका पुनर्व्याह करो?

उत्तर—पुनर्विवाह सन्मत आर्योंमें नाजाइज है, किन्तु उसके स्वामीकी आज्ञा नहीं है यह संकल्पित की गई है। दान करके उसकूं दी गई है, पुरुष असंकल्पित है दान करके स्त्रीकूं नहीं दिया गया है वह नाथ है। स्वतंत्र है अरु यह स्त्री परतंत्र है, नाथ वही तो होता है जो आधीन न हो हां पर स्त्रीका त्याग उसके वास्ते भी है परन्तु विवाह अनेक करालेनेमें स्वतंत्र है क्या नारायणसे अवतार बनाये थे तुम आर्य हो॥११॥

कु० वर्ण भेद वृथा है?

उत्तर—वर्णभेद त्रिवर्णात्मक सनातन है। क्षत्री १, वैश्य २ शूद्र ३, सो कर्म करि भेद आदिहीमें समझे गये हैं। वो उनहीके चिन्हसे हैं। सो वैसे ही समझने चाहिये, परन्तु ब्राह्मण वर्ण नहीं बनाए सो बनता है, पुनः पुण्यात्मा पुरुष

तद्भव मोक्ष जानहार क्षत्री, वैश्य, ब्राह्मण कुलहीमें होते हैं शूद्रमें नहीं, किन्तु हीन आचरणी हिन्दुसे मोक्षगामी पैदा नहीं होते परन्तु ब्राह्मण कोई खास जाति या वर्ण नहीं है इनकी द्विज संज्ञा है।

ब्राह्मण उत्तम संयम व्रतके पालनेवाले साधुजनोंका नाम है। जो क्षत्री वा वैश्य कुलमें तो उत्पन्न भए थे। परन्तु उनकूं छोड़ि संयमी होगए जो गृहस्तके त्यागी एक ही जन्ममें दूसरे जन्मकूं त्यागी होनेसे धार रहे है। जब कैसे सर्वभक्षी विषयाशक्तोंका नाम तो नीच है, ब्राह्मण नहीं परन्तु इनकी अब भी रीत है यज्ञोपवीतके वख्त फकीरी भेष धारण करते हैं तब द्विज कहाता है, भिक्षा मांगता है परन्तु उसे बटोल कर फिर मोचीके मोची हो जाते हैं। तब त्रि जाति होनेसे त्रिज कहना चाहिये। यह वर्ण नहीं है कुवर्ण है कृत्रिम है तस्मात् ब्राह्मण वही है जो संयमी है।

इति नयनानन्द विलास संग्रहे छलमतावादी ११ कुतर्क खण्डन रूप अध्याय तीसवां सम्पूर्णम्॥३०॥

चतुर पारमार्थिक विद्यामें सठ हठग्राही भक्षाभक्षके खानेवाले धरमसे परांगमुख। पन्दरा बीस बरसके अन्तरगतके तूफानी; एकांतग्राही मजहबवादी अद्वैत है ॥६॥

वकील मुद्दालेका—

अर्थात्—जिन मतका अनेकांत वस्तु स्वभावका साधक एकांत हठका बाधक एकांत हठका बाधक हैताहैत ज्ञानवादी न्यायकारी सप्तभङ्ग, नय कानूनका वेता निष्पक्ष निहत दोनूके असल हालका यथार्थ रूपसे गुजारिश करनेवाला निर्वैर मुनसिफका पसन्द किया हुवा, सनंद या फता सदा फतेयाब। जिसकी दलीलका झण्डा अखण्ड है और सरकारी वकील है प्रमाणिक है। सो मुद्दाले जिनमतने मंजूर करके खडा किया है ॥७॥

मुद्दईके दावेकी सनंद—

उस ही मुद्दईकी रचित सत्य प्रकाश अरु ऋग्वेद भाष्य भूमिका और आर्यादर्पणकी जिल्दें हैं और छलमतार्योका रचित छल शास्त्र है जिसको वह निराकार ईश्वरका वेद-वाक्य बताता है। अरु उसीकी रूसे कहता है कि यही सर्व कार्योका परम धर्म है ॥८॥

जिन मत मुद्दाले कहता है—

यह बुगला भगत है जैसे बुगला एक टांगसे ध्यानमें खडा हुवा साधुसा दीखे है। परन्तु जलमें देखे प्राणीका घात करै तैसे यह मेरी कोई बातोंको जवान पर धरकर सबकू विश्वास उपजाकर पंचांग। हत्या करनेकू [illegible] मजहब चलावे है, किन्तु समतार्योका धर्म दयामय है सो मैं हूं यह कपटी मुझे बदनाम करे है यह परम दगादार कुपात्र है. अरु मैं परम दयामय सनातन स्वरूप हूं जिसको प्रकट करा का अवतार पुरुषोंने अर्थात चौबीस तीर्थंकर [illegible]—

रोंने ॥२४॥ अरु मनकी आज्ञा प्रतिपालक द्वादश चक्रवर्तीने जो राज करा के न्यायमार्गी राजेंद्र थे।२५॥

अरु नवनारायण अवतारोंने ९, अरु नव प्रतिनारायण अवतारोंने ९, नव बलिभद्र अवतारोंने ९, एवं ६३ त्रेसठ महापुरुषोंने अनन्त जुगोंसे पीछे धारया है, मेरी शक्तिसे संसारसे पार होते सर्व प्राणी चले जाते हैं, इसकूं किसीने भी आदर न दिया। सदा दुर दुर करते ही रहे हैं इसीमें यह मन सबकी बुराई करता हुआ पाखण्ड मचा रहा, अब भगवान आपके आगे इनसाफ आया है। आप मुनासिब करें, यह मुहालेका बयान है।

आगे मुद्दईके दावोंमें १० नेमकी बाधा है जो उनके समाजने मंजूर किए हैं उनकूं खण्डन करना है वे ये हैं। हरफ व हरफनुक्तों समेत जहांके तहां लगाकर लिखे हैं। ऐ विचारी पुरुषो आंखें खोलकर लिखना जिन शब्दोंके नीचे नुकते लग रहे हैं वे छोड मत दीजयो और अन्य ठौर मत लगा दीजयो ॥१॥

आर्या समाजके नियम।

सब सत्‌विद्या और जो पदार्थ विद्यासे जाने जाते हैं। उन सबका आदि मूल-परमेश्वर है।२॥ ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप है। निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक सर्वांतरयामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है उसीकी उपासना करनी योग्य है ॥३॥

वेद सत्य विद्याओंका पुस्तक है वेदका पढ़ना पढ़ाना और सुनना सब आर्योंका परम धर्म है ॥४॥ सत्यके ग्रहण करने और असत्यके छोडनेमें सर्वदा उद्यत रहना चाहिए ॥५॥

सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य अरु असत्यका विचार करके करने चाहिये ॥६॥

संसारका उपकार करना इस समाजका मुख्य उद्देश है। अर्थात शारीरिक आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना ॥७॥
सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिये ॥८॥
अविद्याका नाश और विद्याकी वृद्धि करनी चाहिये ॥९॥
प्रत्येकको अपनी ही उन्नतिमें सन्तुष्ट रहना चाहिये किन्तु सबकी उन्नतिमें अपनी उन्नति समझनी चाहिये ॥१०॥ सब मनुष्योंको सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालनेमें परतन्त्र रहना चाहिये। और प्रत्येक हितकारी नियममें सब स्वतन्त्र है ॥११॥

ये दस दावे मुद्दईके हैं ... हुसेन प्रेसमें छपे सुनहरी हरफोंमें। इनका हमकू खण्डन करना है।

विज्ञापन सन्मतायोंका।

देखो भाई सन्मतायों इसका दावा पहले दूसरे तीसरे नवमें नियमकी जड़पर है। इसकू निर्मल तो सर्वथा हम आगे करेंगे। परन्तु एकावारीक छल तो उसका हम यहां ही दिखा देते हैं इसकूं सब ध्यानमें रखना। अर्थात वह यह भी जानता था कि आर्योंमें सब अन्धे नहीं हैं। जैन दलके सात नेत्र हैं। वे मेरे इन नेमोंकी बुनियाद पर जम गए तो, उखाडकर ही फेंक देंगे कुछ बचाव भी करलो. बच गए तो मरामत चल ही गया। नहीं तो इतर ... तो मुण्ड ही जांयगे।

उनकूं इतनी अकल कहां है। जो मेरे छलकूं समझेंगे। और जो ऐसा ही हुआ तो झट फिर जाऊंगा और कह दूंगा मैं तो पहले ही ये शब्द लिखिया दिए हैं। मुझसे ... हुओं पर क्यों अमल किया इस वास्ते उसने यहां ...

वास्ते अक्षर पर शून्य लगाने हों वहां तो लगाए नहीं। परन्तु उन शब्दोंके अन्त अक्षरकी अकके पास मूलके निकट इन दयालोंने मोंको छोड़ गेनेके तुकते भी लगा रखे हैं। जिससे कोई समझे कोई न समझे। धकापेलीमें कुछ न कुछ तो मेरा मत चल ही जायगा इस वास्ते विज्ञापन देते हैं कि पहले दूसरे तीसरे नवमें नेमके शब्दोंके मूलके निकट जहां तुक्का गेरो वही भूल है। सो वेवकूफोंकी आंखू भर गया है। और अन्यमतायोंके खटक रही है।

ॐ निष्कलङ्क परमात्मने नमः सत सत ॐ सकल अर्हद् परमात्म जगद्गुरुभ्यो नमः।

अथ अन्यमतार्य सनातन धर्म निर्णयका मुकद्दमाधर्मानुसार धर्म सभामें फैसला होनेके वास्ते पेश हो जाता है। इसका असली नामधर्म पन्थ आगे लहै दोहा उत्तारी मंगलाचरणम्।

नमूं सदा सर्वज्ञकूं जाके वचन अखण्ड।
करूं जैन महिमा प्रगट, खण्डूं मत पाखण्ड॥

छन्द ख्याल लंगड़ी रंगतके दादरे पर गाये जांयगे।

सुनों सन्त इक अदयानन्दी कलियुगमें छल मत निकला।
अति अनार्यो परकी झलसे, हरनका मत निकला॥१॥

यह टेक है हर चौकके अन्तमें दुहराकर पढ़ी जायगी। आगे कहे हैं जब यह मत चला था और सबने यह सुना था कि दयानन्द सरस्वती आर्याधर्म्मका उद्धार करेंगे तो सब आर्योंने खुशी मानी थी परन्तु वह तो मामूल क्या था खत निकल जानेसे खाली लिफाफा ही रह गया।

सुनने दयाका नाम कहे थे सब सज्जन पंडित उकला।
बहुत दिनोंमें हमारा दिलवर महलोंसे निकला।१॥

आशक थे दीदारके हम पन्मतार्य अब रामत निकला।
खुल गया अब तो लिफाफा दस्तपे जो उसके खत निकला ॥२॥
पढ़े जु हमने उसके नेम दश वो तो बुगला भगत निकला।
पढ़ गए सज्जन निरा बदवूसें भरा लतपत निकला ॥३॥
करती है थू थू सब दुनियांए तो बड़ा वेपत निकला।
अति अनार्या परस्त्री छलसें हरनका मत निकला ॥४॥
सुनें सन्त इक अदयानन्दी कलियुगमें छलपत निकला।
अति अनार्या परस्त्री छलसें हरनका मत निकला ॥५॥

अथ छल मतार्योंके समाजी नेमोंमेंसे प्रथम नेमके दावेकी स्थापनामें ख्याल दूसरा।

छन्द सवैया ३१ दौड़में पढ़ना।

सम्पूरण सत्य सत्य विद्या और तिनकरि जाने जाय ऐसे जो पदार्थ सकल है, तिन सबहीको आदि मूल परमेश्वर है। प्रथम है ऐसो नेम ताकीये मशल हैं, माता मेरी बांझना नीपारी थी हमारी हकदारीकी हमारे पास वेदकी नकल हैं। करो म्हारा न्याव ऐसे ऊतनके ऊत देगें आगे क्या सपूत पावे झूठकी अटल हैं।

ख्यालका छोड़।

हुवा मुकदमा पेश जिनेश्वरके तो जैन दल आ निकला। सनमतमें हूं दयामई है सुगला ॥१॥ जिन दल है सनमतायें ए छलमताय कलियुगमें निकला। हुकम हुवा झट बुलाओ सरकारी पेशख निकला ॥२॥ स्याद्वाद हुए हाजिर आके देखो मुद्दईकूं निकला। है भी होशमें कि है बद होश गया हां जुत निकला ॥३॥ स्याद्वादने देखी रगरग कहा कि प्रभु ए तो पगला। पक फैसला किया हुवा दयानन्दका दिया दिखला ॥४॥ हुकम हुवा इजलास आममें हमकूं सुना दो सब किस्सा।

पारकर जान्स पादिरी उनकी तरफ ॥२॥ चौथे थे इस्काट पादिरी। च्यार थे इसाई मतकी तरफ। दो थे महुम्मद मजहबी। वे मुसलमानोंकी तरफ ॥३॥ प्रथम महुम्मद कासमखां थे पन्थ मुसलमानोंकी तरफ। कहें थे हम तो रोटियां खाना ही जाने हैं उनसे शरफ ॥४॥ दूजे अबुल्ल मन सूरखां थे और भी थे कुछ उनकी तरफ। और बहुत थे सभासद मूरख जो थे दोनू तरफ ॥५॥ ऐसी सभामें ब्रह्म विचारका दावा ये थापन निकला लति अनार्या परखो छल: ॥५॥

थापी पांच बात इनहूं पर सन्मतार्थ जन सुनियो जरा। परमेश्वरने रचा किस चीजसे सृष्टिको सुनियो जरा ॥१॥ रचा कौनसे वक्तमें उसने उसको भी तुम सुनियो जरा, किस मतलबको रची इसको भी संतो सुनियो जरा ॥२॥ तीन बात इक बातमें थापी दूजो चपता सुनियो जरा, ईश्वर सबमें खास है व्यापक नहीं तुम सुनियो जरा ॥३॥ मुनसिफ है कि नहीं वो ईश्वर तोबी है ये तुम सुनियो जरा, मुक्ति क्या है मिले किस ढगसे ये चोथो सुनियो जरा ॥४॥ वेद बाईबल कुरान इनमें ईश्वर वाक्य है कौन जरा, इन पांचूंका फेसला खुद ही किया सो सुनियो जरा ॥५॥

कहा वक्त नहीं जाय बताया रचा जिस लिये सुनियो जरा। करके परलोक करमफल भुगता है सुनियो जरा ॥६॥ वही है सबमें वही रचे है वही करमफल दे है जरा। वही है मुनसिफ दयालू इसोसे है कोई सुनियो जरा ॥७॥ कुदरतको बह सफरा अपनी करनेको रचना है सुनियो जरा। फिर कहता है जीव जड़ जग तब कारन नित हैं जरा ॥८॥ कारण परम अणुको बताया इससे ये चेपत निकला। लति अनार्या० सुनियो जरा ॥९॥

दोहा—हुकम हुवा दरबारसे, ल्यौ इनका इजहार।
स्याद्वाद बोले तबे, मुद्दईसे करि प्यार ॥१॥

सवैया ३१ मुद्दईके नए इजहार लिए जाते हैं।

कहो भाई मुद्दई तुमारे दावे मांहि प्यारे, क्या क्या नेम और हैं सुना दे सारे हमकूं। जाकूं सुनि आदि अन्त गौर करूं भलीभांति राखियौ न एक पीछे पूंछगा धरमकूं, दोनूकी निकाल तनकीह सुनवाय दूँगा साफ साफ कहूं हूँ न राखूंगा भरमकूं। भरम है तू ही एक वो ही ए करूंगा न्यावक दिखाय द्यूँगा निरदई वेशरमकूं ॥१॥

ख्याल—सुनिके उठा जठ बोल मुद्दई दीज्यौ मुद्दालेकूं निकला। अति अनार्या परखो छलसैं हरनका मत निकला। सुनौ सन्त० अति अनार्या० ॥२॥

अथ छल दलके नौ नेम और हैं तिनकूं छलमती बतावे हैं तिन सबका एक ख्याल।

बोला छल स्याद्वादसे दावा मेरा है निश्चल।
ईश्वर मेरा सच्चिदानन्द स्वरूपी है निश्चल ॥१॥
निराकार अरु सर्व शक्तिमां ज्ञानवन्त भी है निश्चल।
परम दयालु अजनमा अरु अनन्त भी है निश्चल ॥२॥
निर्विकार अरु है वो अनादि अनुपम सर्वाधार अचल।
सर्वेश्वर है सरव व्यापक भी वही है इक निश्चल ॥३॥
सबका है वो अन्तरजामी अजर अमर निर्भय निश्चल।
नित पवित्र हो सर्व सृष्टोका है कर्ता वो निश्चल ॥४॥
उसकी सबको योग्य है सेवा यह मेरे मतका तत निकला।
अति अनार्या परखो छलसें हरनका मत निकला ॥
सुनौ सन्त अति अनार्या० ॥५॥

इजहार मुद्दईका तीजे नेमसे लेकर पांच नेम तक।

नवम नेम प्रत्येक श्रावककी उन्नतिमें न सबर करना।
सबकी उन्नति होय तब अपनी उन्नति मन धरना ॥२॥
दशवां नेम है यह कि सकल जनको ऐसा चहिये करना।
इन हितकारी सभाको नेमोंमें परवश रहा करना ॥३॥
अरु प्रत्येक नेम हितकारी तिनमें स्वतन्त्रता धरना।
सुनल्यो परम गुरु यही दश नेम हमारे हैं चित धरना ॥४॥
हककी डिगरी हो मेरे वेदकी ले रहे नकद।
हगते खाते पादते करते हैं उन्नति काश गद ॥५॥
आर्य्य हूँ मैं इन दशोंने मोपै मेरा है समद।
सृष्टिका कर्ता है ईश्वर भ्रष्ट है सब जैन दल ॥
और कहो कुछ दोष जो इनमें हो वैसो सब देखतला।
कवि० ॥ सुनो० ॥६॥

अथ छलमतार्योंने दश नेमोंके सिवाय जो और इकरार किये सो लिखिये हैं।

छल मत दल कहै सुनो आप्तगुरु जैनोदल ए कहा निकला।
इनके मतमें च्यार वर्योंमें लग्य कोई नहि निकला ॥१॥
जिससें ईश्वर हो प्रसन्न सो कारज इनके नहि निकला।
इन्द्रादिक पद मिले सो ऐसा ए मत नहि निकला ॥२॥
भक्ता इनके लेश नहीं है ईश्वर इनसे ही निकला।
हम तो उसीकूँ पूजते हैं जिससें तीये जगत निकला ॥३॥

गजल।

पूजते हैं ए बनाके पत्थरोंकी मूर्तिको।
तनपे न हिलगा भी जिसके साधुकीसी मूर्तको ॥
पूजते हैं हम तो सच्चित सर्वव्यापि अमूर्तिको।
न्यायकारी वेद वक्ता मानते नहि धूर्तको ॥४॥

ख्याल।

विधवाका नहिं इनके ब्याह म्हारे वेदमें इसका ब्याह निकला।
एक मेरे तो दूसरा करि तीजा करना निकला।५॥
चौथा मरे तो कर ले पांचवा जीता तजिकर ना निकला।
ए अति निर्बल करे तृत अरु मूवा मरना निकला॥६॥
ताकत अपनी ए न बढ़ावें घर उजड़ करना बिनि काला।
तजि सब संपति वनोंमें बसना फिर इनके निकला॥७॥
विद्याका बल इनके नाहीं तन धनका बल नहिं निकला।
जन बल इनके नहीं फिर राजन बल इनके निकला॥८॥
वेद शास्त्रका किया नाश इस दलने सदासे ए निकला।
अति नामर्दी मर्द हैं हम ए नामर्द हैं ए निकला॥९॥
हमसे लडे तो दे दे पटके तन धन मन सब दे निकला।
तो भी हिमारी न होगी स्वारथ छलबल कह निकला॥१०॥

दोहा—पेश किये दरबारमें मुद्दईके इज हार।
स्याद्वाद हाजिर खड़े, गौर करे सरकार॥११॥

गजल

सुनाइ जहार ईश्वरने लगा बिलकुल ही वो झूठा।
नहीं वंशाका सुत है ये मगर हिरदेका है फूटा॥
सरासर धूर भरता है ये छलसे सबकी आंखूंमें।
करूं इनसाफ अब ऐसा रहे थिर धर्म लाखोंमें॥

ख्याल।

हुवा हुकम आवे मुद्दाले धर्मसिंह जिन आ निकला।
किया हवाले इसका इज हार दो सरकारी विकला॥१२॥

अब स्याद्वाद वकील मध्यस्थ जिन धर्म मुद्दालेका इज हार लेकर जिनेश्वरके दरबारमें सुनावे है ख्याल।

स्याद्वादने धर्मसिंहको केवलज्ञान मई जाना।
परम दयामय दया ही परम धरम आप न माना॥१॥

हुई रपोट झटपट वकीलने धरमसिंह प्रभु है स्याणा।
इसके गुण अरु छलमतीके औगुण सुणियों नाना ॥२॥

एकेन्द्रीसे ले पंचेन्द्री तक ए मुकद्दमामें छाना।
तुमकूं दयामय धर्मसे सुख अथ दुःख पहुंचा प्राणा।३॥

दई गवाही त्रिजग जंतुने दयासे सुख पाए नाना।
दया बिन छालमत जगतमें देंगे दुःख हमकूं नाना।४॥

हत्या करवायेंगे हमसे अन्य करावेंगे नाना।
झूठा कर्ता बनाके पुजवा दुःख देंगे नाना ॥५॥

चोरी करवायेगे हमसे परनारीकी ए नाना।
शील हमारा बिगडवा दुःख भरवायेंगे नाना ॥६॥
ये तो कहेंगे करो तन ऊंचे भक्षलक्ष अभक्ष्यो नाना।
अपनी उन्नति करेंगे हमको दुःख देंगे नाना ॥७॥

कताके बन पंडेसंडे तूफान घेठवाके नाना।
पटकि परिग्रह जालमें भरमायेंगे जग नाना।८॥

पांचू पाप कराके हमसे हत्या करवाके नाना।
रौलेमें हत्या रलाके बात बना देंगे नाना ॥९॥

स्याद्वादकी तरफसे जंगला।

कहत परजा धर्म हमकूं सब तरह परमाण है।
ये सर्व जीवोंको प्रभूजी गिणें आप समान है॥

इसमें न हिंसा झूंठ चोरी शीलवन्त महान् है।
संतोषमें संतुष्ट है पंचान दया निधान है॥
सावधान है अपने काममें मुद्दई तो छकमक निकला।
इति सत्तार्थी० ॥ सुनो० ॥१०॥

अब—आगे पढ़ी पेशी हुई तनकीह निकाली गई थी सो सुनाई जाती है अरु गवाहोंके इजहार हुईके और सनद

मुद्दईकी मांगी गई। हुकम जिनेश्वर न्यायकारी मुनविफका ॥१॥
सुन त्यों छलमत मुद्दई सरु मुबा ले अरु तुम भी चिकला ॥२॥
प्रथम नेमको किया गौरव बरौरतौर थी वे जड़ निकला।
सब विद्याका प्रभ वो करता इस मतमें निकला ॥३॥
दूजे सत्य पदारथ जितने तिनका कोई कर्ता निकला।
नेम रूपसे किया है कथन यही दावा निकला ॥४॥
ल्याओ अपना सबूत नहि वो दूंगा समासेती निकला।
अंग्रेजी सर्वां बुरा लिए सठमाही बिकला ॥५॥
स्याद्वादकूं हुवा हुकम तुम देखो इन सबकूं विकल्या।
है अन्याई कि हैं सब न्यायवान सज्जन दिकला ॥६॥
खानपान है कइसा इनका कोन जाति है ए बिकला।
देखे जैसे बतादि ए स्याद्वादने वेबकला ॥७॥

गजल।

खाते हैं कबाब और पीते हैं शराबको।
समझते नहीं दिलमें कुछ पापो सबाबको॥
जानते नहीं आर्य मतके सवालो जवाबको।
पावते हैं शेखियां नहि गिणते नबाबको॥

खयाल।

कोई कायथ कोई खत्री कनौजी कोई द्विज त्रिजवे पत निकला।
अति अनार्या॰ ॥ सुनो सन्त॰ ॥

सनन्दोंकाल सुनियों खयाल।

करी शहादत पेश सत्य परकाश असवसे पुर निकला।
भरा खेदसे पेश किया वेद जो उसका गुर निकला ॥१॥

ईश्वर सुमरे है कि नहीं कोई समझायें तू है कैसे भला।
सहिताका वेद है आर्य सुमारे कौन भला ॥३॥

कत्ता उसका कौन है उससे देहमसे तू हमें बतला।
सुनके कौरन सबीलोंके दिये उत्तर उसने बतला ॥४॥

आत बताऊँ दया है मेरी दयासे छह द्रव्य अब निकला।
मुझको खबर है असत थी उसका सब माया निकला ॥५॥

नहीं है कर्ता कोई सृष्टिका जो द्रव्योंका जगत निकला।
एक अचेतन और न कोई निकला ॥६॥

जाति द्रव्य गुण न्यारे न्यारे अमिल मेल इनका निकला।
कारण किसका कौनसा कारज किसकाको निकला ॥७॥

जड़के चेतन होय नकबहू चेतनसे जड़ निकला।
बांझके बेटा सुन्या अनचेअनी बेटा निकला ॥८॥

स्वयं सिद्ध हो जगतकी रचना मेरा हो ईश्वर सत निकला।
सतभावसे आर्य हूं मैं ए अनारज मत निकला ॥९॥

आस्तिक हूँ मैं सदा सभी परमेश्वरका भगत निकला।
ईश्वर मेरा केवली केवलग्यान मई निकला ॥१०॥

अन्तम भव संयुक्त सिरी अरहंत जगतका गुरु निकला।
सत मतमें रत अर्ह पूजाया धातूसे सत निकला ॥११॥

व्याकरणोंसे सिद्ध किया है नाम इससे सत निकला।
घट मत पंडित करे परमाण उसे यों सत निकला ॥१२॥

सत विद्याका वेद है उसका द्वादशांग सोई सत निकला।
मुख्य नाम हैं च्यार अनुयोग सनातन सत निकला ॥१३॥

प्रथम १, करण २, चरणकरण ३, द्रव्य ४, च्यारों करि सो गर्भित निकला, वक्ता उसका आप्त अरहंत तरण तारण

निकला। यह अनाप्त वाचालनी यही मर्पके अन्तरगते निकला। अतिअनार्या० ॥

आगे अदालत तजवीज करती है उसका बयान सुरू किया जाता है सबूत गुजर चुके ॥ सवैय्या इकतिसा ॥

पापके हुक्मकूं वकील स्याद्वाद ऐसे मुद्दई मुद्दा लेके बयान सुनिलिए हैं, फिरि अरहन्त भगवंतकी हजूर मांहि हाथ जोर दोनूं इजहार पेश किये हैं। एक ओर छल दल एक ओर जैन दल फैसलेके हेत छलियोंसे पूछ रहे हैं, तुमरे गवाह तोड बोय गए तुमही कोल्यावो जो सबूत कछु और बाकी रहे हैं।

ख्याल।

बोले छल मत वेद है सवाइ न काही नास्तिक मत निकला।
हमतो हैं आस्तिक हमारे ईश्वर इनके तो नहि निकला ॥१॥
वेद सनन्द है मुख्य हमारी सत प्रकाश उससे निकला।
भाष्य भूमिका उसीके सत्यारथका तत् निकला ॥२॥
तब पूछे अरहन्त सभामें सुनो मुद्दईके बिकला।
अंग्रेजोंसां नानारज फुलनिर्बुद्धी सब बिकला ॥३॥
कहो छल मती तुमरे मतमें सतका कर्ता नो निकला।
सत्कालक्षण कहो तुम क्यों है प्रथम ए दो बतला ॥४॥
अगर कहो थी सृष्टि तो सबका कर्ता वो कैसे निकला।
न थी सृष्टि तो कहो सत वस्तु भई कैसे बतला ॥५॥
अगर कहो थी सत असत्य तो नेम किया ताते क्यों रहला।
किसने सिखाया पढ़ाया किसने तुझे तू ए बतला ॥६॥
कहता है तू आप तो तू है सत कि असत ए दे बतला।
अगर असत है तो तेरी बात है सत कैसे बतला ॥७॥

अगर तैं परमेश्वरसे सुना है जिसको वो कहता है सो बतला
करताका करता हुया क्यों सिद्ध यहां तू ए बतला ॥८॥
हो गया असत ए ईश्वर तो वो सत है उसको बतला।
फिर उस सतका होय कोई करता वो वो भी बतला ॥९॥
जो तू आज तेरा ईश्वर सत है उसका कर्ता दे बतला।
असत पदारथ असत विधाका है करता को बतला ॥१०॥
असतका करता और है कोई तो करता भए क्यों बतला।
एक ही है वो करे क्यों ऐसे अनरथ ए बतला ॥११॥
रह गया मुंह पातेका माता कहा करता वो गलत निकला
सतका लक्षण अस्ति है वस्तु अरथ ए हो निकला ॥१२॥
तजि दिया छलते हो गए निर्मल अर्हतका मत सत निकला
कर दिआरंभ अनारंभ कुछ कलियुग निर्लज निकला ॥१३॥
कर दिया खण्डित प्रथम नेम सब दाबेको ले बह निकला।
कट गई जड़ जब कट गया गूलर दरखतडे निकला ॥१४॥
सठ बोला बेशरम हमारा परमेश्वर तो असत निकला।
एक नेमके असत संदावास सब क्यों असत निकला ॥१५॥
असत भी है तो सत है हमारा ऐसा ये दुर्मद निकला।
अति अनार्या० ॥१६॥

पुनः बहस अदालत।

सुन रे छल मत नास्तिक निर्दय तू तो अनार असत निकला।
वे परमेश्वर बिना गुरु घर भ्रम रम वे पत निकला ॥१॥
कहे भरमसें असतको सत तू चितक है किसको दे बतला।
आनन्दरूपी वस्तु बिनकी न है वो तू देवता ॥२॥
कहे अयवस्तुकू सठतू निराकृत सर्वशक्तिवाला बतला।
बिना वस्तुके न्यायकारी कहे किसको देव तला ॥३॥

दूजे असत बचन अब बोले, स्वपर बताना ए निकला।
असत बचनसे स्वयं परमाण बताना ए निकला ॥२॥
नहीं कोई करता सत पदार्थका इसमें असत कर्ता निकला।
कर्ता कहना वृथा ईश्वरको बताना यों निकला ॥३॥

परन्तो रांडका पुनर्व्याहका बिन निषेध इसमें रहत्या गर्भित है चोरी अरु कुशील बहुत अपावन।
जिसमें हक नहीं मात पिताका नहीं हक मामाका निकला।
जिसको गयाही देव गुरु अगनि पुरोहित है निकला ॥४॥
ऐसी कन्या करि संकल्पित सुत जिसको पहला निकला।
पंचोंके आगे कर दिया दान स्व हक नठा निकला ॥५॥
बोले सकल गवाहरी कन्या तेरा धरम अब ए निकला।
अपने कन्तके बैठ आगांई तरफ शक कथ निकला ॥६॥
बोली कन्या बचन अरे यह तूझिगमें तेरा पति निकला।
बिन परिणीता परको त्यागी तूझहीमें हित निकला ॥७॥
तो मैं ओऊं पांव इसके उन्नति रीति करे सकला।
उजर करे तो धरमन बिगाडो ऐ सकला ॥८॥
दिया वचन अब पठो जो कन्या देखे पंच प्रजा सकल।
कन्तके उसके वचन सब साक्षीके बीचमें यों निकला ॥
बचन दिया मैं परतिरियाका तेरा प्रतिपालन थिर निकला।
तू मेरी तिरिया अगर पर पुरुषसे तेरा हित निकला ॥९॥
ना मैं कन्त ना तू मेरी तिरिया आर्य व धर्म गलत निकला।
सुनके हुकमको कहा तेरी पा लागूं आज्ञा ए कृत निकला ॥१०॥
देती है वचन बिगते हैं बांए ही पन्थ आता है चला।
धर्म सनातन व सुविध कर दिया कन्यादान भला ॥११॥

पिताने कर दई त्रिया पियाकूं जिसकी वो बाका पति निकला।
मर गया जब वो न बह मरता हुवा यों लिख निकला ॥१२॥
मरतामें करता हूं वसीयत सुनियों आर्य धरम सकला।
मैं निज वनिता अमुक जनको दे दई सुन ल्यो सकला ॥१३॥
हक उठा लिया मैंने अपना मिलके तुम आरज सकला।
करवा दीज्यो खसम अरु थपवा दीज्यो हक विकला।१४॥
कहो छलमती आर्यजनोंमें ऐसा लिखा किसका निकला।
पुनर्व्याहका पतिका किसके हुकम कहुं कब निकला ॥१५॥
जिसकी रूसें हुकम है तुमकूं पुनर्व्याहका सो दिखला।
कौन कालमें दिया ए किसने हुकम ए यों बतला ॥१६॥
जिसको तुम सतमन्थ बता रहे करता जबकि असत निकला।
असत् है कारज तुमारा वेद् असत् बिलकुल निकला ॥१७॥
एक मरे दूजा कर लेवे दूजा जात निती जा निकला।
तीजा तजिके करे पति चौथा किसका लिखा निकला ।१८॥
अन्ध पंगु निर्धन पतिकूं तजि करे पांचवा क्यों निकला।
पांच हुकममें एक ही अछलका तुम यो दिखला ॥१९॥
ना तर ए क्यों अटपट जोड़े क्या तो दे सटपट दिखला।
नातर तुमकूं बढा कर स्वरपे अब धूमा निकला ॥२०॥
परतिरियाकी चोरी करके सन्मतार्य भए कैसे भला।
कौन है स्वामी बिना अज्ञा लई क्यों ए दे बतला ॥२१॥
भ्रष्ट किया क्यों शील बिराना अपना क्यों खोया बतला।
अरे कुशीलो किया व्यभिचार क्यों छलसे यों बतला ॥२२॥
पर पुत्रीका हरण मरण है, माता पिताका दिया दिखला।
शील बिगाड्या सुने तब मरणसे ज्यादा दुःख निकला ॥२३॥
बैर बढे मर मार हो जगमें जन्म जनममें दुःख निकला।
अरे लंपटो जिया दुक तब क्या तुझे कुछ सुख निकला ॥२४॥

तृष्णाके कारन करेगा हत्या त्रिष्णासे असत बकेगा बिकला।
त्रिष्णाके कारण, करे जग चोरी हरे परत्रिय दिकला ॥११॥
तृष्णाके कारण महापर्यंकूं भ्रष्ट करे गए बिकला।
नारि बिरानो, तकोगे जिस कारन था रावन निकला ॥१२॥

तृष्णाके कारण धरम तजोगे दान पुन्य तीरथ सकला।
देवगुरुकी, मूरतिको फोडोगे तोडोगे मठ बिकला ॥१३॥
ध्यान करोंगे असत ब्रह्मका ज्ञान करोगे असत सकला।
असत ग्रन्थकूं, मता सत क्यों तजि दिया सनमत बिकला ॥१४॥

वर्णाश्रममें रहे न आप तुम भए वरणाशंकर सकला।
वेश्याके सुत, भए तुम बांझके सुत न भए बिकला ॥१५॥

पशु होमों अरु असत्य बोलो चोरी करो परत्रिय सकला।
शील बिगाडो करो अति तृष्णा तुम हरदम बकला ॥१६॥

यों पंचांग करो तुम हत्या धरमसे द्वेप परम निकला।
जैसेकूं तैसा कहा हम तुम रातो निंदक मत निकला ॥१७॥
सब विद्याका करो नाश तुम कहु कुछ करना कुछ निकला।
मिथ्यादृष्टिसे, धर्म जि अधरमका था ए पथ निकला ॥१८॥

त्रिशनायुक्त त्रिविधि जो उन्नति जो मैं ऊपर कह निकला।
नवम नेममें, उन्नति वैसी करो ऐसा छल निकला ॥१९॥

त्रिश्नामें है निपात हे सठ तू अति हठमादी निकला।
नियम करावे, अकारथ परमारथसे बिमुख निकला ॥२०॥

बाप्या था तें समाज छलका जो कुछ मुख बिकला दिकला।
रखो सब दशवां, नेम तेरी क्षेम कुनबको दह निकला ॥२१॥

हुकम दिया प्रत्येक रहो तुम मुकेद फेदसे सो निकला।
स्वतन्त्र होके, करो दिल चाहे सो पढ़ो मह निकला ॥२२॥

कहूँ खुलासा छल इस छलका जो कोई निकले दोष भला।
नोनेमोंमें, अकेला मत ना बादलियो ए निकला ॥२३॥

सरब जगतके समाज जुडके एकचित्त अब कर क्यों भला।
तब ही बदलिगो, नहीं तो मत ना बदलिगो ए निकला ॥२४॥
इसमें छल मतकी है यह पुनि क्यों इक चित होने हैं भला।
क्यों निकलेंगे, हमारे जालमें आए पखेरू भला ॥२५॥
हो गए खण्डित यहाँ नेम तेरे धरम विहबन मत निकला।
इति जलिमार्या ॥

अथ सन बतावें छन्दमें मठण ख्याल।

सुनो छलमता सनमार्गका सत्य धरम समझाते हैं।
दोय दशा हैं मुक्ति अरु मुक्ति केवली गाते हैं ॥१॥
दोनू आदिअनादि सदा ध्रुव वस्तुस्वरूप वहां पाते हैं।
एक आतमा मुक्ति अरु मुक्तिमें सिद्ध कहाते हैं ॥२॥
मुक्तिमें भोगाशक्त आतमा चहुँ गतिमें दुःख पाते हैं।
सुरनर नारक पशु गति भ्रमत सदासे आते हैं ॥३॥
दोय भांतिके जीव है तिनमें भव्य अभव्य कहाते हैं।
एक आर्या अनार अहले तुमें बताते हैं ॥४॥
तिनका वर्णन पृथक पृथक परमागमसे समझाते हैं।
दोय दशा हैं मुक्ति अरु मुक्ति केवली गाते हैं ॥५॥

अथ दूसरे नेम सम्बन्धी परमेश्वरके सर्व गुण भव्य जीवमें ही सिद्ध करे हैं जिनको खण्डण कर चुके थे।

भव्य राशि दो भांति हैं प्यारो एक मुक्त इक संसारी।
मुक्त गए सो भए वे सिद्ध निरंजन अविकारी ॥१॥
परमेश्वर है उनकी संज्ञा तब शिव परमानन्द भारी।
वर्ण रहित प्रभु सर्व शक्ति कर भव बन्धन भारी ॥२॥
तोडे कर कर न्याय सबनके दे देरिण बया विस्तारी।
भए अजन्मा अनन्तानन्त धर्मों की अधिकारी ॥३॥

थेवे अनादी अनुपम चेतन सर्वज्ञ गुणके आधारी।
सरवेश्वर भए व्यापि गए तिन में दरवसब इक वारी ॥४॥

सबके भए वे अंतरजामी अजर आजर अमर अरु भवहारी।
जित घात गहैं भए गत करता करम किया सारी ॥५॥

सृष्टि अनादि निधन है अब थे इसमें थे करता भारी।
रागादिकको त्रिविधि वसु विधि करमोंके थे अधिकारी ॥६॥

तिनके कारना करें थे किरिया आश्रव होता था भारी।
अब क्रिया संवरा निर जरा हरता भी थे वे भारी ॥७॥

भोक्ता भी थे करम अफलके मुक्ति गए भए अविकारी।
परम कृतारथ भए कृत कृत्य क्रिया मिट गई सारी ॥८॥

तिनके नहि कछु करना धरना मरना उपजना है दुःख भारी।
परम सुखी प्रभु परम परमेश्वर निष्कलंक सदारी ॥९॥
छह मतार्थ जन ऐसे प्रभुकूं करता हरता कहाते हैं।
योग दशा है मुक्ति अरु मुक्ति केवली गाते हैं ॥१०॥

सुनो छहमतो सब मतार्थका सार परम समझाते हैं योग दशा हैं।

अथ भव्य जीव वरननम् ॥

अब रही भव्य राशि जीवाकी तिनका वर्णन करते हैं।
अरु अभव्यका जो कि संसारमें रुल रुल मरते हैं ॥१॥

हो गए सिद्ध कृतारथ ए दोनूं अकृतार्थ पद धरते हैं।
जीवां फुरवत अनादी कर्मोंसे ए दुःख भरते हैं ॥२॥

द्रव्य करम है कारण दुःखका सबको भूल पकड़ते हैं।
यही है अनादी बलीसे कर्ता हो कर्मको करते हैं ॥३॥

करते है जैसा कारज तिनका भोक्ता हो फल भरते हैं।
भूल मिटाके अंतमें हो अरहंत वे तिरते हैं ॥४॥

करता हो जब करम अनारज आर्य कहो शिव पाते हैं।
दोय दशा हैं सुक्ति अरु मुक्ति केवली गाते हैं॥५॥
ऐसे आरज जीव जगतमें पांच लब्धि जब पाते हैं।
द्रव्य क्षेत्र अरु काल भावाश्रय भूल मिटाते हैं॥१॥
सत गुरुके सतसंगतें ए नर अनुयोगी कहलाते हैं।
पीछेसे जिसका योग हो सो अनुयोग कहाते हैं॥२॥
सो अनुयोग हैं च्यार अनादी वो सत वेद कहाते हैं।
व्यक्तिका वक्ता उन्होंका आर्हत पद सब गाते हैं॥३॥
वेद विचारका नाम हैं संतो अविचारी दुःख पाते हैं।
तिस विचारका योग भवि जीवोंके सादि बताते हैं॥४॥
अपने गुणमें हैं यो अनादी जब गुरु उन्हें सुनाते हैं।
सादि शिष्यकूं सादि हो वो अनुयोग कहाते हैं॥५॥
सो अनुयोग वेद सत च्यारों सत विचार कहलाते हैं।
इन भवनमें सत धरमकी शिक्षा जिनसे पाते हैं॥६॥
तिनका कछु संक्षेप खुलासा तुमको समझाते हैं।
दोय दशा हैं सुक्ति अरु मुक्ति केवली गाते हैं॥७॥

अथ प्रथमानुयोग नामा प्रथम सत वेदका तात्पर्यमें ख्याल पांचवां।

प्रथम वेद प्रथमानुयोग हैं जामें ए सत पुरुष कथा।
जिन का शलाका पुरुष है पदवी तिसमें है उनकी कथा॥टेक॥
ए सब पुरुष प्रमाण पुरुष हैं तिनकी है त्रिजग प्रमाण कथा।
परम पुरातन पुराणों पुरुषोंकी हो सो पुराण कथा॥२॥
जिस करनी कर उनके जगमें भोगे सुख-दुःख पूर्व यथा।
तिनका है दीपक पुन्य पापोंके है फलकी जिसमें कथा॥३॥

जिस करनी करम ए शलाका पुरुष हैं तिसमें उनकी कथा।
तिनमें मुख्य है प्रथम चौबीसों तीर्थंकरकी कथा ॥४॥
द्वादश चक्रीनौ बलिनौ हरिनौ प्रतिहरिकी जिसमें कथा।
प्रथम वेदमें सरब हैं गर्भित जितनी हैं और कथा ॥५॥
ए धर्मावतार हैं सारे उनका सुन सब शेष पता।
तपके योगसें घातिया कर्मोंको कर निर्मूल हता ॥६॥
पाई केवलज्ञान विभूति आत्मोन्नति कर सर्व हता।
आर्य जनोंका अनारज दलके भरमको दई है बता ॥७॥
सन्मतार्य दलका उसहीके ज्ञानसे पाया हमको पता।
जिनकी शलाका पुरुष है पदवी उनको है उसमें कथा ॥८॥

अथ सन्मतार्य समाजका लक्षणमें ख्याल पांचवां अर्थात् जिसके आस्तिक्यता हो संवेग हो अनुकम्पा हो कृतकारित अनुमोदना युक्त ऐसे जीव सब सन्मतार्य हैं अर्थात भरत हैं ॥ ख्याल ॥

जिसके मन आस्तिकता होवे अरु संवेगकूं धरते हों।
अनुकम्पा हो तथा वैराग्यकी भावना करते हों ॥१॥
ऐसे नर सन्मतार्य हों हैं कृत कारित जुति करते हों।
अब सुनि आस्तिक कौन हैं जो किससे यों डरते हों ॥२॥

इक संसार है ए मोक्ष है दो विध जीव उचरते हों।
कर्म फल मनिके पाप करमसे डरते हों ॥३॥
छोड़े पापरु पुन्यका कारण पूजनकूं मन धरते हों।
सो संवेगी आप हैं दया जिसमें भरते हों ॥४॥
निजसें परमें भेदने वाले द्रव्या पालन करते हों।
हो वैरागी राग अरु द्वेषकूं हनि तप करते हों ॥५॥

ऐसे आर्य समाजका लक्षण सब पुरुषकूं गए हैं बता।
जिनको मन्नाता पुरुष हैं पक्षी तिनकी हो जिसमें कथा ॥६॥

अथ सच्चा आर्यसमाजमें परमेश्वरके सामान्य है जिसकी आज्ञामें सज्जनआर्योंका मोक्षमार्ग पहचान्या जाय। ख्याल ॥२७॥

पंच प्रपंचों मत तजि पटमें हत्या पंच तजि जिसनें।
अंग बिगु सत असत अरु मण्ड वचन त्यागे जिसनें ॥१॥
त्यागे सब पक्षार्थ निकम्मे परतें परहोंके जिसनें।
परम महा हो तजी अशुद्ध भावना सब जिसनें ॥२॥
स्वात्म परात्मकी करी पछाति तजि दई तृष्णा जिसनें।
ज्ञान सम्पदा पाय सम्पूर्ण दशा धारी जिसनें ॥३॥
आदि मति कुमति पट दर्श तजे जिन पटदर्शन परखे जिसनें।
परखि दरब छह काल लिये जिन चिन दोही तव जिसनें ॥४॥
पट आवश्यक क्रियासें तप करि हरे घातिया विघ्न जिसनें।
प्रगट करि जिन अनन्तो लब्धि चतुष्टयको जिसनें ॥५॥
पाके केवलज्ञान विभूती आत्मैश्वर्य धरा जिसनें।
भया कृतारथ कर्म सब करिके विजै किए तजि जिसनें ॥६॥
जीति त्रिलोक विजै तिन पाई जिन संज्ञा पाई जिसनें।
जि धातुके अर्थकूं सार्थ करा परगत जिसनें ॥७॥
अर्ह धातुकू सार्थ करी जिन शब्द शास्त्र देख्या जिसनें।
उस परमेश्वर सिरी अरहन्तको पहचान्या जिसनें ॥८॥
वह अरहन्त अनन्त गुण तम अन्तम भव पाया जिसनें।
करी तैयारी मुक्तिसें मुक्तिकी सो देख्या जिसनें ॥९॥
इन्द्र धनेन्द्र गणेन्द्र मुनीश्वर ध्यावें सब चक्री जिसनें।
बलनारायण तथा प्रतिनारायण ध्यावें जिसनें ॥१०॥

मंगलका घर वही है मंगल मन्दिर वही कहाते हैं।
युगपत सुर नर मुनीश्वर गण आशीस सुहाते हैं॥२॥
भक्ति भावसें रचें देवता अन ईश्वर कहवाते हैं।
तिष्ठें जब तक रहें फिर चलें तो कुछ नहीं पाते हैं॥३॥

करते हैं जब विहार नभमें धीरे चरण उठाते हैं।
कमल रचें सुरवरपि प्रभू पद पंकजन छुवाते हैं॥४॥
जहां तिष्ठें तहां तत्क्षण सुरगण समवशरण रचि ध्याते हैं।
अनुयोगूं का योग इस भांति भव्य गण पाते हैं।५॥

इत्यादिक बातोंका प्रथम अनुयोगसें चल सकता है पता।
जिनकी शलाका पुरुष है पदवी तिनकी है सबमें कथा॥६॥

अब दूजा करणानुयोग सत वेदका भाव बताते हैं।
करण नाम है इन्द्रियोंका यों सतगुरु गाते हैं॥१॥
सन्मातायंका धर्म दयामई है दयाके हेत सुनाते हैं।
चौराशी लख जीवकी जोनिका पता बताते हैं॥२॥

एकेन्द्रीसे पंचेन्द्री लौं जहां जहां जन्म धराते हैं।
सुरनर नारक पशु चहुँगतिका भेद बताते हैं॥३॥

जबतग खबर पड़े नहीं जियाको जीव कहां कहां पाते हैं।
तबतग जग्ने इसें सुनि ज्ञान नेत्र खुल जाते हैं॥४॥
ज्ञान ध्यानमें जांचि जीवको हिंसासे भय खाते हैं।
सकल परिग्रह त्यागि आरम्भसे चित हटाते हैं॥५॥
जहां आरम्भ दया तहां कैसी भावना भाते हैं।
तीन लोकका इसीमें प्रगट स्वरूप दिखाते हैं॥६॥

स्वर्ग मृत्यु पातालकी रचना जैसे हैं सो समझाते हैं।
सुनके जियको हिदे झटपट पट खुल जाते हैं॥७॥
आर्य अनारज क्षेत्र नेत्रकी द्रिष्टिमें जो नहीं आते हैं।
सबके पेटसे हस्त आमलक तुल्य हो जाते हैं॥८॥

ऐसी समझ स्वतः है जिसकूं वही चेतन गाया है।
जिसको परमाणु कहैं इलंदक सु अचेतन गाया है॥६॥
घटन मटनकी शक्ति न जामें परमाणूंयों बखरते हैं।
स्यात्मलब्धिसे जीव अरहन्त भवमें तिरते हैं॥७॥

जीव ऐसा नाम किस कारणसे है॥

किस कारण यह जीव कहावे सदा जीवता आया है।
जीव है अब भी जीवता जावगा यों फरमाया है॥१॥
कटै नहीं हथियारसैं कबहूं अग्निसे भस्म नपाया है।
गलै न जलमें पवनने जिसको नाहिं सुखाया है॥२॥
इस कारन सत्चित कहलावे यानी द्रव बताया है।
समय सरणी सार हैं च्यार शक्ति यों गाया हैं॥३॥
च्यारों कहि है सचित्र वोजयत्र महाराज यों गाया है।
समय भेद नहि भेद नहि द्रव्यका यों फरमाया है॥४॥
चाहो कहो जीव चाही चेतन समयसार फरमाया है।
चाहो चतुर चहुं खुलासा चातुरका यों समझाया है॥५॥
ज्ञानदर्शन अरु सुख बारज च्यार मई फर्माया है।
च्यारों गुनसे गुणसे भिन्न न गाया है॥६॥
गुण हो भिन्न भिन्न हो गरतू यहां दोष ए आया है।
किसके आसरे रहे गुण यों अभिन्न बतलाया है॥७॥
समझेगा कोई समझानहारा जो जनमत कहलाया है।
नहि समझेंगे अनारज जीव अभव्य जो गाया हैं॥८॥
अदयानन्दी कहे परमेश्वर जड़से चेतन घडते हैं।
स्वात्मलब्धिसे जीव अरहन्त हो भवसे तिरते हैं॥९॥
तातें च्यारों गुणमई चेतन एक द्रव्य फर्माया है।
ज्ञान अनन्ता अनन्तादर्शन जिसमें पाया है॥१॥

पाके पूरण लब्धि आतमा परमातमा कहाया है।
कर्म विजय करि जीव कायरमें पेश्वरज पाया है॥९॥
केवल ज्ञान सपाग हुए अर्हत भगवने ध्याया है।
भद घातुके अर्थगू साथ किया मुनि गाया है॥१०॥
घाति कर्म निर्मुक्त हुआ तब जीवन मुक्ति उचरते हैं।
इशान्त लब्धिसे जीव अरहन्त हो भवसे तिरते हैं॥११॥

अथ जैन दृष्ट हिगारी।

गणधर इन्द्र धनेन्द्र चाकधर हलधर शीश झुकाया है।
नर नारायण रटैं जिसको ईश्वर पद पाया है॥१॥
जीव हुआ अर्हत सकल परमातम वही बताया है।
चयार वेद करि वही निर्वेद हो सिद्ध कहाया है॥२॥
मुक्त हुआ तब होगया निष्कल वही जीव यह गाया है।
सत चित जिसका आदिमें लक्षण तुझे सुनाया है॥३॥
कर्ता कर्म क्रिया सब छूटी परमेश्वर कहलाया है।
होके निरंजन जगतमें किसको वो कहने आया है॥४॥
सकल सृष्टिका कर्ता है ईश्वर किसको उसने बताया है।
जीवसे न्यारा कौन है जड जिसने तू भकाया है॥५॥
परम अणू है ईश्वर तेरा वही ते कारण गाया है।
आर्य दर्पण देख ले तैंही तो नामक रटाया है॥६॥
लगा झांकने दर्पणसे दर्पण नाकका ए ढंग पाया है।
तीन फांक हैं तीनका आंकसा देखि लजाया है॥७॥
एक टांक थी हली मांसकी जिसके पेकाक मचाया है।
फट गई जडसे निकल गई वांकड बावन आया है॥८॥
जैसो करे भरे सो तैसी हमने झूठ न गाया है।
जन्मतार्य है जैन मत जीति जगत जस पाया है॥९॥

हुक्म हुवा मुनसिफीसे प्रभुका जिसने छल ए बताया है ।
हारा गया वो मुकद्दमा धरमसिंहने पाया है ॥१०॥
छपे पड़े अनारज दलको जैन जगत मन भाया है ।
ऐनुल राहत हमारी नजरोंमें यही समझाया है ॥११॥

गजल—पढें सब जैन दृढ़ इसको पढें सब संतु सद्‌ज्ञानी, रटें अरहन्तके पदको करें सब ध्यान विज्ञानी । है सदा जैन पक्ष छल बुद्ध करोगे गौर तो प्राणी, तिरोगे येन भवसागर हरोगे कर्म दुःख दानी । सन्न नवे इतिस फर्यादिको दावा खारिज करते हैं ॥१२॥

स्वातम लब्धिसे जीव अरहन्त हो भवसे तिरते हैं ।
चौथा द्रव्यानुयोग जब गौर रूप पर करते हैं ॥१३॥
स्वातम लब्धिसे जीव जैन अरहन्त हो भवसे तिरते हैं ॥१४॥

इति श्री अद्यानन्दी छल नतार्थ मत खण्डन सम्यार्थ जिन धर्म मंडननामा अध्याय ३१ सम्पूर्णम् ।

अध्याय बत्तीसवां

श्री मत्स्याद्वाद बुद्धि वर्द्धनाय जिन चन्द्राय नमः।

अथ ढूंढ मतानें मतवाला खण्ड मत प्रतिमा खण्डन जिनमत प्रतिमा पूजन मंडणका अध्याय ३२ वां लिख्यते। तत्र दो मंगलाचरण है सोः इष्ट नमस्कार।

दोहा—वन्दूं चिद्घनज्ञानमय, ओंकार पर सिद्ध।
हूं स्थापि नमूं, सिद्धि हित सब सिद्ध ॥१॥
नमूं त्रिविध सद्गुरु त्रिविध, साधु सकल निर्ग्रंथ।
नमूं धर्म स धर्म जाको, स्याद्वाद जयवन्त ॥२॥
स्याद्वाद महिमा अटल, को कवि करे बखान।
निराबाध जाते सधे, स्वपर भेद विज्ञान ॥३॥
ओंकार अक्षर विषे, गर्भित आतम रूप।
सो आतम परमातमा, एक अनेक स्वरूप ॥४॥
ओंकार सब मत विषे, मान्यौ सब संसार।
जामें गर्भित पंचपद, सदाशिव श्री नवकार ॥५॥
अक्षरको मर्याद है एतक्षः पर्यंत।
जो अक्षः है आतमा जाके भेद अनन्त ॥६॥
ए अक्षः को अर्थ जो चिदानन्द है सोय।
अक्षमें अक्षर जिके सोपि चिदानन्द होय ॥७॥
स्वर उपयोगी चिह्न हैं चिदानन्दको वीर।
नस्वर केवल जड कह्यो जैसें मृतक शरीर ॥८॥
अक्षर अक्षर आतमा गुण अनन्त जिसमांहि।
ज्यों ज्यों अक्षर अनुभवो त्यों त्यों गुण अधिकांहि ॥९॥
शब्द वर्ण व्यवहार करि सब जानत साकार।
निश्चय चेतन चिह्नमय अलख अमूरति सार ॥१०॥

भेद कियो ते तिर गये बिना भेद करि खेद।
मरि मरि धरि धरि तन मरे पढ़ि पढ़ि च्यारों वेद ॥११॥
ओंकार मम नाम है, मम घट केवलज्ञान।
मम घट सिद्ध समाधि है, मैं गुरु त्रिविध महान ॥१२॥
मैं सबमें सब मोविषै, अनमोमें कोई और,
अनमें काहूमें वसूं, मैं इकमें सब ठोर ॥१३॥
स्याद्वादमें सिद्ध है, जन्म मरण ध्रुव युक्त।
सत लक्षणमई आतमा परमातम सत मुक्त ॥१४॥
है अनन्त ही आतमा, है परमातम अनन्त।
कहैं एक ही सर्वथा, मिथ्याती एकंत ॥१५॥
सत लक्षण दोहु विषै चित लक्षण दोहू मांहि।
ज्ञान कला दोहु विषै या मैं संशय नाहि ॥१६॥
जाके जन्म न मरण है ताहि अमंगल होय।
गाले अघटाले तिसैं मंगल कहिये सोय ॥१७॥
सो मंगल सत रूप है स्याद्वाद करि सिद्ध।
निज घटही में सिद्ध है निजमें कथंचित असिद्ध ॥१८॥
तातैं जिनकूं सिद्ध भई तिनकूं है परणाम।
यह सम्यक व्यवहार है मंगलिकाको नाम ॥१९॥
तुम प्रसिद्ध अकलंक प्रभु मैं प्रसिद्ध कलंक।
मोमें तोमें भेद है इतना कर्म कलंक ॥२०॥

अथ रुचि प्रतिज्ञा दोहा।

नमूं महा सर्वज्ञकूं, जाके वचन अमन्द।
कहूं जैन महिमा प्रगट, तजूं मत पाखंड ॥२१॥

अथ पाखंड मत स्थापन आमान्य दोहा।

मिथ्यातीकी टेक है, प्रतिमा पूजो नाहि।
सो असिद्ध है सर्वथा, स्याद्वाद पर मांहि ॥२२॥

अथ जिन मतोक्त तदाकार प्रतिमा पूजन स्थापन

सामान्य दोहा ।

कथंचित कथंचित् पूज्य है, कथंचित कथंचित् नाहिं ।
अकथ मौनका थान है, मौन सर्वथा नाहिं ॥२३॥

मौन किए मारग लुपे, धर्म अभाव दिखाय ।
या तें निर्णय कीजिये, ज्यों भ्रम तिमिर नशाय ॥२४॥

इतिश्री अथ पाखण्ड मतस्य बिस्तार व्याख्यान माहात्म्य मत मिश्रित अनेकान्त मतोंके साथ प्रतिमा खण्डनके खण्डन निमित्तवादका मण्डन प्रगट । अथ छन्द लिखते जिसके सब बाल गोपाल समझ सकें गजल ढंगका प्रश्न कविताका छल मतार्योंकी पक्षातमें ।

करना न करना कार्य आर्यकूं निर्णय करना वाजिब है ।
प्रतिमा पूजन छलमती कहु छिपे बिचनाशा जिस है ॥१॥ टेक ।

बाद हुई क्या तुमने मूरति जकन तजी छल वाजिब है
निर्णय करना हमें अब इसका जरूरी वाजिब है ॥२॥

हो गया साबित हमकूं अगर तुमें तजि दई तो वाजिब है ।
हम भी तजेंगे पतीको हमको यही अब वाजिब है ॥३॥

अगार औन हो तुमने मगर हम हीपे तजना वाजिब है ।
तो आर्योंका नाक कहु किसको कटना वाजिब है ॥४॥
काला मुख कहु किसकी कर गधेपे चढ़ाना वाजिब है ।
आर्या मण्डल देशसे किसकूं कटाना वाजिब है ॥५॥

गजल—अर्थात् गीता छन्द है परन्तु गजलकी चालमें पढ़नेका यहां मौका है, गजल सन्मतार्योंकी प्रतिज्ञा अरु छल मतार्योंसे प्रतिमा त्यागमें ॥५॥ प्रश्न—

सत्यके साथी हैं सब हम सन्मतारज निष्कपट ।
छल मतीको कहते हैं हम धूर्त अरु मूरख कपट ॥

ख्याल—प्रश्न हमारा ये या मूरखको नमाते त्यागी है।
भली बुरीका भेदकरि किसका तू अनुरागी है ॥१॥
सबको नमस्कार मत ना समझे कुमति तुझे क्यों लागी है।
जाति विवेकी भया क्यों नाहक तुझे कहां लागी है ॥२॥
जिसके नहीं विवेक अनारज सो नर बड़ा अभागी है।
इसीसे तुझको पूछता हूं तैने कौनसी त्यागी है ॥३॥
सोचि समझि करि दोनों प्रकार सो तू परम विरागी है।
मूर्तिका त्यागी निराकारहीका सो तू अनुरागी है ॥४॥

गजल—कह दिया हरबार तुझसे मूर्ति क्यों न माने हम।
कौनसीकूं त्यागी थे अब कौनसीकूं माने हम ॥
कौनसी त्यागी है तें बतला दे हमसे मतलबको।
झट बताऊं उठाके सूरत मूरति सूरत सबको ॥५॥
सूरत मूरति सब है एक खास बदीका सब नाया जिय है।
प्रतिमा पूजन अहमती कहु किस विधना वाजिब है ॥
करना न करना जायं आपको निर्णय करना।
प्रतिमा पूजन अहमती कहु किस विधना वाजिब है ॥६॥

आगे अन्यमतार्थ ऐसा कहे हैं कि जो इन्द्रिय ग्राह्य पदार्थ हैं। ते सब मूरतिमान हैं। सो नाना प्रकार अपने अपने स्वभाव धरिये हैं।

जैसा जिसका आकारवाली मूर्तिमें भलाबुरा करनेकी शक्ति है तैसा सबमें पाईये है। अब तू यों यह कह चूक्या कि भावैं किसी रंगकी हो। भावैं किसी ढंगकी हो आकारवाली मूर्तिको हम अपना उपगार करनेवाली नहीं समझते वे तो अचेतन्य हैं। भलाबुरा फल देनेकूं समर्थ नहीं तो अब हम तुझे आकारवाली मूर्तिमें भलाबुरा करनेकी सामर्थ्य दिखावे हैं।

कहो इनमेंसे चेतन्य कौनसी है। अरु तुमारे इनका त्याग केसे हुवा इसका सबूत तुमकूं देना होगा।

ख्याल वचन छलमतावोंका।

सुनों छलमतो पांचों इन्द्री मूर्ति हैं कि नहीं बतला।
इनसे तू अपना कार्य कुछ लेकिन ही तू देखतला ॥
त्वकुइन्द्री अर्थात स्पर्शइन्द्री प्रति तर्क।

पांचोंमें है त्वचास्पर्शन मूर्ति है कि नहीं बतला जिसकूं स्पर्शे वस्तु वे मूरति हैं कि नहीं बतला ॥२॥

धूप लगे दुख व्यापे तुझको मूरति है कि नहीं बतला। सुख दे छायी छांह वो मूरति है के न हो बता ॥३॥ गुने पुरेकी खाट कहो वो मूरति है कि नहीं बतला। नरम बिछौना करे उपगार कि नहि तू दे बतला ॥४॥

गजल—काम जब तुमकूं सतावे तरुणा होले कामनी।
मूर्ति धारे ध्यान नाहि अमूर्ति है वो मानिनी ॥
मूर्ति मूरति एकही फरमा रहे तो जाप ही।
तो कहूंगा साफ मैं गुस्ताखियां सब माफ हो ॥५॥
कहो तिरियाकूं तजिके मुहामें जाकंभे बनाता लिंग है।
प्रतिमा पूजना छलमतोंक करना न करना ॥६॥

प्रतिमा-रसना इन्द्रीके भोगनमें ॥

दूजी इन्द्री रसना है तेरे मूरति है कि नहीं बतला।
चखते होखट रस मूर्तिसें मूर्ति कि नहीं बतला ॥७॥
दूध दही घृत तेल नमक अरु सोंग है मूरतिक नहि बतला।
नाना व्यंजन सुरके मूर्ति हैं कि नहीं बतला ॥८॥
अन्न अरु जल मांस मद औषधि मूर्ति हैं कि नहीं बतला।
विष अरु अमृत प्राण पाले हरे कि नहीं बतला ॥९॥

इत्यादिक सपराची पदार्थ मूर्ति है कि नहीं बतला।
भूख वेदना हरणको ए मूर्ति हैं कि नहीं बतला।४॥
मूर्तिसे मूर्तिक बोले वाणी मूर्ति है कि नहीं बतला।
शब्द मूर्तिसे अर्थ कुछ सिद्ध करें कि नहीं बतला।
प्यास लगे जब पानि मांगे मूर्ति है कि नहीं बतला।
औ कुछ मांगे पदारथ मूर्ति हैं कि नहीं बतला ॥५॥

जिस पोथीमें पढ़ें पढ़ावें मूर्ति हैं कि नहीं बतला।
अक्षर मूर्तिसे करे पुराणी सो चिट कि नहीं बतला ॥६॥

पीटे तुझको जो कोई कोड़े मूर्ति है कि नहीं बतला।
छातीसे तुझको लगावे मा मूर्ति है कि नहीं बतला ॥७॥
करे नौकरी जो पैसेको मूर्ति है कि नहीं बतला।
हुकमकी टोपी धरे तू सिर्पै नहीं कि ए दे बतला ॥८॥

मूर्तिके कारण सिरकूं झुकावे रणमें तू कि नहीं बतला।
तोड़े जु तेरा शीस सो मूर्ति है कि नहीं बतला ॥९॥

कहे तू जिसको ए बाप मेरा मूर्ति है कि नहीं बतला।
जिसके बीजसे भए तुम मूर्ति थी कि नहीं बतला ॥१०॥

जिसके गरभसे बसे जानकर मूर्ति थी कि नहीं बतला।
जिस रजसे तुम भए सो मूर्ति थी कि नहीं बतला ॥११॥
जिसको कहे तू बहन भानजी मूर्ति हैं कि नहीं बतला।
जिसको कहे सुत मित्र वे मूरत हैं कि नहीं बतला ॥१२॥

बिन मूर्ति किस भांति पिछाने अपने बिगानेको बतला।
तेरे मता में कहो व्यवहार है उसका क्या बतला ॥१३॥
किसीसे मांगे नूण ते वे मूर्ति हैं कि नहीं बतला।
किसीसे मांगे फूल फल मूरत हैं कि नहीं बतला ॥१४॥
किसीसे मांगे पूरी कचौरी मूर्ति हैं कि नहीं बतला।
किसीसे मांगे गिलोरी मूर्ति है कि नहीं बतला ॥१५॥

इत्यादिक उपगारी पदारथ मूर्ति हैं कि नहीं कहता।
अरे कृतघ्नी मूर्ति उपगार तज्या क्यों ए कहता ॥१६॥

गजल—कौनसी मूर्ति तजी तैं मूर्ख दे बतला मुजे।
देखता हूँ मूर्तिको मांगता हर दम तुजे।
पेटेका कुत्ता गढ़ेको ढांढता घर घर फिरे।
दीजियो दो रोटियां पेटमें तू गिर गिर पड़े।
क्यों तेरे मत में गुरुकी मूर्तिके जूतियां मारनो वाजिब है।
प्रतिमाके पूजन छलमती कहु किस विसनावा जिव है ॥१५॥
करना न करना कार्य आर्यकूं निर्णय प्रतिमाका।

नासिका इन्द्री दोसरी प्रतितर्क ॥

दोजी इन्द्री है तेरे नासिका मूर्ति है कि नहीं कहता।
तो कटेंडदे मूर्ति तुजे मारिघरे कि नहीं कहता ॥१॥
जब तेरे सिरमें होय दरद तू सूंघे कुछ कि नहीं कहता।
अत्तरके बदा फूल बाग मूर्ति है कि नहीं कहता ॥२॥
हरे वेदना तुरत तुमारी उपगारी क्यों नहीं कहता।
हरे मूर्छाके तमी मूर्ति है कि नहीं कहता ॥३॥
देखले क्लोरोफारमके गुण दई मूर्छा तुजे कहता।
करदे तुजे बिच तुरत दे पर आतुर मैं दई कहता ॥४॥

गजल—सूंघ ले तू संदिवेका फूल हैप रखा अभी।
देख ले गुण मूर्तिके फिर दीजियो चर्चा अभी॥
भंग गांजा चर्स चंडू सिगरेट हैं दरवमें।
मशहूर हैं ए मूरती कारी धूम ले सब छलकमें॥
धूम पीना जाय, कलकी तरेहा सिर पर है साबा जिस है।
मूरतीका पूजन छलमती कहु ॥५॥

नेत्र इंद्री प्रतितर्क ध्याक।

चौथी इन्द्री नेत्र हैं तेरे मूरति है कि नहीं बतला ।
कालीपीली वस्तुए मूरति हैं कि नहीं बतला ॥१॥
हरित श्वेत आरक्त पदारथ मूरति हैं कि नहीं बतला ।
इनसे तुमारे कार्य कुछ सरते हैं कि नहीं बतला ॥
कागदकी मूरतमें अक्षर हैं निकले कि नहीं बतला ।
होकर कांटाकू परवस्तुसें बचे कि नहीं बतला ॥३॥
रसुमित्रकुं इनके बिना तू कैसे पिछाने वे बतला ।
त्रिपदकुं पिछाने मूरति बिन कैसे पिछाने दे बतला ॥४॥
मूरति मूरति एक बतावे तो मैं पूछुं दे बतला ।
मनुष पत्थरों भेद कुछ है कि नहीं तू दे बतला ॥५॥
अगर कहे तू सबमें चेतना है इकसायों दई बतला ।
माना हमने आकार हैं मूरति एक किस विध बतला ॥६॥

प्रश्न-गजल ।

है निराकृत सबमें यकसाइसे तू कहता है एक ।
नाकिगकसां मूरति कहनेमें है कुछ दूजा विवेक ॥
मूरति सब यकसां हैं कैसे यह हमें बतला दे तू ।
वरने अब कर देंगे सन्मत मिलके तेरी स्याहरू ॥
अगर बिना परयाय बकोगे तो ये अति नापा जिव है ।
प्रतिमा पूजन छलमती कहु किम ॥

करना न करना कार्य आर्यको निर्णय प्रतिमाका पूजन ।
हैं अभेद तो कहो बहनकुं त्रिया कहे कि नहीं बतला ।
सु ताकूं माता कहोगे अब न कहोगे दो बतला ॥१॥
गुरुको चेला कहोगे अकनहिं दो सच्चो सच्चो बतला ।
बापकुं बेटा कहोगे अब तक होंगे दो बतला ॥२॥
अगर धूर्त कोई कहे यों आकर मैं तेरा बाबा हूँ दो बतला ।
या तुमहु क्रिया देखकर भेद करोगे दो बतला ॥३॥

गफलतीमें कह गए गफलतां सबको इसको भी गफलती जाने है।
उपकारी अरु प्रावहारी भी इन्हींमें माने हैं॥३॥

अगर न छूवें किसी वस्तुको तो यह दिल नहीं माने है।
आंख नहीं तो पेट सब भरमको छाने है॥४॥

गजल—नाकमें ढट्टे कहो हम किस तरहसे ठोक लें।
आंखसे देखे न तो क्या धूल इनमें झोंक लें॥
कानसे सुनते हैं बेशक बन्द करलें किस तरह।
सृष्टिमें रहकर बिना मूरति रहें हम किस तरह॥
बोलो आरज सुनो अनारज सुख न दिखाना था त्रिव है॥मू०

आर्य वचन।

अरे अनारज विषयालम्पट मूर्ति बिना नहि सरता है।
तो भोगूंकी मूर्तिकी इच्छा तू क्यों करता है॥१॥
इक उपगारी इक दुखकारी जैसे इनमें सुमरता है।
परमार्थमें मूर्तिका निर्णय क्यों नहि करता है॥२॥
मूरति मूरति एक बनाके सेवको त्याज्य उचरता है।
असतकूं सेवे सत्यका खण्डन तू क्यों करता है॥३॥
आपत जैन हि आयत भी हमसे सतको लजाके अकडता है।
पुन्य पन्थकूं त्यागि क्यूं पाप पन्थमें पडता है॥४॥
कौनसे परमानसे मूरतो तैं खण्डन किया।
कौनसे पर्वा न सेवे मूर्तिका मण्डन किया॥
बक उठायों छलमतीमें बदसे कहलाऊं यों।
मूर्ति है साकार कृत्रिम अरु चेतन पूजे क्यों॥
स्वारथकी साधक अनबाधक अनबाधक पूजनयोंना
बाजिब है। मूर्तिमान०॥५॥

बोले छठ मत कामी पुरुष अरु दूजा पुरुष मांसाहारी।
ए वो दोनूं जायेंगे दुर्गतिमें पापाचारी ॥१॥

सन्त पुरुषकूं शुभ गति होगी स्वर्ग मोक्षके है अधिकारी।
बोले सन्मत बात इक और भी अब सुनल्यो म्हारी ॥२॥

प्रतिमाका भी झगड़ा मिटा यो किस औगुणसे तुम हारो।
बोले अचेतन मूर्ति नहीं परमार्थमें सुखकारी ॥३॥

सुख दुखदायक हैं इस भवमें यह तो हम मानेंगे सारी।
परमारथमें कदाचित मूर्ति न मानेंगे धारी ॥४॥

गजल—हट पकड़ बैठे हठी ले गौर कुछ करते नहीं।
धरमकी चर्चा करें अरु पापसे डरते नहीं॥

कहो मूरख वे सब बाकी मूर्ति थी चेतनकी ठह।
होता दुर्गतिमें क्यों जग सन्तगण क्यों भवसे तीर॥
कर लयो अपने वचनकूं सुमरन तुमने ही दई है व्यवस्था है।
पुण्य पापके कार्य कारणकी कौन व्यवस्था है॥
सुनो छलमती जिस प्रमाणसे तुमनें करी मूर्ति खण्डन।
वह प्रमाण तो मूर्ति है मूर्तिका तुम कर रहे खण्डन ॥६॥
जब प्रमाणका कर दिया खण्डन तब प्रमेय हो गया खण्डन।
कहो फेर तुम करोगे ईश्वरका कैसे मण्डन ॥७॥
कैसा है मत तुमरा अनारज जिससे पड़ा मूर्ति खण्डन।
किस धूरतनें सिखा दिया तुमको जिनमूरति निंदन॥
आओ पढ़ो जैन दलसें गुरु जिससे हो दुर्मत खण्डन।
अबत मूर्तिका होय खण्डन उसका होवे मण्डन ॥८॥

गजल—हो गए लाचार हठमति गालियां देकर गए।
छुप गए सब दाव हारकर वायन बन्द रखि गए॥

लोकके अभिमान बोले मूर्ति मण्डन हो गई।
परमार्थमें भी शुभ अशुभ बन्धनका कारण हो गई ॥
नाक रही अनसाव्य मई यह सास्त्र ये आर्य व्यवस्था है।
पुण्य पापके कार्य कारणकी कौन व्यवस्था वहै ॥
कहो झकायतो तुमरे मतमें बन्धकी कौन व्यवस्था है ॥१॥
इति मनुष्य आकारवान मूर्ति मण्डनम्।
अथाग्रे सन्मतार्योंका विज्ञापन ॥

अहो देखो ये लोग दाढ रोटी लूण तेल पान गिलोरी मठाई मिठाई वस्त्र वगेरे अरु मद्य मांस वेश्यामरी हुईकी मूर्तिकूं तो स्वार्थ परमार्थकी साधक बाधक मानि गए सो तो प्रत्यक्ष परमारथ बिगाडनेवाली है। सो हम सन्मतार्योंके ए सब मूरति जिनका अब तक मण्डन किया है, सो अतदाकार है। इस वास्ते अपूज्य है, और पूजने योग्य मूरति है तो तदाकार ही है। यहां तदाकारका प्रयोजन यह है कि ईश्वर सबका परम गुरु है और ऐसे गुरु हीका उपदेश मान्य है।

अरु उपदेश मूर्तिके होता नहीं यह नेम है। तो साबित हुवा कि गुरु ईश्वरको भी कोई मूर्तिका भेष चिह्न या लिंग कैसा है, उसके भेषकी यादगारी अरु उसका आदर करना, उसकी नकलके संकेतसे असल ईश्वरके ध्यानमें लीन होना।

इस वास्ते तदाकार मूर्तिकी पूजन करना है सो ईश्वर-हीका पूजन है। यद्यपि ईश्वर परोक्ष है तथापि वह प्रमेय है तिसके वास्ते तद्रुप मूर्ति है, सो प्रत्यक्ष प्रमाण है तिस प्रमाण करि तदाकार मूरतिका पूजन करना है सो सन्मतार्यका धर्म है, सो अब सब समाधानके वास्ते उसकी मूर्तिका प्रतिमाका वर्णन करिये हैं।

और प्रतिमा नाम प्रति छायाका है सो प्रमाण है, तिस

अवश्य पूर्व संचित कर्म क्षय होवे और आत्मा स्वभावकूं पाय परमात्मा होगा।

अन्यथा कदापि किसी कालमें ईश्वरकी प्राप्ति नहीं होगी, अनेक फिर मारि मारि मरि गए और मर जांयगे। तस्मात् सकल आर्यजन भ्रातृगणकूं मतानुसार विज्ञापन किया गया कि यह मनुष्य जन्म पायके विवेकके हैं। इसकूं मत पक्ष या मतलबी पक्ष न लावे निरपेक्ष होकर विचार करें। हमारा तुम्हारा कर्म न्यारा न्यारा नहीं है। मतलबी पक्ष बहुत कालकी, आज तक संसार ही सेवके आये। अब वीतराग भाव होकर अपने कल्याणमें प्रवृत्ति करनेका अवसर है। फिर यह मौका मिलना अति दुर्लभ होगा।

दूसरा प्रकार पूज्य प्रतिमाके मण्डनमें।

अतदाकार मूर्तिका पूजन दोनूं भव दुखदाई है।
तदाकारका, पूजना भवभवमें सुखदाई है ॥टेक॥
चवेन्द्रो जिनवरकी मूर्ति सो इन्द्रके मन भाई है।
जिसको अनाराग कहैं मुक्तदायक सो सुखदाई है ॥१॥
करदेगो अब प्रतिमाका निर्णय पूज्य कौनसी गाई है।
संसारी सब, सांगसे जिसकी जुदा छवि छाई है ॥२॥
सत स्वरूप सतगुरुके भेषकी प्रतिमा पूज्य बताई है।
असलकी सदृश, उसीको पूजे सो आर्या भाई है ॥३॥
गुरु सत गुरु कहते हैं उसीको जिनवरसे उपजाई है।
उसीके मारग चले अरु हमकूं विधि बतलाई है ॥४॥
आप तिरे औरनकूं तारे भवदधि पतत सहाई है।
शिवमग नेता हमारा वही सारथ वाही है ॥५॥
जैनेश्वर गुरु कहते हैं उनको जिन जिन संज्ञा पाई है।
तदाकारका पूजना दोनूं भव सुखदाई है ॥६॥

परम गुरु है आप्त स्वरूप है। तथा प्रमेय स्वरूप है और प्रतिमा प्रमाण स्वरूप है प्रमाण न होय तो प्रमेयका ज्ञान न होय यह तात्पर्य है। सवैया—

आतम शुद्ध भेद न कर्यो दर भावीं ज्ञायो भेया है।
भ्रम अनातम तृणामई ताके द्रुम पद थैया है ॥१॥
ऐसा भारतमें भए जिनचन्द्र जिनकूं उपदेश करता हूं।
हित मित कोमल शब्द वचनोंमें सुपात्र तंगार है ॥२॥
ऐसे जिन मतमें गुरु बहुत ताके हम अर्थ लगा है।
तुहूं धरम पन पन्थ ऐसे तो हम गावेंगा है ॥३॥
कौन भेष करि तजे तदाकृत अतदाकृतमें हटया है।
पूजें विष गुन बिना गुन नाहि फल ह्वैगा है ॥४॥
पद्धड़ी—ईश्वर त्यों प्रगट है व्यवहार स्वरूपों वरननमें।
राजा प्रजा पड़ते हैं सब त्यागी मुनिनके चरननमें ॥
परमेश्वरताये मुनीन्द्र नागा भी न जिनके पास है।
वे दुनियाकूं भोग दिन मैं कहूं दासका पद दास है ॥१॥
जिसमें नहीं जिन लिंग सो प्रतिमा अतदाकार बताई है।
तदाकारका पूजना भव भवमें सुखदाई है,
अतदाकार मूर्तिका ॥२॥

पुनः पूर्वोक्त ईश्वर परम गुरु जिन मार्ग उपाय तब हा मार्ग चलें वा अन्य पुरुष ते बहिरात्म दशासे अन्तरात्मा होय आत्मध्यानमें लागा वा परमात्मामें लवलीन होय ताकी भावना मात्रतुल्य।

परमात्मा हो गए जिनका तदाकार शांत दशाका सूचक जो जिन प्रतिमा हैं वा ईश्वर होको शांत चेष्टाका कुदरती भेष है। ताहीकी पूजाका उपदेश करे हैं जो दिगम्बर रूप है, सालंकारका नहीं वे तो अपूज्य हैं अर्थात् ईश्वर अरु ईश्वरकूं प्राप्त होनेके मार्गका वक्ता जो दिगम्बर रूप असंग अरु

अविप्त गुरु हैं। ताके स्वरूपमें चेष्टा वा लिंगका भेद नहीं है ताहीका पूजन योग्य है सो ईश्वर लिंगका आदर ही सम्यक्तावोंका मुख्य धरम है। ख्याल—

ईश्वर परम गुरु अरु गुरुजन जग अति उदित छवि छाई है।
सन्त जनोंका भेष है यही उसीने बताई है॥ १॥
उसीने सब पहिरास्या उनकूं प्रथम हि यह दरसाई है।
जिन मुद्रांकित मूर्तिकी पूजा तुमें सुखदाई है॥२॥
सुनि उसका उपदेश चले उस मार्ग सु पुण्य कमाई है।
इन्द्रादिक पद पाय फिर चक्रवर्ति रिद्धि पाई है॥३॥
धर्म प्रभाव प्रगट जब देख्या तब ये भावना भाई है।
आतम रूपसे मगन हो आत्मा हीकूं ध्याई है॥४॥
गजल—आत्मामें लीन हो परमात्माकी मूर्तिमें।

पड़ताल करिके आतम गुण परभाव तजि सब मूर्तिमें॥

करि बन्धका विध्वंस आत्मैश्वर्य ताकूं प्राप्त हो।
पाके चतुष्टय लब्धि सब वक्ता भए वे आप्त हो॥

आप्त प्रमेय प्रमाण है प्रतिमा जावोंको दरसाई है।
तदाकारका पूजना दोनूं भव सुखदाई है॥
अतदाकार मूर्तिका पूजन दोनूं भव दुखदाई है।
तदाकारका पूजना दोनूं भव सुखदाई है।५॥

पुनः पूर्वोक्त अरहन्त जिनेश्वर परम गुरुमें अनन्त चतुष्टय लब्धि रूप निज गुणका ऐश्वर्य है अर्थात अनन्त ज्ञानसैं तो भगवान है, अनन्त दर्शी होने तैं घटदर्शनमें आप दर्शन है। अष्टादश दोष रहित होनेसे अनन्त सुखका आगार है। अनादि कर्म बन्धकूं तप बल करि विध्वंस किया अताव—

और इन्द्र धरणेन्द्र चक्रवर्ति नारायण प्रतिनारायण बलिभद्र नारद विद्यादि क्रूर पशु चरणोंमें आन पड़े। गणधरोंमें मुनीन्द्र जिनके भक्त हो गए। तातैं अरहंत होनेसे जिन

भया कृतकृत्य कृतार्थ परम गुणकादि कर्म शिर पाई है।
अजर अमर हो जोतिमें जोतिसो जाय समाई है ॥४॥

गजल—एक है वो अनेक है तन एक है न अनेक है।
घट घटमें एक स्वरूप है मन एक है न अनेक है॥
सांवरियें बहु भेष है तहां पूज्य मूरति एक है।
निर्वाण भया जिस भेषसे वही पूज्य है न अनेक है॥

असल चेतनाकी छबि प्रतिमा अचेतनमें दरसाई है।
तदाकारका पूजना दोनूं भव सुखदाई है॥
अतदाकार मूर्तिका पूजना दोनूं भव दुखदाई है।
तदाकारका पूजना दोनूं भव सुखदाई है॥

आगे कहे हैं अहो आर्यजन जो अनार्य पुरुष ऐसी कुबधी किया करे हैं कि असल परमेश्वरकी नकल उतारकर पूजना है है सो नकालोंकी तरह ईश्वरकी हंसी करना है अस्मात नकलका पूजना योग्य नहीं ताका उत्तर यह कि जो कोई वेदादि पुस्तकोंका प्रमाण इसमें देते हैं तो कोई अनादी एक ही पुस्तक भी वेदकी किसीके खानदानमें नहीं पाई जाती है। नई नई तरियोंकी नई नई श्लोक नकल हो हो करके रहती है। वे भी अप्रमाण है। प्रतिमा दिगम्बर तप भी उनमें आदा प्रमाणीक कहे किंतु उसमें कोई नवीन बनाकर नहीं बनाई न गई है।

अहो आर्यजन एक अनादिसे यों शंका उपजाई है।
बिन ईश्वरकी कृत्रिम प्रतिमामें हंसी कराई है ॥१॥
जैसे कारिके नकल उसकदी भांडकी रासी बनाई है।
तैसे कहते मूर्तिकी पुतली बनायके नचाई है ॥२॥
तुम पूछत बतलाते है कोई विरुद्ध लिखा गई है।
यह प्रमाण तो तुम्हारे हमने बहुत दुखदाई है ॥३॥

किंतु वेद पुरान बाइबिल किसपै नहीं बनी भाई है।
जिसमें बनाई जिसी हुई उसकी जिसीपै बन पाई है ॥४॥

नई नई भांति नकल हो नितप्रति नई नई करें चतुराई हैं।
कोई कुछ कोई कुछ लिखै अरु नई नई करें छपाई है ॥५॥

नकल पुस्त नहीं है सो सही है हमने नई न बनाई है।
आप दिगम्बर कुदरती भेषमई ये भाई है ॥६॥

केवल जो ईश्वर है निराला सोपति सन्मुख नाहीं है।
उसकी जाति छवि मूर्तिमें वीतराग हो ध्याई है ॥

गजल—जानते हैं हम अचेतन चीज आप न कीजिये।
ये तो मोटी बात है कुछ दृष्टि सूक्ष्म कीजिये ॥
अविचारसें न विचार हो अनभार ही बढ़ि जाय है।
इससे नरको अवलम्बन है उपगारी फरमाई है ॥

तदाकारका पूजना भवभवमें सुखदाई है।
अतदाकार मूर्तिका पूजना भवभवमें दुखदाई है ॥
तदाकारका पूजना भवभवमें सुखदाई है ॥१॥

जो हो वस्तु परोक्ष उसे प्रत्यक्ष प्रमाणसें ध्याते हैं।
सुरेश्वरकूं केवल जीवन मुक्तसे पाते हैं ॥१॥
जीवन मुक्त परोक्षकी प्रतिमामें जब चित लगाते हैं।
नाम स्थापना द्रव्य अरु भावसें ज्ञानमें लाते हैं ॥२॥

नय प्रमाणसें करते हैं सिद्धी नय सप्तांग कहाते हैं।
दो प्रमाण हैं दोय प्रत्यक्ष परोक्ष बताते हैं ॥३॥

यहां प्रत्यक्षमें लीज्यो तदाकृत प्रतिमा गुरु समझाते हैं।
जिससें वो ईश्वर अलग सब स्वांगसें दृष्टिमें आते हैं ॥४॥

सतचित् थिर निर्लेप निराकुल शांत सुभाव समाते हैं।
अजर अमर अरु अभै आनन्द अखेप दिखाते हैं ॥

गजल—अहो सन्त पढो कानून ब्रह्मज्ञान विद्याका।
करो तरमी समत उसको ये है झगड़ा अविद्याका ॥५॥
जिन्होंने उसकी प्रतिमाके लगाडी बीस रगडा है।
उसीको वह मिला है इसमें रगडा है न झगडा है ॥६॥

फिर गया जो प्रतिमासे वो आर्यो अपनार्योंहीका भाई है।
तदाकारका पूजना भवभवमें सुखदाई अतदाकार ॥
द्रव्य दोय अरु एक एकके नाम अनन्ते पाते हैं।
एक जीव है दूसरा द्रव्य अजीव कहाते हैं ॥१॥
तीजा द्रव्य जुदो तौ कहो कोई जीवकूं अब समझाते हैं।
जो कोई तिर गए भए वे मुक्त यहां फिर आते हैं ॥२॥

भटक रहे संसारमें जो कोई चहुंगतिमें भरमाते हैं।
देव मनुप अरु नरक पशुगतिमें पड़े दुख बहु पाते हैं ॥३॥
कारण कौन भ्रमें हैं क्यों वे क्यों नहि वे तिर जाते हैं।
जो कोई पूछे आप्त गुरु उनको यों समझाते हैं ॥४॥

गजल—प्रथम तो हैं अविद्यामें अनादी लिप्त वे चेतन हैं।
मोही मोह कर मूर्छित न जड हैं वे न हैं चेतन ॥
वे सन्दक दोपके रोगी न जीते हैं।
परस्पर वैरभावोंसे स्वपरकी हिंसा करते हैं ॥५॥
जन्म जन्ममें कर्मास्रव व कर्मबन्धमें टांग फंसाई है।
तदाकारका पूजना भव भव ॥
पुन्यास्रव पाआव पापास्रव दोनूं बन्ध महादुखदाई हैं।
जिसके है बन्धन वही है जीव अबध जिन पाई है ॥१॥
तद बिमोहवश शुभ दशा है चेते नहि अन्धाई है।
बिन संवर अरु निर्जरा होती नहीं रिहाई है ॥२॥

इत्यादिक अति सत्य कहानी कहि कहि प्रजा मकाई है ।
कहाँ कहां तक कहैं सब कथा की होय लहाई है ॥
ये है धरमकी चर्चा मरनकी बात न इसमें बनाई है ।
साधुजनोंके सामने सुनिकर जान सुनाई है ॥

गजल—मुनि जिनोंके वास्ते विद्यानकी है आरसी ।
प्रतिमा तदाकृत है इसी ज्यों देखलोना आरसी ॥
जिस भावसे देखोगे दिखलायेगा वैसी ही आरसी ।
पूजकको है फल पूजकी निंदकको है वह आरसी ॥
नैनानन्द जिनेन्द्रचन्द्रकी कथा इसमें दरसाई है ।
तदाकारका पूजना भव भवमें सुखदाई है ॥

इतिश्री नयनानन्द विलास संग्रहे अन्यमतार्थ मतखण्डन हो तो:
प्रतिमा मण्डन समाप्त अध्याय ३२ वां संपूर्णम् ॥